॥ श्रीः ॥

फलों की खेती और व्यवसाय

लेखक—

नारायण दुलीचन्द व्यास, एल० एजी०,

इम्पीरियल एग्रीकलचरल रिसर्च

इन्स्टीट्यूट,

नयी दिल्ली

प्रकाशक—

मैनेजर,

लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

द्वितीय बार १०००

१९३८

मूल्य १॥=)

मुद्रक

कृष्णा राम मेहता

लीडर प्रेस,

प्रयाग।

॥ श्री ॥

प्रस्तावना

यह देखते हुए कि भारतवर्ष शाकाहारियों का देश है और जहाँ पर प्रकृति की कृपा से सब प्रकार के फलों की खेती के योग्य भूमि और जलवायु विद्यमान हैं—समस्त संसार मे आज उच्च कोटि का फल व्यवसायी हमारे देश को ही होना चाहिए परन्तु खेद है कि अन्य विषयो की भांति इस कला में भी यह बहुत पिछड़ा हुआ है। हमारे यहाँ से फलों का बाहर जाना तो अलग रहा उलटा प्रति वर्ष डेढ़ दो करोड़ रुपये का माल विदेश से ही मँगवाया जाता है।

इस स्थिति पर यदि ध्यान पूर्वक विचार किया जाय तो फलों की खेती और उनके व्यवसाय का प्रचार करने की कितनी आवश्यकता है, पाठक स्वयम् अनुमान कर सकते हैं।

अन्य देशों ने फलो की खेती की कला में बहुत उन्नति की है। वनस्पति-शास्त्रज्ञ अपने प्रयोगों से उत्तमोत्तम फल देने वाले वृक्ष तैयार कर चुके तथा कर रहे हैं। उनके परिश्रम से लाभ उठाने के लिए कृषक और फल व्यवसायी भी बहुत अग्रसर हो रहे हैं परन्तु हमारे यहाँ इन तीनों में से किसी भी वर्ग का प्रयत्न उल्लेखनीय नही। हाल में जब बेकारी की पुकार से लोग जाग्रित हुए और वर्तमान कृषि-विषय-अनुसंधान-कारिणी महासभा (Imperial council of Agricultural Research) ने आर्थीक सहायता करने का प्रबन्ध हाथ में लिया तो कुछ उन्नति का मार्ग दिखलायी दे रहा है और यदि उपरोक्त सभा की इसी प्रकार कार्य

प्रणाली चलती रही तो बहुत कुछ सुधार की आशा की जा सकती है।

वर्तमान जीवन संग्राम के युग में बहुत से अर्द्ध शिक्षित कृषक तथा शिक्षित युवकों का ध्यान फलों की खेती और व्यवसाय की ओर आकर्षित हुआ तो है परन्तु उन्हें इस कला सम्बन्धी ऐसी सामग्री प्राप्य नहीं कि जिसे लेकर वे कार्य क्षेत्र में उतर पड़ें। इसी प्रश्न को हल करने तथा कुछ मित्रों के आग्रह करने पर मैंने यह पुस्तक लिखी है जिसमें यथा सम्भव फल सम्बन्धी सभी ज्ञातव्य बातें सरल भाषा में लिखने का ध्यान रक्खा गया है ताकि सर्व साधारण लाभ उठा सकें। इस पर भी यदि कहीं कोई कठिनाई जान पड़े तो सूचना देने पर उसकी निवृत्ति की जायगी।

पाठकों से विशेष निवेदन यह है कि जिस प्रकार आपने "सागभाजी की खेती" को अपना कर मेरा उत्साह बढ़ाया है उसी भांति इसे भी अपना कर लाभ उठावें और इसका आद्योपान्त पठन तथा मनन कर जो भी त्रुटियां हों कृपया मुझे सूचित करें ताकि द्वितीय संस्करण में वे दूर की जा सकें।

इसके प्रकाशन की आज्ञा प्रदान के लिए भारत सरकार तथा कृषि-अन्वेषणालय, पूसा के अध्यक्ष (Dr. F. J. F. Shaw, D. Sc., A. R. C. S., F., L. S.) के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

इस पुस्तक की तैयारी—विशेषतः प्रूफ देखने में मुझे अपने परम मित्र रामरूप लाल जी से बहुत सहायता मिली है अतएव मैं उनका आभारी हूँ।

नारायण दुलीचन्द व्यास

द्वितीय संस्करण

"साग भाजी की खेती" की भांति इस "फलों की खेती और व्यवसाय" का दूसरा संस्करण जनता को अर्पण करते हुए मैं उन महानुभावों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने दोनों पुस्तकों को अपनाया और इनका प्रचार कर मेरा उत्साह बढ़ाया।

दिल्ली, संयुक्त प्रांत, मध्य प्रान्त तथा बिहार और उड़िसा के शिक्षा विभागों ने दोनों पुस्तकों को उपयोगी समझ स्कूलों के लिए स्वीकार किया इसके लिये मैं उनका विशेष आभारी हूँ। अनेक कालेज, स्कूल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों ने अपने अपने स्कूलों में इन्हे विशेष रूप से स्थान दिया इसलिए उनके अधिकारियों को धन्यवाद देते हुए मैं आशा करता हूँ कि जहाँ जहाँ अभी तक ऐसी पुस्तकों की पहुँच न हुई है वहाँ होगी ताकि भारत के भावी युवक लाभ उठावें और सानन्द स्वतंत्रता पूर्वक जीविका प्राप्त करने का साधन प्राप्त कर सकें।

जैसा कि होना चाहिए इस द्वितीय संस्करण में पहले संस्करण की सभी त्रुटियाँ दूर करने का पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है फिर भी यदि और कुछ पायी जांय तो पाठकों से निवेदन है कि वे मेरा ध्यान उनकी ओर आकर्षित कर मुझे कृतार्थ करें।

दिल्ली, ज्येष्ठ १५, १९९५
तारीख १२ जून, १९३८.

विनीत
नारायण दुलीचन्द व्यास

श्री

विषय-सूची

प्रकरण	विषय	पृष्ठ

विषय

ताज़े फल— पृष्ठ

/ \ ʻ

॥ श्री ॥

प्रकरण १

फल और स्थान का चुनाव तथा क्षेत्रफल, पूंजी और अन्य आवश्यकताएं

इस विषय के प्रारम्भ मे पाठकों को यह बतला देना अनुचित नहीं होगा कि फलों की खेती की कला इतनी सहल नही है जितनी कि लोग समझते हैं। जिन व्यक्तियो का स्वास्थ्य साधारणतः अच्छा हो, जिनकी प्रबल धारणा इस कार्य को अपनाने की हो, जो सन्तोषी, साहसी और अग्रशोची हों वे ही इसमे हाथ डालें। जो महाशय सिर्फ अपने नौकरो के भरोसे ही पर इस कार्य से लाभ की आशा कर अपना समय आमोद प्रमोद मे विताना चाहे उन्हे चाहिए कि वे अपने विचारो को तत्काल छोड़ दें। सफलता प्राप्त करने की आशा वे ही रक्खें जिनकी भुजाओं मे अपने हाथ से वहुत से काम करने की शक्ति हो, जिन्हे प्रारम्भ में थोड़े लाभ से सन्तोष हो, जो तत्कालीन हानि-लाभ से विचलित न हो जायं और जो भविष्य में इस व्यवसाय की तरक्की का अनुमान कर सकें। तरकारी अथवा अन्न की खेती वाले वहुत जल्दी सन्तोषजनक लाभ प्राप्त कर सकते हैं परन्तु फलो की खेती वालों को जव

तक पेड़ फल देने योग्य नहीं होते उन्हें सन्तोषजनक लाभ नहीं मिल सकता। अनानास, पपीता, केला, अथवा खीरा, खरबूज़ा आदि फलों को छोड़ कर अधिकांश ऐसे हैं जो लगाने के समय से चार पाँच साल में फलना शुरू होकर सात आठ साल की आयु के होने पर अच्छे फल देते हैं, तब ही यथेष्ठ लाभ प्राप्त हो सकता है। कार्य के प्रारम्भ में बहुत परिश्रम करना पड़ता है तब पांच सात साल बाद साधारण परिश्रम से अच्छा लाभ होता रहता है।

फलो की खेती करने वालों को फलों की बिक्री से लाभ उठाने के साथ साथ पौधों की बिक्री भी करनी पड़ती है। इसके लिए पौधे तैयार करने की युक्तियों की पूर्ण जानकारी होनी बहुत ज़रूरी है। अवकाश निकालकर अपने ही हाथ से कलमे तैयार करनी चाहिएँ।

पौधों की बिक्री के सिवाय पहले पाँच-सात साल तक और बाद मे भी थोड़ी बहुत ज़मीन मे जो, पेड़ो के बीच बेकार पड़ी रहती है उसमे कुछ तरकारियाँ उपजाना पड़ती हैं सो तरकारी की खेती का भी उन्हे ज्ञान होना बहुत ही ज़रूरी है।

फलों की खेती वालों को कहाँ किस प्रकार की तरक्की हो रही है इसकी भी खबर रखनी पड़ती है। भविष्य मे फलों की माँग कैसी होगी, कितने नये नये बग़ीचे बनते जा रहे हैं, कौन सी नयी जातियाँ तैयार हो रही है जो बाज़ार को पकड़ने वाली है, इत्यादि विषयों की सूचना रख अपने बग़ीचों मे

समयानुसार उन्हे स्थान देने की ओर ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है।

जिन कृषकों में उपरोक्त गुण हों वे अपने बाहुबल तथा ईश्वर पर भरोसा करके इस पुस्तक का आद्योपान्त मनन कर कार्य्यारम्भ करें।

फलों का चुनाव :— यह ज़मीन, जलवायु, फलो की माँग और उनका मूल्य, स्थानान्तर करने के सुभीते तथा कृषक की योग्यता पर निर्भर है।

ज़मीन और जलवायु जिन फलों को मान्य हो उन्हीं की खेती करना विशेष लाभदायक होता है और उन्हें ही चुनना चाहिए। अमान्य ज़मीन या जलवायु मे या तो पौधे लगेंगे ही नही और यदि लगे तो फलने मे सन्देह और यदि कुछ फले भी तो फलो के आकार और स्वाद में तो अवश्य अन्तर पड़ जायगा। उदाहरण के लिए लीजिये संतरा और सेव। सिलहट या नागपुर के आसपास की भूमि मे उपजने वाले संतरे बड़े मीठे होते है परन्तु जब उन्हे दूसरे स्थानो मे लगाते है तो ये उतने मीठे होते ही नही। इसी भाँति सेव के लिए बहुत ठण्डा वातावरण चाहिए इससे वे पहाड़ पर अच्छे होते है। इन्हे यदि मैदानों मे लगाया जाय तो कभी फलेगे ही नहीं। इसलिए फलो के चुनाव में भूमि और जलवायु का विचार रखना बहुत ज़रूरी है।

इनके सिवाय फलों की माँग और उनसे होने वाली आय

का भी विचार रखना पड़ता है। मान लिया जाय आपके पास ऐसी जमीन है जिसमें कई तरह के फल हो सकते हैं तो ऐसी स्थिति में उन्हीं फलों के वृक्षों को लगाना चाहिए जिनकी माँग ज्यादे हो—जैसे उत्तर बिहार में आम और लीची दोनों हो सकते हैं परन्तु आम की जितनी माँग होती है अथवा उससे जितना लाभ हो सकता है लीची से नही हो सकता, इसलिए लीची की अपेक्षा आम के वृक्ष ही अधिक लगाने चाहिएं। इसी भाँति सेव और नासपाती लीजिए। दोनों पहाड़ो पर अच्छी तरह से पैदा किये जा सकते है परन्तु नासपाती की अपेक्षा सेव की माँग अधिक होती है और उससे द्रव्य भी अधिक प्राप्त होता है इसलिए सेव के वृक्ष ही लगाना उत्तम होगा।

स्थानान्तर करने के सुभीते का भी फलों के चुनाव मे बड़ा महत्व है। आप अच्छे कोमल फल तैयार भी कर सके परन्तु यदि स्थानान्तर करने का सुभीता न हुआ और माल कम खर्च से बाजार तक नही पहुँचा सके तो आपको यथेष्ट लाभ हो नहीं सकता। ऐसे स्थान पर आपको वे ही फल चुनने होंगे जो कुछ कठोर और टिकाऊ हो। उदाहरण के लिए मान लीजिये आपकी जमीन रेलवे स्टेशन या सड़क से बहुत दूर है और आप उस जमीन मे नारियल और केला दोनो ही लगा सकते है। ऐसी स्थिति मे आपके लिए नारियल जैसे कठोर फल का चुनाव ही उत्तम होगा।

फलों के चुनाव में कृषक की योग्यता का भी पूरा असर पड़ता है। बहुत से कृषक ऐसे हैं जिन्हें खास खास फलों की खेती का ज्ञान अच्छा होता है और उन्ही की खेती उन्हें रुचती भी है अथवा उनका स्वास्थ्य ऐसा है कि वे किसी खास मौसम मे होने वाली फसल को भली भाँति देख सकते हैं तो उन्हें उन्ही फलों की खेती करनी चाहिए।

फलों की खेती करने वाले चार प्रकार के मनुष्य पाये जाते हैं। एक वे लक्ष्मीवान है जिनके बगीचो मे सिर्फ निज के उपयोग के लिए फलो के पेड़ लगाये जाते है। वहाँ आय-व्यय का विचार नहीं रहता। वहाँ तो उत्तमोत्तम, सुन्दर, स्वादिष्ट, तथा भाँति भाँति के फल लगाये जाते है। निजी उपयोग से अधिक होने से फलो का मुफ़ वितरण हो जाता है। ऐसे मनुष्य अपने यहाँ पौधों की कलमे भी तैयार नही करते, जहाँ कही कितने ही मूल्य पर मिले वहाँ से पौधे ही मँगवा लेते है।

दूसरे वे साधारण स्थिति के मनुष्य है जो एक नही अनेक धन्धों मे हाथ डाले रहते हैं। वे खेती भी करते है, साग भाजी भी उपजाते है और कुछ ऐसे फलो के वृक्ष भी लगा देते है जिनकी विशेष देख-भाल नहीं करनी पड़ती और निज के उपयोगार्थ फल मिल जाते है। यदि अधिक हुए तो निकटवर्ती बाजार में बेच दिये जाते हैं। ऐसे मनुष्य बीज लगाकर पौधे तैयार कर लेते हैं या निकटवर्ती पौधा-विक्रेता से कुछ पौधे खरीद लेते है।

तीसरी श्रेणी में उनकी गणना है जो इस कला को अपने जीवन निर्वाह के लिए अपनाते हैं और कम से कम व्यय से अच्छे से अच्छे फल उपजाने का प्रयत्न करते रहते हैं। ऐसे मनुष्य कुछ साग-भाजी भी उपजाते हैं और क़लमी पौधे भी तैयार करते हैं।

चौथी श्रेणी में वे गिने जा सकते हैं जो कुछ शिक्षित हैं और फलों की खेती और व्यवसाय दोनों अपने हाथ में रखते है। ऐसे व्यक्तियो को खेती की कला तथा व्यवसाय की रीतियों का पूरा अध्ययन करना पड़ता है। वे अपने बाग़ीचे से ही उपयोगकर्ता के घरों तक फल पहुँचाने का भार अपने ऊपर लेते हैं। ऐसे व्यक्ति साग-भाजी भी उपजाते है और पौधे तैयार कर उनकी भी विक्री करते हैं। यथार्थ में देखा जाय तो चौथी श्रेणी के व्यक्ति ही अपने परिश्रम का पूर्ण लाभ उठाते है।

फलो की खेती मे एक प्रकार के वृक्ष लगाये जायँ या कई तरह के लगाये जायँ यह स्थानीय स्थिति पर निर्भर है। यदि आपकी जमीन ऐसो जगह है जहाँ एक ही फल अच्छी तरह से उपजा सकते हैं जैसा नागपुर के पास संतरा अथवा कुल्लू में सेव, तो आपके लिए एक ही प्रकार के फल की खेती उत्तम होगी। आप अपना सम्पूर्ण ध्यान उसी मे लगाकर अच्छा फायदा उठा सकेंगे। और यदि आपकी जमीन सव तरह के फलों के वृक्ष के योग्य है तो वहाँ चुन करके जो

अधिक उपयोगी हों ऐसे दो चार प्रकार के फलों के वृक्ष ज्यादे लगाकर दूसरे थोड़े लगा देने चाहिए।

भारतवर्ष में एक ही प्रकार के फलों की खेती करने योग्य स्थान बहुत थोड़े हैं। मिश्रित फलों की खेती के योग्य ही स्थान अधिक हैं इसलिए अधिकांश मनुष्यों को मिश्रित फलों की खेती विशेष लाभप्रद होगी। उन्हे उपयोगितानुसार जितने प्रकार के फलो की खेती की देख-भाल वे अच्छी तरह से कर सकें उतने प्रकार के फल लगाने चाहिएँ।

मैदान मे बसने वालो को आम, संतरे, मोसम्बी, अमरूद, शरीफा, लीची, केला, सपाटू, पपीता आदि फल अधिक लगा कर आलूबुखारा, जामुन, खिरनी आदि के फल कम लगाने चाहिएं।

पहाड़ों पर सेब, नासपाती, स्ट्राबेरी, जरदालू, अखरोट आदि लगाना चाहिए।

स्थान का चुनाव:—फलों की बिक्री विशेषतः शहरो में होती है इसलिए जहाँ तक हो शहरो से कुछ ही दूरी पर स्थान चुनना चाहिए। साग-भाजी की खेती के लिए जैसा स्थान शहरों के बहुत निकट होना चाहिए ऐसा स्थान फलो के लिए मिल सके तो अच्छा ही है और नही तो कुछ दूरी पर ही ठीक होता है। फल, साग-भाजी की अपेक्षा अधिक टिकाऊ होते हैं, थोड़ी दूर तक आसानी से भेजे जा सकते हैं। शहरों के निकट जमीन महँगी मिलती है और मजदूरी का दर भी बड़ा

कड़ा होता है इसलिए पाँच सात या आठ दस मील की दूरी पर ही फलों का बगीचा चलाना चाहिए। इतना अवश्य देखना चाहिए कि वह स्थान सड़क के किनारे हो अथवा रेलवे स्टेशन के पास हो ताकि निकटवर्ती शहर में गाड़ियों से और दूर के स्थानों मे रेल से माल आसानी से और जल्दी पहुँचाया जा सके।

स्थान के चुनाव मे यह भी देखना चाहिए कि जहाँ तक हो सके नहर द्वारा सिंचाई का जल प्राप्त हो, नहर के अभाव मे कुओ से कार्य चल सकता है सो ऐसा स्थान चुनना चाहिए जहाँ पानी की सतह बहुत नीची न हो।

क्षेत्रफल :—जो अपने जीवन निर्वाह के लिए इस धन्धे को अपनाना चाहे उन्हें पहले अपनी आवश्यकताओं का अनुमान कर लेना चाहिए कि साधारण रीति से जीवन निर्वाह के लिए उनकी सालाना आमदनी कितनी होनी चाहिए। हजार बारह सौ रुपये की वार्षिक आय के लिए दस एकड़ जमीन काफी होगी जिसमें से आधा एकड़ ज़मीन नर्सरी और मकानात के लिए और उतनी ही सड़को के लिये छोड़ी जा सकती है। शेष ज़मीन में से दो तिहाई अर्थात् छः एकड़ फलों के वृक्षों के लिए और एक तिहाई अर्थात् तीन एकड़ छोटे फल—स्ट्राबेरी, अनानास आदि के लिये अथवा खरबूजा आदि वार्षिक फलो के लिए छोड़नी चाहिए। जब पपीता, केला आदि कम आयु वाले पेड़ो का हेर-फेर करना होता है तो वे इस ज़मीन में लगा दिये जाते है और

उनकी जगह ये चले जाते हैं। आवश्यकता होने से किसी नयी जाति के वृक्ष लगाना हों तो वे भी इस तीन एकड़ में लगाये जा सकते हैं। यहाँ पर यह कह देना अनुचित नहीं होगा कि उपरोक्त हज़ार बारह सौ रुपये का वार्षिक अनुमान कम से कम रक्खा गया है। अन्य प्रकार की खेती में ठीक २ अनुमान किया जाना सम्भव है परन्तु फलों की खेती में जहाँ समय कुसमय के ज़रा से जलवायु के हेरफेर से भारी हानि-लाभ हो सकता है ठीक से अनुमान नही किया जा सकता इसलिए कम से कम अनुमान ऊपर दिया गया है।

पूंजी :—स्थानीय स्थितियों के आधार पर इसका अनुमान किया जा सकता है। ज़मीन की क़ीमत या वार्षिक कर, मज़दूरी का दर और पशु तथा कृषि के औज़ारों का मूल्य पृथक् पृथक् स्थानों पर पृथक् २ होता है इसलिए यहाँ पर अनुमान नही किया जा सकता। पाठक स्वयम् स्थानीय दर के अनुसार गणना कर सकते हैं। यहाँ पर आवश्यकीय मकान, कृषि के औज़ार, पशु, स्थायी मज़दूर तथा अन्य वस्तुओं की सूची ही दी जाती है जिससे गणना आसानी से की जा सकती है।

मकानात :—प्रत्येक फल के बगीचे मे दो मकान अवश्य होना चाहिए। एक मकान ऐसा हो जिसमे दो जोड़ी पशु, उनका दाना और खेती के औज़ार तथा सजीव अथवा निर्जीव खाद रक्खे जा सकें। दूसरा मकान ऐसा होना चाहिए जिसके एक भाग मे चौकीदार या मिस्त्री मय पेकिंग के सामान के रह सके

और दूसरे में फल रक्खे जा सकें या पकाये जा सकें। पहला मिट्टी की दीवाल का खपरे या फूस वाला भी हो सकता है, दूसरा ऊँची कुर्सी वाला कच्चा-पक्का ईंट की दीवाल का बनाया जाय तो ठीक होगा। जहां स्थायी माली और स्थायी मज़दूर निकटवर्ती ग्रामों के रहने वाले न हों वहां उनके रहने के लिए भी कच्चे पक्के मकान बनवाने होगें।

कुआँ :—जहाँ नहर से पानी मिल सके वहाँ पीने के जल के लिए एक साधारण छोटा कुआँ या ट्यूब वेल (Tube well) हो तो काम चल जायगा। नहर के अभाव में एक बड़ा कुआँ बनवाना चाहिए जिससे सिंचाई भी हो सके और पीने का पानी भी मिल सके। दस एकड़ की सिंचाई के लिए ऐसा कुआँ होना चाहिए जिसमें गर्मी के दिनों में दिन भर दो मोट चलते रहने पर भी संध्या तक पानी न टूटे और रात भर में खर्च किया हुआ पानी फिर से आ जाय।

पशु :—जहाँ नहर से सिंचाई हो वहाँ बग़ीचे की जुताई तथा फलों को बाज़ार तक पहुँचाने के लिए एक बैल जोड़ी काफी होगी परन्तु यदि मोट द्वारा कुएँ से पानी उठाना पड़े तो उसके लिए एक बड़ी जोड़ी और अन्य काम के लिए एक हलकी जोड़ी रख लेनी चाहिए।

स्थायी मज़दूर या नौकर :—एक योग्य माली और तीन स्थायी मज़दूरों से दस एकड़ का फलों का बग़ीचा अच्छी तरह से चलाया जा सकता है। छोटे मोटे काम के लिए आव-

श्यकतानुसार अस्थायी मज़दूर रक्खे जा सकते हैं। माली को सब प्रकार की कलमें बाँधने तथा काँट-छाँट का पूरा पूरा ज्ञान होना चाहिए। मधुर भाषण तथा उत्साह बढ़ाकर मज़दूरों से काम लेने की योग्यता भी उसमें होनी चाहिए। मालिक को चाहिए कि वह भी नौकरो का काम स्वयम् देखता रहे और कोई सराहनीय या पुरस्कार योग्य काम पाने पर उन्हे आर्थिक लाभ भी पहुँचाये ताकि उनका उत्साह बहुत बढ़ता रहे।

औज़ार और अन्य वस्तुएं :-

मोट रस्सियाँ सहित (यदि कुएं से पानी उठाना हो)	२
गाड़ी	१
सादे हल	२
बखर (Scraper and clod-crusher combined)	२
हाथ से चलाने वाला हो (Hoe) एक पहिए वाला	१
हाथ गाड़ी (Wheel harrow) ...	१
पम्प (Sprayer)	१
काँटा बड़ा (वजन के लिए)	१
हज़ारे या झाँझ (Wateiing cans) ...	२
काँटे (Forks)	२
सब्बल (Crow-bar)	२
गैती (Pick-axe)	३
कुदाल (Spades)	३
खुर्पी	४

हँसुआ	...	...	२
कुल्हाड़ी (Axe) ..	...	..	१
आरी (Saw) ..	...	...	१
वसूला ...	...	..	१
रुखानी .	..		१
चलनी (मिट्टी, खाद आदि चालने के लिए)		...	१
चाकू (ग्राफ्टिंग या सादा चाकू)...		...	१
(प्रूनिग—मोटे दस्ते और टेढ़ी नोक वाला)			१
(बडिंग—सादा चाकू लेकिन पतले दस्ते वाला)			१
पेड़ छाँटने की कैंची (Tree-pruner)		..	१
छोटी टहनियाँ काटने की कैंची (Secateurs) .			१
जरीब (ज़मीन नापने के लिए) ..		..	१
सीकी (Fruit-picker)	...	...	१

टोकरियाँ और देवदारु के बक्स इत्यादि

उपरोक्त औज़ार जब काम मे लाये जायँ तो उपयोग के पश्चात् उन्हे धो करके रखना चाहिए। नही धोने से उनमे जंग लग जाता है और वे जल्दी विगड़ जाते हैं। ख़ास करके वे औज़ार जिनसे पौधे काटे जायँ, जो मिट्टी खोदने के लिए काम मे लाये जायँ, जिनसे औषधियाँ छिड़की जायँ उन्हे तो अवश्य धोना चाहिए। छुरी, कैंची वग़ैरह को वरसात मे तेल या वेस-लीन लगाकर रखना चाहिए।

प्रकरण २

भूमि और क्षेत्र निर्माण

पौधों की बाढ़ ज़मीन और जलवायु पर अवलम्बित है जिनमे से जलवायु प्रकृति के आधीन है। उसमें विशेष परिवर्तन मनुष्याधीन नही। परन्तु ज़मीन की स्थिति मे बहुत कुछ परिवर्तन किया जा सकता है।

ज़मीन की उपज शक्ति अर्थात् भूमि का उर्वरापन उसकी भौतिक और रासायनिक स्थिति तथा उसमें बसने वाले जीवाणुओ की क्रिया पर निर्भर है। जुताई, सिंचाई तथा खाद से तीनो मे आवश्यकतानुसार कुछ परिवर्तन किया जा सकता है।

भूमि की उपरोक्त तीनो स्थितियों में से साधारण कृषक पहली को कुछ अंश तक जान सकते हैं। दूसरी और तीसरी विशेषज्ञों द्वारा ही जानी जा सकती हैं इसलिए यहाँ पर पहली के विभाग ही बतलाये जाते हैं। ये भाग भूमि में बालू की मात्रा पर निर्भर है।

साधारण कृषक अधिक बालू वाली को बलुआ, कम बालू वाली को मटियार और बीच वाली को दुमट कहते है। कुछ लोग बलुआ और दुमट के बीच वाली को बलुआ-दुमट और दुमट और मटियार के बीच वाली को मटियार-दुमट कहते हैं।

भौतिक विज्ञानवेत्ता बालू की मात्रा की जाँच करके निम्न लिखित पाँच भाग मानते हैं। जिस मिट्टी में बीस सतांश से कम बालू हो उसे मटियार और जिसमें बीस से चालीस सतांश हो उसे मटियार-दुमट कहते हैं। दुमट में यह मात्रा चालीस से साठ सतांश तक होती है और जब साठ से अस्सी तक पहुँच जाती है तो उसे बलुआ-दुमट कहते हैं। बलुआ में बालू का भाग अस्सी सतांश से अधिक ही रहता है।

भूमि का चुनाव—फलों के वृत्त प्रायः सब प्रकार की मिट्टी मे हो जाते हैं परन्तु अधिकांश बलुआ-दुमट और दुमट में अच्छे होते है। मटियार मिट्टी जिसमें बरसाती पानी लगता हो उसमे कुछ फलों के वृक्ष नहीं हो सकते। यदि यह पानी कुछ २ दूरी पर खुली हुई नालियाँ बनाकर निकाल दिया जाय तो भूमि की स्थिति कुछ अंश तक सुधर सकती है। बलुआ ज़मीन मे फलों के वृत्त लगाये जायॅ तो खाद और पानी दोनो ही अधिक देना पड़ता है इसलिए जहाँ तक हो ऐसी जगह चुननी चाहिए जहॉ की मिट्टी दुमट या बलुआ-दुमट हो। ज़मीन चुनते समय उसकी सतह का भी ध्यान रखना चाहिए। जहाँ तक हो समतल या नहीं तो जिसमे एक ओर हलका ढाल हो ऐसी चुननी चाहिए जिसमें पानी आसानी से दिया जा सके।

ज़मीन की तैयारी—ज़मीन के चुनाव के पश्चात् उसमें जितने भी बड़े छोटे बेकार वृत्त हों उनको काटकर उनकी जड़ें उखड़वा देनी चाहिए और फिर बराबर कर खूब अच्छी जुताई

और खाद देने के पश्चात् पौधे लगाये जा सकते हैं। पौधों के लिए गढ़े तैयार करने की रीति आगे बतलायी गयी है। पौधे लगाने के बाद से जब तक बग़ीचा बना रहे तब तक वृत्तों के बीच की भूमि की जुताई आवश्यकता अनुसार करते रहना चाहिए ताकि घास पात जमने न पावे। जहाँ घास पात बढ़ने दिया जाता है वहाँ के पेड़ अच्छे नहीं फलते।

क्षेत्र निर्माण—इस एकड़ ज़मीन को घेरे से घेरने के पश्चात् उसमें जिस ओर आम सड़क हो उस तरफ़ प्रवेश द्वार (फाटक) रखना चाहिए। इस द्वार से लेकर दूसरी ओर तक बग़ीचे के बीचोबीच पन्द्रह फीट चौड़ी सड़क बनवाकर उसके किनारो से चार पाँच फीट की दूरी पर दोनो ओर आड़ू, आलूबुखारा, संतरा आदि कम ऊँचाई वाले पेड़ जिनकी छाया से अथवा जड़ों से पास वाली ज़मीन के पेड़ो को हानि न पहुँचे, लगा देना चाहिए ताकि बग़ीचे की सुन्दरता बढ़ जाय और फल भी प्राप्त हों। प्रवेश-द्वार के पास दोनों ओर पाव पाव एकड़ के करीब दो क्षेत्र बनाने चाहिएं। एक ओर के क्षेत्र मे मकानात और दूसरी ओर नर्सरी बनाना ठीक होगा। नर्सरी में बीजू पौधे तैयार किये जा सकते हैं और बिक्री के क़लमी पौधे रक्खे जा सकते है ताकि ग्राहको को आसानी से दिखलाये जा सके। जिस तरफ़ मकान हों उस तरफ़ घेरे के पास आम, इमली, कैथ, जामुन, बेल आदि के पेड़ लगाना ठीक होगा क्योंकि ऐसा करने से छाया और फल दोनों मिल जायँगे। इन

दो क्षेत्रों के निर्माण के पश्चात् डेढ़ २ एकड़ क्षेत्रफल वाले तीन २ क्षेत्र सड़क के दोनों ओर बनवाना चाहिए और प्रत्येक दो क्षेत्रों के बीच में मुख्य सड़क से मिलती हुई आठ नौ फ़ीट चौड़ी सड़कें बनवाकर उनके किनारों पर केला, पपीता आदि के पेड़ लगाना ठीक होगा। इन सड़कों के होने से पशु हल-बखर सहित आसानी से प्रत्येक क्षेत्र में पहुँच सकेंगे। ये क्षेत्र डेढ़ ही एकड़ के हों ऐसा कोई नियम नहीं है। कृषक सुभीतानुसार छोटे बड़े बना सकते है। उपरोक्त छः क्षेत्रों मे से चार क्षेत्रों मे अधिक आयु वाले पेड़ और दो क्षेत्रो में कम आयु वाले और साग-भाजी लगा सकते हैं। ऐसा करने से जैसा कि पहिले पृष्ठ ८ में बतलाया जा चुका है छः एकड़ मे अधिक आयु वाले, तीन एकड़ मे एकवर्षीय या कम आयु वाले पेड़ होगे और शेष एक एकड़ सड़कें, नर्सरी और मकानात मे लग जायगा।

यदि जमीन बिलकुल समथल हो तो कुआँ बीच वाले क्षेत्र में से किसी एक में सड़क के किनारे बनवाना चाहिए और यदि ढालू हो तो ऊपर की ओर बनवाना ठीक होगा।

नक़्शा

डेढ एकड़
डेढ एकड़ का खेत
आठ नौ फीट चौड़ी सड़क
सड़क—पन्द्रह फीट चौड़ी
डेढ एकड़
डेढ़ एकड़
() पक्का कुआँ
सड़क
डेढ एकड़
डेढ़ एकड
मकानात—पाव एकड़
प्रवेश-द्वार
नर्सरी—पाव एकड़
आम रास्ता
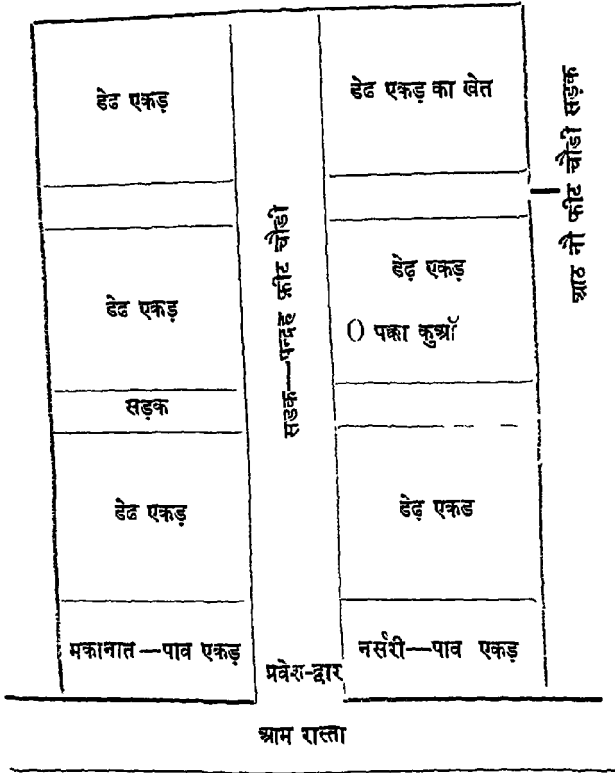
प्रकरण ३

घेरा और वृक्षों का स्थान निर्माण

प्रत्येक फल के बागीचे के चारों ओर ऐसा घेरा होना चाहिए जिसमें पशु से ही नही वरन् चोरों से भी रक्षा हो सके। ऐसे घेरे चार प्रकार के हो सकते हैं।

(१) मिट्टी, ईंट या पत्थर की ऊंची दीवाल :—ईंट या पत्थर की चुनाई मिट्टी या चूने मे की जा सकती है। जहाँ जिस प्रकार के पदार्थ का मेल सस्ते मूल्य मे हो वहाँ उनका घेरा बनाया जा सकता है। सब घेरों मे ऐसा घेरा ही उत्तम होता है। दीवाल के ऊपर कुछ शीशे के टुकड़े लगवा देना चाहिए ताकि आसानी से कोई ऊपर न चढ़ सके। इस घेरे से हवा की रुकावट भी होती है। सीमा प्रान्त की तरफ अङ्गूर, अनार, आलूबुखारा, नासपाती आदि के बागीचे मिट्टी की दीवाल के घेरे से ही घेरे जाते है।

(२) तार का घेरा :—ऐसे घेरे तीन प्रकार के होते हैं। एक सादे तार के, दूसरे काँटेदार तार के और तीसरे जालीदार तार के। तार की पकड़ के लिए लोहे या लकड़ी के खम्भे लगाये जाते हैं। बागीचे वालो के लिए जालीदार (woven wire fencing) तार का घेरा ठीक होता है। ऐसे तार के ऊपर एक तार काँटेदार तार का लगाना चाहिए ताकि ऊपर चढ़ कर कोई

अन्दर कूद न सके। जाली जमीन में क़रीब तीन इञ्च गहरी गाड़ देनी चाहिए ताकि गीदड़, सूअर आदि अन्दर न घुसने पावें। जालीदार तार के घेरे में लकड़ी के खम्भे लगाना ठीक होता है। ये पन्द्रह बीस फीट की दूरी पर लगाये जाते हैं। प्रत्येक खम्भा पॉच छः फीट ऊँचा और पाँच छः इञ्च व्यास का होना चाहिए। खम्भे दो फीट की गहराई तक जमीन में गाड़ने चाहिएं और जो भाग जमीन में रहे उसे दीमक से बचाने के लिए अलकतरे से रॅगना बहुत जरूरी है। कोनों के खम्भे जरा अधिक गहरे गाड़े जाना चाहिए और वे कुछ अधिक मोटे भी होने चाहिऍ। इनकी मजबूती के लिए दो दो टेढ़े बल्ले जिनका एक मुँह जमीन मे और दूसरा खम्भे मे लगा हो तार के खिचाव की ओर लगाना पड़ते है।

(३) तीसरी प्रकार का घेरा जीवित पौधो का होता है। ऐसे घेरे बहुधा कॉटेदार बनस्पति के लगाए जाते है जिससे कोई पशु या आदमी अन्दर न घुसने पावे। हरे घेरे मे सब से बड़ी भारी दिक्कत यह है कि इनकी देखभाल बहुत रखनी पड़ती है। जहॉ कही पौधे के मर जाने से जगह खाली हो जाती है वहॉ पर तुरन्त दूसरा पौधा लगाना पड़ता है। बहुत सी जगह हरे घेरो को गर्मी मे पानी देना ही पड़ता है नही तो वे सूख जाते है। पौधे चौड़ाई या ऊँचाई मे आवश्यकता से अधिक न बढ़ जायँ इसलिए बार २ उनकी काट-छॉट भी करनी पड़ती है। ऐसे घेरे सुन्दरता के विचार से अच्छे होते हैं।

हरे घेरे के लिए कई जाति के पौधे लगाये जाते हैं। दक्षिण की तरफ रामबाण (Agave) या थूहर (Cactus) काम में लायी जाती है। रामबाण के पौधे पौच (Bulb-bills)* से पहले नर्सरी मे तैयार किये जाते हैं और कुछ बढ़ने पर ज़मीन की जुताई कर जहाँ घेरा लगाना हो वहाँ लगा देते हैं। थूहर के लिए उसकी डाली के टुकड़े ही लगा दिये जाते हैं।

यदि लगाया जाय तो घेरा करौन्दे का भी बड़ा मज़बूत होता है और बिना सिचाई के बना रहता है। इसे बीज लगा कर तैयार कर सकते है।

जो लोग सुन्दरता के विचार से हरा घेरा लगाना चाहे उन्हे बालछड़ी (Duranta plumieri) मेहदी (Lawsonia alba) या हेमेटॉक्सीलॉन (Haematoxylon campeachianum) वगैरह का लगाना चाहिए। इन सब मे बाल छड़ी एक ऐसी चीज है जिसकी बाढ़ अच्छी होती है, घेरा सुन्दर दिखलाई देता है और कछार तरी वाली भूमि और तरी वाले वातावरण में बिना सिंचाई के हो जाती है। इसका घेरा लगाने के लिए गर्मी के अन्त में डेढ़ फुट चौड़ी और आठ दस इञ्च गहरी मिट्टी जुतवा कर जब बरसात आ जाय तो इसकी क़लमें लगायी जा सकती हैं। क़लमें दो कतारों मे लगानी चाहिएं जो

---

* पेड के बीच में से एक लम्बा धड निकलता है उसके ऊपर छोटे २ पौधे के आकार के कोंपल निकलते हैं उन्हे पौच (Bulb bills) कहते हैं।

एक दूसरी से आठ इंच की दूरी पर हों। पंक्तियों में क़लमों का अन्तर छ: २ इञ्च का होना चाहिए। अच्छी उपजाऊ मिट्टी में एक साल मे वालछड़ी का घेरा डेढ़ दो फीट की ऊँचाई तक और दूसरे साल मे तीन फीट की ऊँचाई तक का तैयार हो जाता है।

मेहदी तथा हेमेटॉक्सीलॉन भो उपरोक्त रीति से तैयार की हुई जमीन में लगायी जा सकती है।

आवश्यकता होने से ऐसा ही घेरा ववूल का भी तैयार किया जा सकता है। ववूल के वीज वोये जाते है। वीज वोने के पहले उनके कठोर छिलके को गन्धक के अम्ल से गला दिया जाय तो वे जल्दी जम जाते हैं।

उपरोक्त प्रकार के ड्यूरेन्टा, मेहदी, ववूल आदि के घेरों की काटछॉट प्रारम्भ में जल्दी २ करनी चाहिए ताकि वे ऊँचाई में ही न वढ़कर चौड़ाई मे भी अच्छे जम जायँ और नीचे की जगह खाली न रहे।

(४) चौथा घेरा सूखे कॉटो का होता है। ववूल, वेर वगैरह की कॉंटेदार टहनियाँ गाड़ दी जाती हैं और जहाँ टूटफूट होती है वहॉ नये कॉटे गाड़ते रहते है।

वृक्षों का स्थान निर्माण—फलों के वृक्ष साधारणतः तीन भागो में विभाजित किये जा सकते है। एक वे जो पच्चीस तीस फीट से लेकर चालीस पचास फीट या उससे भी अधिक ऊँचे होते हैं और जिनकी शाखाऍ धड़ के चार पॉच फीट की ऊँचाई से फूटती है। ऐसे दरख्तो के नीचे पशु विना कुछ हानि पहुँचाए

घूम सकते हैं अथवा वे छाया में विश्राम कर सकते हैं। इस प्रकार के दरख्तों के नीचे पशुओं का विश्राम करना एक तरह से अच्छा भी होता है। उनका मल मूत्र जो पेड़ों के नीचे गिरता है वह मिट्टी में मिलता जाय इसलिए वहाँ की मिट्टी गोड़कर रखनी चाहिए। ऐसा करने से वृक्षों को काफी खाद पहुँच जाता है। ऐसे वृक्षो को पूर्ण बाढ़ पाने पर पानी दिया जा सके तो अच्छा ही है और नहीं तो बिना पानी दिए ही बरसात के पानी के आधार पर वे नियमानुसार फलते रहते हैं। आम, जामुन, इमली आदि वृक्षो की गणना इस श्रेणी में हो सकती है।

दूसरी जाति के वे वृक्ष होते है जिनकी ऊँचाई पन्द्रह बीस फीट की होती है और जिनकी शाखाएँ जमीन से थोड़ी ही ऊँचाई पर फूट जाती हैं। ऐसे वृक्षों के नीचे गाय, भैंस जैसे बड़े पशु तो नही परन्तु भेड़ जैसे छोटे पशु बिना हानि पहुँचाये विश्राम कर सकते हैं और उनके मल मूत्र से वहाँ की भूमि का उर्वरापन बढ़ जाता है। ऐसे दरख्तो को जाड़े और गर्मी दोनों मौसम में नहीं तो गर्मी मे पानी अवश्य देना पड़ता है। इस वर्ग में आड़ू, आलूबुखारा, संतरा, शरीफा, अमरूद आदि को स्थान दे सकते हैं। ऐसे वृक्ष सड़कों के किनारे भी लगाये जा सकते हैं।

तीसरे विभाग में वे वृक्ष गिने जा सकते हैं जो बहुत छोटे होते हैं और जिन्हें वृक्ष न कह कर पौधे कह सकते हैं जैसे अनानास, स्ट्राबेरी या जिन्हें लताओ के नाम से सम्बोधित

कर सकते हैं जैसे खरबूजा, ककड़ी, दिलपसन्द आदि। चूंकि ये बहुत निकट २ लगाये जाते हैं इनमें पशु नहीं छोड़े जा सकते बल्कि उनसे और जंगली जानवरो से इनकी रक्षा करने के लिए घेरा लगाना पड़ता है। इन्हें खाद भी काफी देना पड़ता है और पानी तो देना ही पड़ता है।

इस वर्ग निर्माणानुसार तीसरी जाति के फल वहाँ लगाना चाहिए जो सिचाई के जलाशय के निकट हो और जहाँ देख भाल अच्छी हो सके। उनसे दूर दूसरे वर्ग के और उनसे भी अधिक दूरी पर पहली श्रेणी के वृक्ष लगाना ठीक होगा।

पहली श्रेणी के वृक्ष बागीचे के चारों ओर लगाए जा सकते हैं। इनसे हवा की रुकावट हो जाती है। जहाँ हवा किसी निर्धारित दिशा से बहती हो जैसा कि भारतवर्ष के कई स्थानो मे होता है तो वहाँ ऐसे दरख़्तों को उसी ओर लगाना चाहिए जिस ओर से हवा बहती हो। इनमें भी वृक्षो की कोमलता और उनसे होने वाली आय का विचार करके लगाना चाहिए। इमली, जामुन आदि जिनसे बहुत कम आय की सम्भावना है उन्हें अन्त में लगाना चाहिए। उनके आड़ मे सपाटू जैसे तथा सपाटू की आड़ मे आम के जैसे वृक्ष लगाने चाहिएं।

सभी जाति के वृक्षों को धूप की आवश्यकता होती है। जाड़े मे सूर्य दक्षिणायन रहता है इसलिए जहाँ तक हो बड़े वृक्ष दक्षिण की ओर न लगाए जायँ और यदि लगाए जायँ तो इतनी दूरी पर हो कि उनकी छाया अन्य वृक्षों के लिए अहितकारी न हो।

बहुत से मनुष्य कई जाति के वृक्ष मिला कर लगा देते हैं परन्तु ऐसा न करके एक स्थान पर एक ही जाति के वृक्ष लगाना उत्तम होता है। ऐसा करने से पेड़ की बाढ़ अच्छी होती है और उनकी देख-भाल और सिंचाई आदि क्रियाएँ भी अच्छी तरह से हो सकती हैं। जब वृक्ष फलते है तो उन्हें पक्षी हानि पहुँचाये बिना नहीं रहते। ऐसी स्थिति में यदि एक ही स्थान पर एक ही जाति के वृक्ष हुए तो पक्षियों से उनकी रक्षा हो सकती है। हाँ इतना अवश्य हो सकता है कि अधिक आयु वाले पेड़ के बीच मे प्रारम्भ मे कम आयु वाले पेड़ लगाए जा सकते हैं जैसे आम के बीच मे पपीते के पेड़ लगाना। जब तक आम के पेड़ फल देने की आयु तक पहुँचते हैं पपीते की आयु समाप्त हो जाती है। यदि पपीता जैसा फल नही लिया जाय तो स्ट्राबेरी, खीरा आदि फल भी लिए जा सकते हैं।

खेतो में फलो के वृक्ष कई रीतियों से लगाये जा सकते हैं परन्त निम्न लिखित युक्तियाँ विशेष उपयोगी जचती है।

(१) वर्गाकार

(२) त्रिभुजाकार या षटकोणाकार

(३) पंच वृक्षी (वर्गाकार लेकिन प्रत्येक वर्ग के बीच में भी एक पेड़ लगाना। इसे करीव क़रीव पहली और दूसरी का मेल समझना चाहिए)।

उपरोक्त तीन मे से पहली रीति बहुत काम मे लायी जाती है, परन्तु ज्यों ज्यों दूरी बढ़ती जाती है चार चार पेड़ के बीच

की ज़मीन बहुत छूट जाती है इसलिए जैसे २ अन्तर बढ़ता जाय दूसरी और तीसरी युक्ति काम में लानी चाहिए ताकि भूमि का उपयोग भी पूरा हो और संख्या पेड़ प्रति एकड़ भी विशेष हो। दस फीट के अन्तर तक पहली, दस से बीस तक के लिए दूसरी और बीस से अधिक अन्तर हो, तो तीसरी रीति काम मे लानी चाहिए। मान लिया जाय आपका एक एकड़ का खेत वर्गाकार रूप मे है तो प्रत्येक भुजा २०८'७१ फीट यानी २०९ फीट हुई। अब यदि हमे १५ फीट की दूरी पर पेड़ लगाना है तो सब से पहले उस वर्ग के चारो तरफ दूरी का आधा यानी सात साढ़े
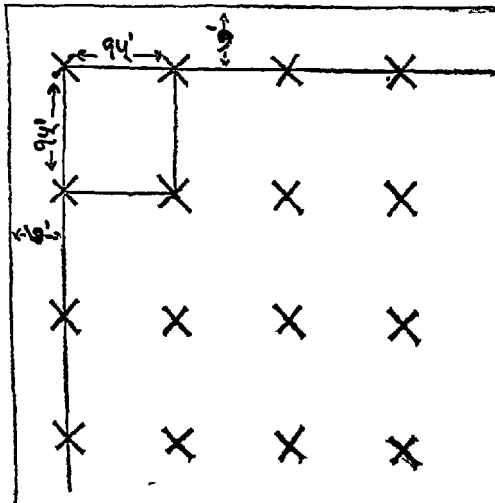
चित्र नं० १

पेड़ लगाने की वर्गाकार रीति।

सात फ़ीट ज़मीन छोड़ देनी चाहिए। ऐसा करने से हमारे वर्ग की भुजाओं की लम्बाई (२०९—१४) १९५ फ़ीट हुई। इस भुजा पर १५ फ़ीट की दूरी पर पेड़ लगाने से १४ पेड़ होते हैं और एकड़ में १९६ पेड़ हुए। (चित्र नं० १) इसमें जिस तरफ़ से देखा जायगा १४ पंक्तियाँ दिखेंगी।

अब यदि हम त्रिभुजाकार रूप में लगावें जैसा कि चित्र नं० २ में दिखलाया गया है तो ८ पंक्तियाँ चौदह चौदह पेड़ की और ८ तेरह तेरह पेड़ की होंगी और कुल २१६ पेड़ होंगे अर्थात् पेड़ों को चारो तरफ बराबर जगह मिलने पर भी २० पेड़ अधिक होंगे।
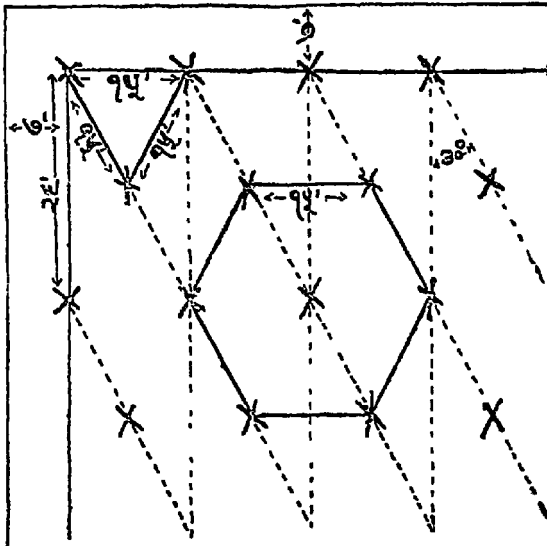
चित्र नं० २

पेड लगाने की त्रिभुजाकार या षट्कोणाकार रीति।

त्रिभुजाकार रीति में यदि हम समत्रिबाहु त्रिभुज बनाते हैं तो पेड़ों का स्थान षट्कोणाकार भी हो जाता है।

तीसरी रीति में चार चार पेड़ों के बीच एक एक पेड़ दूसरी जाति का कम फैलने वाला लगा दिया जाता है ताकि बीच की भूमि से भी लाभ उठाया जाय। यह रीति उस वक्त काम में लायी जाती है जब कि मुख्य जाति के पेड़ अधिक आयु के होने पर फलते हैं या जब पेड़ों का अन्तर बीस फीट से अधिक होता है।

उपरोक्त गणना एक एकड़ का ठीक वर्गाकार खेत मान कर की गयी है परन्तु खेत बहुधा ठीक ऐसे ही नाप के नहीं होते इसलिए पाठकों को अपने खेत के आकारानुसार पेड़ो का स्थान निर्माण कर लेना चाहिए।

पहली और तीसरी रीति से पेड़ लगाने के लिए सब से प्रथम खेत की एक भुजा पर निर्धारित स्थान की दूरी पर खूंटियाँ गाड़ देनी चाहिए और बाद मे प्रत्येक खूंटी पर लम्ब डालकर उस लम्ब पर दूसरे पेड़ों के स्थान पर खूंटियाँ लगानी चाहिएं।

दूसरी रीति मे एक भुजा पर खूंटियाँ गाड़कर यदि कोण नापने का यंत्र हो तो प्रत्येक खूंटी पर लम्ब के साथ ३०° (अंश) का कोण बनाकर कोण बनाने वाली रेखा पर निर्माणित दूरी पर खूंटियाँ गड़वानी चाहिएँ। यदि ऐसा यंत्र न हो तो एक ओर की सब पंक्तियों का स्थान निर्माण कर दूसरी ओर की एक एक

पंक्ति छोड़कर अर्थात् पहली, तीसरी, पाँचवी इत्यादि पंक्तियों का स्थान निर्माण कर उन पर खूंटियाँ गाड़ दी जायँ और बाद में प्रत्येक चार चार खूंटियों के बीच में एक खूंटी गाड़ दी जाय तो पौधों का स्थान निर्माण आसानी से हो जायगा।

प्रकरण ४

खाद

बनस्पति पोषणकर्ता तत्व भूमि और वातावरण मे पाये जाते हैं। वातावरण से प्राप्त होने वाले तत्वो का भण्डार अपार है। जमीन से प्राप्त होने वाले तत्वो में न्यूनाधिकता हो जाती है। जो तत्व जमीन से प्राप्त होते हैं उनमें तीन तत्व नत्रजन, स्फुर और पोटाश मुख्य हैं। खाद द्वारा इन्ही की न्यूनता पूरी की जाती है। जहाँ की मिट्टी अम्लदार होती है वहाँ अम्ल की शान्ति के लिए चूना डालना पड़ता है। पौधे या पेड़ इन तत्वों का उपयोग लवण के रूप मे करते हैं। प्रत्येक तत्व का कर्तव्य जुदा जुदा होता है। नत्रजन से धड़, शाखाएं और पत्तों की पुष्टि होती है। पत्ते स्वस्थ और गहरे रंग के होते हैं। स्फुर से जड़ों की पुष्टि होती है और फल अधिक प्राप्त होते हैं। पोटाश से पौधों का कर्तव्य सम्पादन अच्छा होता है, पेड़ स्वस्थ बने रहते है और फलों का रूप, रंग, स्वाद और आकार अच्छा होता है।

अस्वस्थ और पीले पत्ते तथा कमजोर शाखाएं और अधिक लेकिन अपूर्ण बाढ़ वाले फल पाये जायँ तो समझना चाहिए कि नत्रजन की कमी हैं। मजबूत शाखाएं, गहरे हरे पत्ते और फलो का अभाव या कमी स्फुर की कमी दर्शाते हैं।

जब पौधे या पेड़ों की अस्वस्थता, फलों के रूप, रंग, आकार और स्वाद की हीनता हो तो पोटाश की कमी समझनी चाहिए। ऐसी स्थिति में जिस तत्व की कमी दिखलायी दे खाद डालते समय उस तत्व की पूर्ति का ध्यान रखना चाहिए।

ये तत्व सजीव (Organic) अथवा निर्जीव (Inorganic) खाद के रूप में डाले जा सकते हैं। हमारे देश में निर्जीव की अपेक्षा सजीव का मेल बहुत ज्यादा है इसलिए जहाँ तक हो सजीव खाद का उपयोग ही करना उत्तम है जहाँ सजीव की कमी हो वहाँ दोनों का मिश्रण काम मे लाना चाहिए। नीचे सजीव और निर्जीव दोनों प्रकार के खाद की सूची और संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है ताकि जहाँ जिस प्रकार के खाद का मेल हो उसका उपयोग किया जा सके।

सजीव खादों में प्रायः तीनों तत्व न्यूनाधिक मात्रा मे पाये जाते है ऐसे खाद निम्न लिखित है :—

नत्रजन प्रधान :—इनमें स्फुर और पोटाश से नत्रजन की मात्रा विशेष होती है।

(१) गोवर का खाद (पशुओ का मलमूत्र और पशु-शालाओं के घास पात का मिश्रण)।

(२) मनुष्यों का मलमूत्र।

(३) पक्षियो की विष्टा।

(४) खलियो का खाद।

(५) हरा खाद।

(६) सूखे तथा हरे पत्तों का खाद।

(७) शहर के कूड़े कर्कट का खाद।

(८) शहरों की मोरियों का पानी।

स्फुर प्रधान :—इनमें नत्रजन और पोटाश की अपेक्षा स्फुर अधिक होता है।

(१) हड्डियों का खाद।

(२) मछलियों का खाद।

(३) पक्षियों की विष्टा।

पोटाश प्रधान :—जिनसे स्फुर और नत्रजन की अपेक्षा पोटाश की पूर्ति अधिक हो।

(१) सामुद्रिक जंगल।

निर्जीव खाद

नत्रजन पूर्ता :—

(१) सोडियम नाइट्रेट	१५ शतांश नत्रजन
(२) एमोनियम सलफेट	२० " "
(३) एमोनियम क्लोराइड	२५ " "
(४) सायनामाइड	२० " "
(५) केलशियम नाइट्रेट	१३ से १६ "

स्फुर पूर्ता :—

(१) सुपर फॉस्फेट	२० से ४० शतांश स्फुर
(२) बेसिक स्लैग।	१६ से १८ "

पोटाश पूर्ती :—

(१) पोटेशियम सलफ़ेट	लगभग ४८ शतांश पोटाश
(२) पोटेशियम क्लोराइड	५० " "

नत्रजन और स्फुर मिश्रित :—

	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर
(१) डाइमॉन फॉस	२१	५४
(२) एमो फॉस	१३	४८
(३) ल्यूनो फॉस	२०	२०
(४) नीसी फॉस	१४	४५
	१८	१८

नत्रजन और पोटाश मिश्रित—

	शतांश नत्रजन	शतांश पोटाश
(१) पोटेशियम नाइट्रेट	१४	४८

स्फुर और पोटाश मिश्रित—

	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
(१) राख	२	४ से ६

नत्रजन, स्फुर और पोटाश मिश्रित—

	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
(१) नाइट्रोफोस्का	१५	१५	२०

(२ स्फुर की मिट्टी

(३) तालाब कुएँ आदि की मिट्टी।

नत्रजन प्रधान सजीव खाद—

(१) गोबर का खाद —

इस खाद से हमारा अभिप्राय सिर्फ गोवर से नहीं है बल्कि उस मिश्रण से है जिसमे पशुओं का मलमूत्र और पशुशालाओ का घास पात मिला हुआ हो क्योकि ये सब पदार्थ एक साथ ही रक्खे जाते हैं। इस खाद का उपयोग कृषक बहुत दिनो से करते आ रहे हैं। यथार्थ में देखा जाय तो अच्छा सड़ा हुआ गोबर का खाद सर्वोत्तम खाद है। इससे पौधो को खाद्य तत्व मिलने के सिवाय भूमि की दशा सुधरती है और उसमें बसने वाले सूक्ष्म जन्तुओं की वृद्धि होती है जो पौधों के लिए भोज्य पदार्थ तैयार करते हैं।

गोबर के खाद का न्यूनाधिक गुण पशुओं की जाति और उनके भोजन* पर निर्भर है। गाय बैल की अपेक्षा भेड़ बकरी का खाद विशेष लाभजनक होता है। घोड़े की लीद मटियार ज़मीन के लिए बहुत अच्छी होती है। निरा भूसा खाने वाले पशुओ के खाद से जिन पशुओं को दाना भी दिया जाता है उनका खाद अधिक अच्छा होता है। इसके सिवाय खाद में घास पात के मिश्रण का तथा उसके रक्खे जाने की रीति का भी उपज-शक्ति पर असर पड़ता है। जिस खाद मे कम घास-पात होता है और जो सूर्य की तेज़ी और वर्षा के जल से बचाया हुआ होता है वह विशेष उपयोगी होना है इसलिए जब

*Study of the losses of fertilising constituents from cattle dung during storage and a method for their control. By N. D Vyas L Ag. Agri and Livestock in India Vol. I, Part I January, 1931

खाद खरीदा जाय तो उपरोक्त बातो को ध्यान में रखकर खरीदना चाहिए। निज के पशुओ का जो खाद रक्खा जाय उसे भी अन्य प्रकार की न हो तो फूस की छाया में रखना चाहिए और रखने का गढ़ा पक्का न हो तो उसकी फ़र्श को मोरम से पिटवा देना चाहिए ताकि नीचे की मिट्टी खाद के घुलनशील पदार्थों को सोख न जाय। दो जोड़ी बैल के खाद के लिए ८×८×४ फीट का गढ़ा काफी होता है। बहुधा यह देखा जाता है कि गोबर तो खाद की ढेरी तक पहुँच जाता है परन्तु मूत्र का बहुत सा भाग नष्ट हो जाता है। गोबर की अपेक्षा मूत्र अधिक उपयोगी है इसलिए पशुशालाओं की फर्श पर मिट्टी बिछाकर उसमें मूत्र सोखा दिया जाय तो ठीक होगा। बरसात में मिट्टी डालने से वह गीली हो जाती है और पशुओ को कष्ट होता है इसलिए उन दिनों में घास-पात बिछाना ठीक होगा ताकि मूत्र उसमें सोख जाय।

फलों के वृक्षों के लिए गोबर के खाद की मात्रा :—

प्रारम्भ में जब पौधे लगाये जाते हैं और तरकारियाँ भी ली जाती हैं उस वक्त मे ढाई सौ से तीन सौ मन खाद प्रति एकड़ देना चाहिए। बाद में जब तक तरकारियाँ ली जायँ दो सौ से ढाई सौ मन प्रति वर्ष देना ठीक होगा। यदि फलीदार तरकारियाँ ली जायँ तो उनके लिए कम खाद देना चाहिए। जिन गढ़ों में पौधे लगाये जायँ उनकी मिट्टी में भी गोबर का खाद देना पड़ता है सो गढ़ों के आकार तथा पौधों की जाति के अनुसार बीस सेर से लेकर एक मन प्रति गढ़ा देना चाहिए।

बाद में काट-छांट के वक्त प्रति वर्ष भी खाद दिया जाता है सो उस वक्त पौधों की उपयोगिता तथा आकारानुसार दिया जाना चाहिए। इस प्रकरण के अन्त में दी हुई रीति से ज़मीन का अनुमान करके उस पर लगभग एक इञ्च मोटा तह हो जाय इतना खाद देना चाहिए। आगे जहां जहां काट-छांट के बाद खाद देने का वर्णन होगा वहां मात्रा नही दी जायगी। उपरोक्त रीति से गणना करके डालना चाहिए।

(२) मनुष्यों का मलमूत्र :—

इस खाद का उपयोग तरकारी और अन्य फ़सलों के लिए किया जाता है। फलों के लिए नहीं किया जाता। परन्तु यदि राख या मिट्टी के साथ मिलाकर सुखा करके जो पदार्थ पुडरेट के नाम से विकता है मिलता हो तो डाला जा सकता है। गोबर के खाद की मात्रा से आधी मात्रा इसकी होनी चाहिए।

(३) पक्षियों की विष्ठा का खाद :—

कुछ लोग पक्षी पालते हैं परन्तु उनकी विष्ठा का खाद के लिए उपयोग करने वाले बहुत कम है। सूखी हुई विष्ठा मे लगभग ४ शतांश नत्रजन, २·३ शतांश स्फुर और १·२ शतांश पोटाश रहता है इसलिए यह खाद पशुओं के खाद से अधिक अच्छा होता है। विष्ठा वैसे ही सूखने दी जाय तो उसमे से खाद के तत्व उड़ जाते हैं इसलिए उसके साथ राख या मिट्टी मिला

कर रखना चहिए। ऐसा खाद बहुत कम मिलता है परन्तु यदि मिल सके तो गोबर के खाद के साथ डाला जा सकता है।

इसी तरह से चमगादड़ की विष्टा जिसमे करीव ८ शतांश नत्रजन, २'८ शतांश स्फुर और १'३ शतांश पोटाश रहता है वह भी काम मे लायी जा सकती है।

(४) खलियों का खाद :—

खलियाँ दो प्रकार की होती है एक वे जो पशुओ को खिलायी जाती हैं और दूसरी वे जो जहरीली होने के कारण नही खिलायी जाती। भारतवर्ष में निम्न लिखित खलियाँ पायी जाती है जिनका उपयोग किया जा सकता है।

नाम खली	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
मूंगफली	७'६	२'३	२'२
सरसो	६'५	१'०	१'४
कुसुम	५'८	१'३	१ २
अलसी	५'७	१'६	१'६
तिल	५'०	१'१	१'०
रामतिल्ली	४'५	२'०	१'९
नारियल	३'७	१'९	१'८

उपरोक्त खलियां पशुओ को खिलायी जा सकती हैं।

निम्न लिखित खलियाँ पशुओ को नहीं खिलायी जाती —

नाम खली	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
एरंडी	५'०	१'८	१ ६

नाम खली	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
नीम	४'४	१'०	१'४
करंज	३'५	०'७	१'३
महुआ	२'६	०'८	२'८

खलियो मे नत्रजन के सिवाय कुछ स्फुर और पोटाश भी रहते हैं परन्तु इनका उपयोग नत्रजन की पूर्ति के विचार से ही किया जाता है।

जो खलियाँ पशुओ को खिलायी जाती हैं वे तो रूप परिवर्तनोपरान्त खाद के काम में आही जाती है इसलिए दूसरी का उपयोग खाद के लिए करना चाहिए।

फलो के पेड़ो के लिए खलियाँ वैसे भी दी जा सकती है परन्तु छोटे पौधो के लिए यदि सड़ाकर दी जायँ तो और भी अच्छा होगा। जब तरकारियाँ ली जायँ तो उनके लिए भी सड़ी हुई खली का खाद विशेष उपयोगी होगा।

खली सड़ाने की रीतिः--

सौ भाग खली, पाँच भाग कोयला, पच्चीस भाग मिट्टी और साठ सत्तर भाग जल का मिश्रण बनाकर तीन मास तक छाया मे सड़ा कर डालना चाहिए। इस ढेरी पर मिट्टी का एक तह भी दे देना चाहिए ताकि पानी उड़ने न पावे। मिश्रण

---

* Pusa Bulletin No 176, by N. D. Vyas, L. Ag.

को गीला रखने के लिए दस पन्द्रह दिन के अन्तर पर उस पर पानी भी छिड़कते रहना चाहिए।

यथार्थ में देखा जाय तो सजीव खाद में, मेल और उपयोगिता के विचार से, गोबर के खाद के बाद खलियों को ही स्थान देना चाहिए। जहाँ तक हो सके इनका उपयोग बहुत करना चाहिए। जिन बागीचों से तरकारियाँ ली जॉय वहाँ तो खलियाँ लाभप्रद ही होंगी।

मात्रा—चूंकि खलियों में नत्रजन की मात्रा न्यूनाधिक होती है इसलिए मात्रा का अनुमान नत्रजन की गणना पर ही करना चाहिए। प्रति एकड़ पेड़ों की उपयोगितानुसार बीस सेर से तीस सेर नत्रजन पहुँचे इतना खाद देना चाहिए। नत्रजन की मात्रा से खली का अनुमान करके उसमें संख्या पेड़ प्रति एकड़ का भाग दे दिया जाय तो प्रति पेड़ कितनी खली देनी चाहिए मालूम हो जायगा।

(५) हरा खाद–

खेतो मे किसी फसल को उपजाकर हरी गाड़ देने को हरा खाद कहते हैं। इसके लिए फलीदार फसलें ही ज्यादातर काम में लायी जाती हैं। उनमें भी ज्यादे पत्ते, कोमल डंडी और जल्दी वढ़ने वाली फसलें अधिक उपयोगी होती है। उपरोक्त गुण सन, ढेञ्चा और ग्वार में पाया जाता है। जहॉ खाद का वहुत अभाव हो और वर्षा तीस चालीस इञ्च होती हो वहां सन का खाद अच्छा होगा; इस से बहुत अधिक

वर्षा वाली जगह में ढेञ्चा और कम वाली मे ग्वार की फसल ठीक होगी। पेड़ों के बीच की ज़मीन में, अथवा प्रारम्भ में समूचे खेत में ये फसलें लगायी जा सकती हैं। जब छोटे पौधों के साथ लगायी जायँ तो यह देखना चाहिए कि उन पौधों के आस पास लगभग तीन फीट की दूरी तक इनके पौधे न हो। नज़दीक होने से पौधा पीला और निर्बल हो जाता है क्योंकि उसे ठीक से हवा और रोशनी नही मिलती।

मात्रा—बरसात के प्रारम्भ में लगाकर जब तीन चौथाई बरसात का मौसम बीत जाय तो जितनी फसल पैदा हो गाड़ देनी चाहिए।

(६) हरे या सूखे पत्तों का खाद :-

फलों के बागीचों मे जाड़े में बहुत से पेड़ो के पत्ते झड़ जाते हैं और प्रायः सभी पेड़ों के कुछ न कुछ पत्ते झड़ते ही रहते हैं जिन्हे लोग जला देते हैं। इन पत्तों को न जला कर यदि इनका खाद बनाया जाय तो वह बड़ा उपयोगी होगा। सब पत्तों को एक गढ़े मे डलवाते रहना चाहिए और उन पर कुछ मिट्टी और पानी डलवाते रहने से सड़ने पर बहुत ही उत्तम खाद बन जाता है। ऐसा खाद गोबर के खाद से भी जल्दी लाभ पहुँचाने वाला होता है इसलिए जहाँ तक हो झड़े हुए अथवा काट-छांट द्वारा प्राप्त किये हुए पत्तों को सड़ाकर ज़रूर काम में लाना चाहिए।

मात्रा :—मिट्टी मिश्रित सड़े हुए पत्तो के खाद की मात्रा गोबर के खाद की मात्रा के बराबर होनी चाहिए।

(७) शहर का कूड़ा कर्कट :-

अन्य खाद के अभाव में इस खाद का भी उपयोग किया जा सकता है। इसमें घरों का कूड़ा और राख, बर्तनों के टुकड़े, सड़कों पर का गोबर और लीद, साग भाजी के अनउपयोगी पत्ते और फटे पुराने कपड़े इत्यादि कई वस्तुएं रहती हैं। प्रारम्भ में इसे वैसे ही खेतों में बरसात के पहले पचास साठ गाड़ी प्रति एकड़ के हिसाब से डाल सकते हैं, परन्तु बाद में डालना पड़े तो अच्छी तरह से सड़ाकर डालना चाहिए।

(८) शहर की मोरियों का पानी :-

फलो के वृक्षो की सिंचाई इस पानी से की जा सके तो अच्छा ही होगा। इसमे भी खाद के तत्व पाये जाते हैं।

स्फुर प्रधान सजीव खाद :-

(१) हड्डियां :-

फलो के वृक्षों के लिए हड्डी का खाद बहुत उपयोगी होता है, क्योंकि इससे स्फुर की पूर्त्ति होती है जिससे जड़े पुष्ट होती है और फल अधिक संख्या में प्राप्त होते हैं। जो पेड़ फल न देते हों अथवा कम देते हों उनमें सड़ाई हुई हड्डी का मिश्रण दिया जाय तो फल आना प्रारम्भ हो जाते है[१]। हड्डी को सड़ाने की

[१] एक मित्र के बागीचे में दो नीबू के पेड काफी बाढ पाने पर भी नही फलते थे और वे उन्हें हटा देने का निश्चय कर चुके थे। मेरे आग्रह से उन्होंने सडाई हुई हड्डी के खाद का प्रयोग किया तो दोनों पेड उसी साल से फलने लग गये।

क्रिया* बहुत सरल है। हड्डी का चूर्ण, गंधक, बालू और कोयले के मिश्रण को पानी से भिगो कर सड़ाया जाता है। छ भाग हड्डी का चूर्ण, छ भाग बालू डेढ़ भाग गंधक और एक भाग लकड़ी के कोयले का चूर्ण मिलाकर पानी से गीला रखकर छ महीने तक सड़ाना चहिए। सड़ता हुआ मिश्रण सूखने न पाये इसलिए पानी देते रहना चाहिए।

मात्रा :—लगाते समय प्रत्येक पौधे के गढ़े में दो ढाई सेर तक हड्डी का चूर्ण‡ पहुँचे इतना पौधों की उपयोगितानुसार देना चाहिए और बाद में प्रति वर्ष जब गोबर का खाद दिया जाय उस वक्त भी इसका खाद देना चहिए। गोबर यदि सौ भाग हो तो उसमे एक भाग हड्डी का चूर्ण मिला देना चाहिए। आगे जहां कहीं हड्डी मिश्रित खाद का वर्णन हो वहां इसी मिश्रण को समझना चाहिए। जहां सिर्फ हड्डी ही देने का हो वहां तीन मन से छ: मन तक हड्डी का चूर्ण प्रति एकड़ के हिसाब से देना चाहिए।

(२) मछलियों का खाद :—

जहां मछलियो का व्यवसाय बहुत होता है वहाँ सड़ी गली मछलियाँ फेंक दी जाती हैं। वहाँ से अथवा उन कारखानो से जहाँ मछली का तेल निकाला जाता है ऐसा खाद मिल जाता है। हड्डी के खाद की भांति इसका भी उपयोग किया जा सकता है।

---

*Pusa Bulletin No 204, by N D Vyas L Ag.

‡ महीन चूर्ण के अभाव में छोटे २ टुकडे भी डाल सकते है। ऐसी स्थिति मे मात्रा बढ़ा देनी होगी।

(३) पक्षियों की विष्ठा :-

समुद्र के पक्षी जिस स्थान पर बैठा करते हैं वहाँ उनकी विष्ठा गिरती है। ऐसी विष्ठा में खाद के तत्व काफी मात्रा में पाये जाते है। यदि वह स्थान ऐसा हुआ जहाँ पानी नही गिरता हो तो उसमें नत्रजन और स्फुर बराबर मात्रा में पाये जाते हैं। ऐसी विष्ठा मे चार-पाँच शतांश नत्रजन और उतना ही स्फुर रहता है। जहाँ पानी गिरता है वहाँ नत्रजन वाले पदार्थ धुलकर वह जाते है इससे स्फुर का शतांश बढ़कर सात आठ शतांश तक हो जाता है। व्यवसायी लोग ऐसी विष्ठा वहाँ से खोद कर ले आते हैं और बेंच देते है। इसके सब जगह मिलने की सम्भावना नही है। जहाँ मिल सके काम मे लायी जा सकती है।

पोटाश प्रधान सजीव खाद :-

समुद्र के किनारों के निकट पानी मे होने वाले पौधो मे लगभग १.५ शताश पोटाश रहता है। मिलने से इनका उपयोग किया जा सकता है। कम गहरी नदियो और तालावों में जो पानी के पौधे जमजाते है और जिन्हें सेवार कहते हैं उनका भी उपयोग लाभ प्रद होता है। मुलायम पत्ते वाला सेवार अच्छा होता है सूखे सेवार मे लगभग १ शतांश नत्रजन ०.४ शतांश स्फुर और २ शतांश पोटाश रहता है।

निर्जीव खाद :-

इन खादों का उपयोग सजीव की कमी को पूरी करने अथवा उनके साथ साथ डालना ठीक होगा। अभी भारतवर्ष मे ऐसे

प्रयोग बहुत नहीं हुए हैं जिनके आधार पर फलों के वृक्षो के लिए निर्जीव खाद की उपयोगिता सिद्ध की जा सके अथवा उनकी मात्रा का अनुमान ठीक से किया जा सके । ऐसी स्थिति मे भारतीय तथा विदेशीय अनुसंधानो के आधार पर विचार किया जाय तो निम्न लिखित मात्राएँ ठीक होंगी। काट छांट के बाद जब गोबर का खाद दिया जाय तब इन्हें देना चाहिए।

नीर्जीव खाद मे नत्रजन की पूर्ति के लिए अधिकतर उपयोग सोडियम नाइट्रेट और एमोनियम सलफेट का किया जाता है। सुपरफ़ॉसफेट से स्फुर की पूर्ति होती है। हाल में जो नीसीफ़ास निकला है उससे नत्रजन और स्फुर दोनों की पूर्ति होती है। पोटाश पोटेशियम सलफ़ेट के रूप मे दिया जा सकता है; इससे फलो का स्वाद और आकार अच्छा बनता है। पोटाश की पूर्ति राख द्वारा भी की जा सकती है। आज-कल बाज़ार में खाद विक्रेता ऐसे मिश्रण भी बेचते हैं जिनसे तीनों तत्वों की पूर्ति हो जाती है। यहाँ पर खाद की मात्रा उनके तत्व के रूप में दी जाती है। पृष्ठ ३१-३२ में खाद के तत्वों की मात्रा दी गयी है जिससे पाठक गणना करके डाल सकते हैं।

अङ्गूर, आम, नासपाती, माल्टा, सपाटू, सेब, सन्तरा आदि ऐसे फल हैं जिनसे अच्छी आमदनी होती है; इनके लिए खाद पर कुछ अधिक व्यय किया जा सकता है। ऐसे फलो के लिए बीस सेर से पचीस सेर नत्रजन और तीस सेर से पैंतीस सेर तक स्फुर प्रति एकड़ पहुँचे इतना खाद देना चाहिए। अमरूद,

आड़ू, आलूबुखारा, अञ्जीर, केला, पपीता आदि के लिए पन्द्रह सेर से बीस सेर नत्रजन और पचीस सेर से तीस सेर स्फुर प्रति एकड़ ठीक होगा। पोटाश की मात्रा नत्रजन से दूनी और केले जैसी फ़सल के लिए ढाईगुनी भी ठीक होगी।

राख देना हो तो प्रति पौधा या पेड़ दो सेर से लेकर पांच सेर तक दी जा सकती है।

अम्लदार मिट्टी में कितना चूना देना चाहिए यह कृषि रसायनज्ञ की सम्मति से देना चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो दस पन्द्रह मन बुझाया हुआ चूना प्रति एकड़ डालकर देखना चाहिए। यदि इससे भी लाभ न हो तो कुछ और डाल सकते हैं।

फलों के पेड़ों में खाद देने की रीति :-

जितनी दूर तक पेड़ की शाखाओं का फैलाव होता है उससे दो तीन फीट अधिक दूरी तक अधिकांश जड़ों का फैलाव होता है इसलिए धड़ से उतनी दूरी तक की जमीन आठ दस इञ्च गहरी खोद कर उसमें खाद देना चाहिए। धड़ के पास की दो तीन फ़ीट जमीन छोड़कर शेष जमीन पर खाद डालकर उसे मिट्टी में भली भांति मिला देना चाहिए।

प्रकरण ५

बनस्पति संवर्धन

अर्थात्

पौधे तैयार करने की युक्तियाँ

फलो के पौधे या तो बीज से तैयार किये जाते हैं या क़लम बाँधकर। बीज से तैयार किये हुये पौधों को बीजू और दूसरों को क़लमी पौधे कहते हैं। पौधे तैयार करने की साधारण युक्तियां निम्न लिखित हैं।
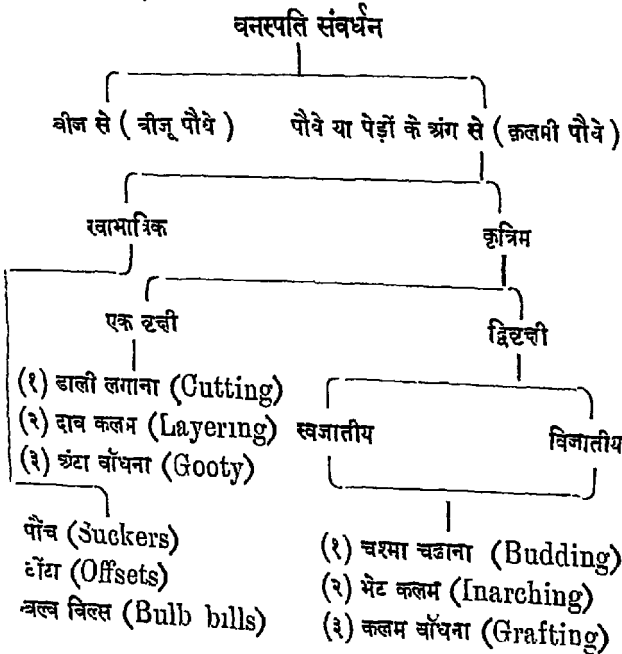
बीजू पौधे तैयार करना :—

बीज से पौधा तैयार करने की साधारण युक्ति प्रायः सब कृषक जानते हैं। इसमें सिर्फ यही ध्यान रखना है कि अन्न अथवा तरकारी के बीजों की भांति फलों के बीजों की उत्पन्न शक्ति अधिक दिनों तक नहीं रहती, इसलिए जहाँ तक हो ताजे बीज लगा देना चाहिए।

प्रायः सभी पौधे पहले नर्सरी में तैयार किये जा सकते हैं और बाद में समय आने पर निर्धारित स्थान पर लगाये जा सकते हैं। कुछ बीज ऐसे हैं जैसे खरबूजा, तरबूज आदि कि जिनके बीज सीधे खेत में ही लगाये जाते हैं।

नर्सरी हमेशा बलुआ दुमट मिट्टी की अच्छी होती है। यदि ऐसी न मिले तो मटियार में बालू और बलुआ मे मटियार मिट्टी मिलाकर वैसी बना लेनी चाहिए। गोबर और सड़े हुए पत्तों का खाद बराबर भाग में मिलाकर नर्सरी की मिट्टी में प्रतिवर्ग गज़ दो तीन सेर खाद पहुँचे इतना डालना चाहिए।

फलों की खेती वालों को खेतों में लगाये जाने वाले बीजू पौधों के सिवाय जिन पौधों पर कलम चढ़ायी जाती है वे भी तैयार करने पड़ते है सो उन्हे भी नर्सरी में तैयार करना चाहिए ताकि उत्तम स्वस्थ पौधे मिल सकें।

क़लमी पौधे तैयार करना :—क़लमी पौधे क्यो तैयार किये जाते हैं ? जगत नियन्ता के नियमानुसार उच्चकोटि के प्राणी या पौधों की उत्पत्ति नर नारी के मेल से होती है।

बनस्पति शास्त्र के विशेषज्ञों ने बनस्पतियों में भी नर नारी फूल की खोज करके बनस्पति संसार में हलचल मचा दी है। पृथक् पृथक् गुण वाले पौधों के नर मादीन फूलों के तत्वों को मिलाकर कई उत्तमोत्तम अनाज और फल फूल तैयार कर दिये हैं और ऐसे गुण वाले पौधों के गुण स्थिर रखने के लिए नयी युक्तियाँ भी निकाल दी हैं। यदि ऐसी युक्तियाँ नहीं निकलतीं तो फलों में गुण स्थिर रखना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य था। बीज से पौधे तैयार करने में गुण परिवर्तन का भय रहता है। इसके सिवाय बीजू पोधो की अपेक्षा क़लमी पौधे बहुत जल्दी फल देना आरम्भ करते हैं, इसलिए गुण स्थिर रखने तथा फल जल्दी प्राप्त करने के लिए क़लमी पौधे तैयार किये जाते हैं।

कलमी पौधे दो प्रकार के होते हैं:—एक वे जो स्वाभाविक रीति से तैयार होते हैं और दूसरे वे जो कृत्रिम रीति से तैयार किये जाते हैं। पहले प्रकार के पोधे, पेड़ स्वयम् तैयार कर देते हैं जैसे केले के पौंच (Suckers), स्ट्राबेरी का टोंटा (Offsets), अनानास के सकर्स, रामबाण के पौंच। इनका स्थानान्तर कर देने से ही पौधे या पेड़ दूसरी जगह तैयार हो जाते हैं।

कृत्रिम रीति से पौधे तैयार करने में मनुष्यों को कुछ परिश्रम करना पड़ता है। ये युक्तियाँ कई प्रकार की हैं, परन्तु इन्हें मुख्यतः दो भागो मे विभाजित कर सकते हैं एक वृक्षी अर्थात् जिसमें एक ही वृक्ष का कोई अंग काम आता है और

दूसरी द्विवृत्ती अर्थात् जिसमें दो स्वजातीय या विजातीय पौधों का संलग्न किया जाता है। आम के पौधे पर आम की अथवा आड़ू (Peach) के पौधे पर आड़ू की क़लम चढ़ाना स्वजातीय पौधों के मेल के उदाहरण हैं और महुआ या खिरनी के पौधे पर सपाटू की, आड़ू के पौधे पर आलूबुखारा की क़लम चढ़ाना विजातीय पौधों के संलग्न हैं।

क़लम की सफलता मुख्यतः चार बातों पर निर्भर है। (१) पौधों के स्वास्थ्य पर, (२) तैयार करने के समय पर (३) युक्ति की जानकारी पर और (४) बाद की देख-भाल पर।

(१) पौधों का स्वास्थ्य :—स्मरण रहे कि टहनी या फल फूल कर्ता जो भाग पौधो के हैं वे पत्ते और शाख के मेल की जगह पर पत्ते और शाख के बीच मे से निकलते है जिन्हें हिन्दी में आंख, चश्मा या कली कहते हैं और अंगरेजी मे टहनी देने वाली को वुड बड (Wood bud) और फूल फल वाली को फ्लॉवर और फ्रूट (Flower and Fruit bud) कहते हैं पौधो की बाढ़ के लिए वुड-बड स्वस्थ होनी चाहिए इसलिए जो टहनी क़लम तैयार करने के लिए चुनी जाय वह अखण्ड पत्ते वाली चुनकर, यह देख लेना चाहिए कि वुड बड (चश्में) अखण्ड हो, कीटादि शत्रुओं से हानि पहुँचायी हुई न हो। इसी भाँति जिस पौधे पर कमल चढ़ायी जाय (जिसको आगे बीजू के नाम से सम्बोधित किया जायगा) वह भी स्वस्थ हो। उसके धड़ में किसी प्रकार की व्याधि या कीट न हो।

(२) क़लम बांधने का समय :—जब पौधो की बाढ़ होती है उस समय उनमें रस का सञ्चालन बड़ी तेजी से होता है इसलिए यदि बाढ़ के प्रारम्भिक काल में क़लमें तैयार की जायँ तो अच्छी लग जाती हैं। यह समय पौधे की जाति अनुसार वर्षा ऋतु के प्रारम्भ से बसन्त ऋतु के अन्त तक रहता है। किसी किसी जाति मे गर्मी में भी ऐसा होता है इसलिए पौधो के बाढ़ के प्रारम्भिक काल मे ही क़लमे तैयार करनी चाहिएं।

(३) युक्ति की जानकारी :—बिना क्रियात्मक अनुभव के सभी प्रकार की क़लमे तैयार नही की जा सकती और कौन सी रीति से किस जाति के पेड़ की क़लम अच्छी तैयार होगी यह भी भलीभाँति जानना चाहिए। इसके सिवाय एक वृक्षी क़लम करना तो कुछ सहल है, परन्तु जहाँ दो वृक्षो का संलग्न करना होता है वह क्रिया जरा कठिन है। इसके सिवाय यह जानना भी अवश्यक है कि कौन से फल के वृक्ष की क़लम किस ऋतु मे और कौनसी क्रिया से जल्दी तैयार हो सकती है। विजातीय जातियो के संग्लन मे किस किस जाति के पेड़ो का मेल हो सकता है।

स्मरण रहे कि प्रत्येक पौधे में छाल के नीचे एक प्रकार के वृद्धि कोष (Cambium cells) रहते है। पौधो की बाढ़ इन्हीं कोष द्वारा होती है। संयोग मे मुख्य कर्तव्य इन्हीं का होता है इसलिए जब दो पौधों के अङ्ग मिलाये जायँ तो इस रीति से मिलाना चाहिए कि वृद्धि कोष बराबर मिल

जायँ। उदाहरण के लिए भेंट क़लम लीजिए। जब यह क़लम बाँधी जाय, तो पौधों के अंगों को इस प्रकार छीलना चाहिए कि छीले हुए भाग बराबर मिल जायँ। कटाव कम ज्यादा होने से उनका ठीक मेल नहीं होगा तो पौधे लगेंगे ही नहीं और यदि थोड़ा बहुत मेल होकर लग जायँगे तो नया पौधा स्वस्थ नहीं होगा, इसलिए क़लम तैयार करने की युक्तियों का निजी अनुभव होना ही चाहिए।

(४) बाद की देखभाल:—क़लमों को रोग अथवा कीट या हवा से हानि नहीं पहुँचे, आवश्यकतानुसार उन्हें पानी मिलता रहे और जाड़े में ठण्ड से बचाने की क्रियाओं की ओर ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है।

क़लम बांधने के औज़ार और अन्य वस्तुएं :—

(१) क़लम करने की छुरी (A pruning knife)— यह एक मोटे दस्ते वाला तेज़ चाकू होता है। किसी भी मज़बूत तेज़ चाकू से काम चल सकता है।

(२) चश्मा चढ़ाने की छुरी (A budding knife) यह एक छोटा सा तेज़ चाकू होता है जिसके दस्ते की नोक चपटी और पतली होती है। इस नोक से बीजू पौधे की छाल चश्मा बिठलाने के लिए सहूलियत से ऊपर उठायी जा सकती है।

(३) मोम रञ्जित कपड़े की धज्जियाँ, फीता या मोटी सुतली जिससे क़लमें बाँधी जायँ और पौधे कटने न पावें।

मोम रञ्जित कपड़ा आसानी से तैयार किया जा सकता है। किसी मजबूत कपड़े पर गरम गरम मोम लगा देने से ठंडा होने पर वह कपड़े मे रञ्ज जाता है। फिर इस कपड़े की आधे इञ्च से एक इञ्च चौड़ी धज्जियाँ फाड़कर काम में लायी जा सकती हैं। सुतली की अपेक्षा कपड़ा उत्तम होता है इससे पकड़ भी अच्छी हो जाती है और पौधे की छाल कटने नहीं पाती।

(४) **क़लमी मिट्टी और मोम :—** जब क़लमें बाँधी या लगायी जाती हैं तो जहाँ पर वे काटी या छीली जाती है वहाँ पौधों पर घाव हो जाते हैं। ऐसे घाव यदि वैसे ही छोड़ दिये जाँय तो उन पर पानी लगने से व्याधियां आक्रमण कर बैठती हैं या कीट ही अपनी करतूत कर बैठते हैं और कुछ समय में पौधे मर जाते हैं। ऐसे शत्रुओ से बचाने के लिए घाव पर मिट्टी या मोम लगाना पड़ता है। मिट्टी विना मूल्य के तैयार हो सकती है और मोम में कुछ व्यय करना पड़ता है परन्तु मोम एक वार तैयार करने से वहुत दिनों तक चल जाता है। मिट्टी बार वार तैयार करनी पड़ती है।

क़लमी मिट्टी :— दो भाग मिट्टी में एक भाग गोवर, कुछ महीन भूसा और आवश्यकतानुसार जल मिलाकर उसे ऐसी वना लेनी चाहिए कि जिसमे वह पौधो पर चिपक सके। भूसा और गोवर इसलिए मिलाते हैं कि जिसमे धूप से मिट्टी फटने न पावें। कहीं कहीं भूसा न मिलाकर पुरानी रुई भी मिला देते हैं और मिश्रण को सड़ा कर काम में लाते है।

क़लमी मोम :-यह राल और मोम के मिश्रण से बनाया जाता है। चार भाग राल, एक भाग मोम और एक भाग अलसी के तेल का मिश्रण अच्छा होता है। इन तीनो को गरम कर लेने से मोम तैयार हो जाता है। चूँकि राल के आग पकड़ने का भय रहता है इसलिए एक चौड़े बर्तन में पानी रखकर उसे उबालना चाहिए और उबलते हुए पानी में उपरोक्त मिश्रण का बर्तन रखकर गरम करना चाहिए। जब मिश्रण अच्छा बन जाय तो इसे ठंडा करके रख सकते है।

क़लमें तैयार करने की साधारण युक्तियां—

एक वृन्ती कलमें—

डाली या क़लम लगाना :-(Cutting) कलमी पौधे तैयार करने की सब से सरल युक्ति यही है। कही से अच्छे पेड़ की एक साल की आयु की डाली काटकर जहाँ चाहे वहां खेत में या नर्सरी में लगा दी जाती है। ऐसी क़लमे बहुधा बरसात मे लगायी जाती हैं और वे जल्दी लग भी जाती है। इन्हे बहुधा दीमक (White-ants) हानि पहुँचाती है इसलिए जहां दीमक का भय हो वहां गमलों मे या बक्सों में लगाकर उन्हे मचान पर रक्खेगें तो उत्तम होगा।

कलम की लम्बाई इतनी होनी चाहिए कि जिसमें चार पांच आंख या चश्मे (Buds) हों (जहाँ शाख से पत्तों का मेल होता है वहाँ चश्मे होते हैं) अर्थात् करीब पाँच पत्ते होने चाहिएं।
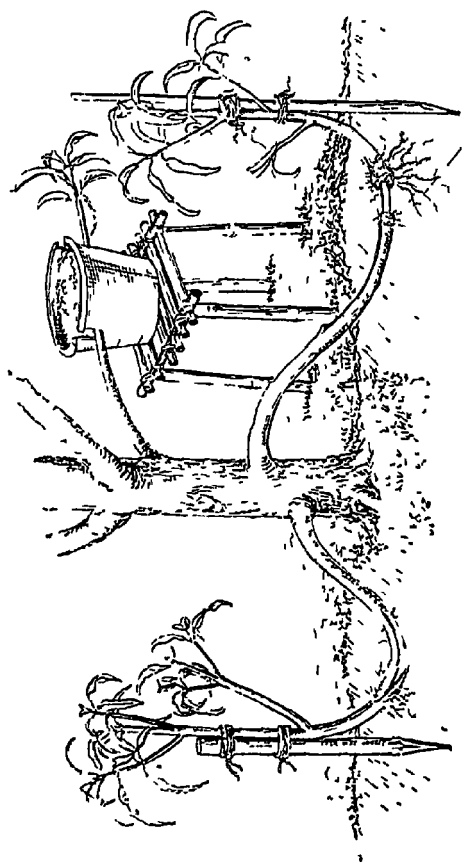
दाब कलम

बहुधा एक बीते की लम्बाई काफी होती है। कलम के दोनो मुंह तिरछे कटे हुए होना चाहिए। नीचे का कटाव पत्ते के मेल की जगह से कुछ नीचे से होना चाहिए। क़लम लगाते समय सीधी न लगाकर टेढ़ी लगायी जाय तो अच्छी जमती है। क़लम की दो आंख ज़मीन में और तीन ऊपर होनी चाहिए और ऊपर वाली तीनों आंख ऊपर नीचे यानी ज़मीन और आसमान की तरफ न रहकर बाजू मे रहनी चाहिए। इस प्रकार से लगायी हुई क़लम को यदि पानी मिलता रहे तो वह पन्द्रह बीस दिन में जड़ों के अङ्कुर फेंक देती है। नासपाती, अंजीर आदि की क़लमें इस प्रकार से लगायी जायी हैं।

दाब क़लम :–(Layering) इसमें लगभग एक साल की आयु की टहनी को झुकाकर उसके बीच के भाग को मिट्टी में दबा देते हैं। टहनी ज़मीन की सतह के पास हुई तो ज़मीन में और नही तो मचान पर गमले रखकर उनमे लगा दी जाती है। पन्द्रह बीस दिन से ढाई महीने मे पौधो की जाति अनुसार ऐसी क़लम तैयार हो जाती है। यदि टहनी सख्त हो तो लगाते समय उस पर की क़रीब एक इञ्च जगह की छाल चाकू से छुड़ा ली जाती है अथवा टहनी मे एक इञ्च लम्बा चीरा देकर नीचे के भाग को बीचों-बीच से काट देते है और फिर डाली झुकाकर कर दबा दी जाती है। डाली हिलने डुलने अथवा ऊपर उठने न पावे इसलिए एक खूंटा गाड़कर उससे बांध दी जाती है। जब लग जाती है तो मुख्य पौधे अथवा पेड़ से पृथक कर दूसरी जग़ह

लगा देते हैं। अंङ्गूर, अञ्जीर आदि की क़लमें इस प्रकार से लगायी जा सकती है। दाब क़लम गमले में भी लगायी जा सकती है। इसके लिए सहल रीति यह होगी कि एक गमले में आमने सामने की बाजू में दो कटाव ऐसे बनाये जायँ कि उनमें डाली ठीक से जम जाय। कटाव तीन चार इञ्च गहरे होने चाहिएं। जब छीली हुई डाली गमले में जमा दी जाय तो चिकनी मिट्टी से कटाव बन्द कर देना चाहिए। गमले में मिट्टी बालू और पत्तों का मिश्रण भरना चाहिए। पानी देने के लिए एक महीन छेद वाला बर्तन गमले पर रख दिया जाय और उसमें नित्य पानी भर दिया जाय तो क़लम को आवश्यतानुसार पानी मिलता रहेगा।

अंटा बाँधना (Gooty) :— इसे भी एक प्रकार की दाब क़लम ही माननी चाहिए क्योंकि दोनों में जड़ें फिंकवाने की रीति एक ही है। दाव कलम में टहनी मिट्टी में दबायी जाती है और इसमें मिट्टी टहनी पर लगायी जाती है। इसमे एक साल की आयु की आधा इञ्च मोटी टहनी पर एक दूसरे से एक इञ्च की दूरी पर दो गोल कटाव इतने गहरे लगाये जाते है कि चारों ओर से सिर्फ छाल ही कटे। फिर उस छाल पर एक लम्बा चीरा लगाकर उसे हाथ से या चाकू से निकाल देना चाहिए ताकि एक इञ्ज जगह की छाल चारों ओर से छूट जाय। इस खुली हुई जगह पर मिट्टी बांध देने से वह डाली नयी जड़ें फेंक देती है। मिट्टी बांधने की सरल रीति यह

गूटी

है कि एक आठ दस इञ्च लम्बे चौड़े चट्टी के टुकड़े का एक कोना कटाव से दो इञ्च की दूरी पर धड़ की तरफ इस तरह से बांध दो कि फैलाने से चट्टी कुप्पाकार (Funnel shaped) हो जाय। फिर उसमें मिट्टी भर कर चट्टी को लपेट करके दूसरा मुंह दूसरी ओर बांध दो। मिट्टी इतनी भरनी चाहिए कि कटाव के चारो ओर क़रीब डेढ़ दो इञ्च हो जाय। मिट्टी बहुत गीली नहीं होनी चाहिए। वह सिर्फ इतनी गीली हो कि जोर से दबाने से बँध जाय और छोड़ने पर जरा से दबाव से फिर बिखर जाय। अधिक गीली मिट्टी की अपेक्षा ऐसी मिट्टी लगायी जाय तो जो जड़े फेकी जाती हैं वे स्वस्थ और मोटी होती हैं। मिट्टी को बांधने के पश्चात् उसके ऊपर की शाख में अथवा एक बांस गाड़कर उसमें एक मिट्टी का वर्तन* जिसके पेंदे में एक छेद हो बांध देना चाहिए। छेद मे एक कपड़े का टुकड़ा लगा देना चाहिए जिसमें पानी धीरे २ गिरता रहे। नित्य प्रति इस वर्तन मे पानी भर दिया जाय तो गूटी की सिंचाई आवश्यकतानुसार होती रहेगी और मिट्टी के गीली रहने से टहनी जड़ें फेंक देगी। जब जड़े चट्टी से बाहर निकलती हुई दिखें तो उसके

---

* मिट्टी के वर्तन को एवज में मोटे बास की नली भी काम में लायी जा सकती है। बास की नली को इस प्रकार काटनी चाहिए कि उसमें एक तरफ़ की गठान बनी रहे और दूसरी तरफ़ की कट जाय। जिधर गठान रहे उधर छेद करके उसमें कपड़े का टुकड़ा लगा देना चाहिए। ऐसा करने से न तो वर्तन के फूटने का डर है और न विशेष व्यय का ही विचार है।

दो सप्ताह बाद पेड़ से टहनी को पृथक करके नर्सरी में लगा देना चाहिए। ऐसी क़लमें दो ढाई महीने में तैयार हो जाती हैं। नीबू, लीची, लोकाट आदि की क़लमें इस रीति से अच्छी लग जाती हैं।

द्विवृत्ती क़लमें :—इसमें स्वजातीय या विजातीय पौधों का संयोग किया जाता है जिससे कई प्रकार के लाभ होते हैं। भारतवर्ष में अभी ऐसे प्रयोग बहुत कम किये गये हैं परन्तु अन्य देशों में बहुत हुए हैं।

इसमें इच्छानुसार पौधा छोटा बड़ा किया जा सकता है जैसे नासपाती की क़लम बीही (Quince) पर लगायी जाय तो पेड़ छोटे हो जाते हैं।

पौधों की मिट्टी तथा जलवायु अपनाने की योग्यता बढ़ जाती है। बहुधा ऐसा देखा गया है कि बहुत अच्छे स्वस्थ पौधे भी स्थानान्तर करने से नयी भूमि या जलवायु में मर जाते हैं। ऐसी स्थिति में बीजू पौधा जहां नया पौधा लगाना हो उस स्थान से लाकर क़लम बांधी जाय और क़लम लग जाने पर वहां वापिस भेज दिया जाय तो वह अच्छा लगेगा। इस रीति से जब एकाद पेड़ तैयार हो जाय तो फिर कलम बांध कर उस स्थान पर दूसरे पेड़ आसानी से तैयार किये जा सकते हैं।

पौधो के रूप रंग और स्वाद मे भी परिवर्तन किया जा सकता है। जैसे संतरे का चश्मा जमेरी पर बांधा जाय तो ढीले छिलके वाले, कुछ बड़े लेकिन ज़रा खट्टे फल होते हैं। पैदावार भी अधिक होती है और फलों का रंग लाली लिये हुए होता है।
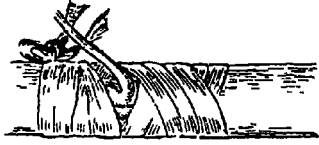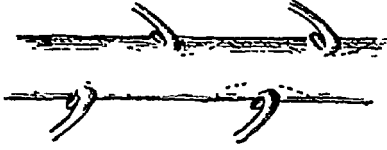
१. चश्मा निकालने की डाली
२. बीजू पौधे का धड
३. चश्मा
४. चश्मा लगाया हुआ पौधा
५. बांधा हुआ तैयार चश्मा
६. डाली जिससे ट्यूब्यूलर और रिंग चश्में निकाले गये हैं
७ ऊपर ट्यूब्यूलर चश्मा नीचे रिंग चश्मा
८. बीजू पोधा जिसपर चश्में चढाये गये हैं

इसके विपरीत जब मीठे नीबू पर चश्मा चढ़ाया जाय तो फल मीठे, पीले रंग के और चिपके हुए छिलके वाले होते हैं। पैदावार कुछ कम होती है।

चश्मा चढ़ाना:–(Budding) इस रीति में यह प्रयत्न किया जाता है कि किसी उत्तम पेड़ की टहनी की आँख (चश्मा) लेकर उसी जाति के अथवा दूसरी जाति के छोटे पौधे पर लगा दी जाती है। आँख नयी बढ़ती हुई स्वस्थ टहनी से लेनी चाहिए। एक अच्छी टहनी काटकर बीजू पौधे के पास लेजाकर वहाँ आँख निकालते हैं।

बीजू पौधे के धड़ पर ज़मीन से दो तीन इञ्च ऊँचा क़रीब डेढ़ इञ्च लम्बा, सिर्फ छाल कटे इतना गहरा एक चीरा लगाया जाता है और पेड़ झुकाकर चाकू (Budding knife) के पतले दस्ते से छाल और उसके नीचे के काष्ठ का सम्बन्ध छुड़ा दिया जाता है। इस खुली हुई जगह में टहनी की आंख बिठला दी जाती है जिसमें बीच के काष्ठ के साथ उसका सम्बन्ध हो जाय। फिर पौधे को सीधा करके कपड़े की धज्जी से मज़बूत बांध देना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि आंख खुली रहे, पट्टी के नीचे दब न जाय। बांधने के पश्चात् क़लमी मिट्टी या मोम लगा देना चाहिए।

आँख निकालना—लायी हुई स्वस्थ टहनी पर तेज़ चाकू इस तरह चलाओ कि पत्ते के जोड़ की जगह से आध इञ्च ऊपर से चल कर बीच के काष्ठ का कुछ भाग लेता हुआ पत्ते से पौन इञ्च

नीचे निकल आवे। फिर कटे हुए काष्ठ को छुड़ाकर छाल ऐसी बना लेनी चाहिए कि वह पौधे पर जहां बिठलाना हो ठीक से बैठ जाय। पत्ते को आधा काटकर नीचे का भाग लगा रहने देना चाहिए। जब यह पत्ता चार पाँच रोज़ में अपने आप गिर जाय तो समझ लो कि चश्मा लग गया। यदि सूखकर वहीं चिपका रहे तो सफलता सन्देह जनक होगी। चश्मा जहाँ तक हो उत्तर की ओर चढ़ाना चाहिए और चढ़ाने के बाद पौधे पर कुछ छाया का भी प्रबन्ध करना चाहिए। इस प्रकार से चढ़ाया हुआ चश्मा दो तीन सप्ताह में जब नया कोंपल फेंक दे तो बांध को काट देना चाहिए और बीजू पौधे का ऊपरी भाग चश्मे की जगह से पांच छः इञ्च की ऊँचाई से काट दिया जाय तो ठीक होगा। इस पांच छः इञ्च के ठूंठे के साथ नया कोंपल बाँध दिया जाय तो वह सीधा हो जायगा और जब वह सीधा हो जाय तो यह ठूंठ भी काट दिया जा सकता है। इस प्रकार से संतरे की क़लमें लगायी जाती हैं।

उपरोक्त रीति में चीरा सीधा लगाया था परन्तु सहूलियत के लिए जिसमें छाल आसानी से छूट जाय और चश्मा सहूलियत से बिठलाया जा सके यह चीरा अंग्रेज़ी अक्षर टी (T) के आकार का या उलटी टी (⊥) के आकार का अथवा धन या गुणा के चिन्ह (+ X) का लगाया जा सकता है, परन्तु इन सब से लम्बा चीरा ही उत्तम है क्योंकि उसमें पौधा स्वयम् अपनी छाल से दबाकर चश्मे को पकड़ लेता है। इस प्रकार के

चश्मे को अंग्रेजी मे शील्ड वडिग (Shield budding) कहते हैं।

इनके सिवाय दो लम्बे और एक आड़ा चीरा लगाकर छाल को उलट करके भी चश्मा बिठलाया जाता है और फिर छाल को सीधी करके बांध सकते हैं; इसको अंग्रेजी में प्लेट वडिंग (Plate budding) कहते है। जब चीरा अंग्रेजी अक्षर एच (H) के आकार का लगाया जाता है और छाल ऊपर नीचे दोनो ओर लौटायी जाती है तो उसे एच-बडिंग कहते हैं। जब छाल सहूलियत से नही निकलती है तो चाकू से वर्गाकार रूप मे छीलकर उसे बिलकुल छुड़ाकर चश्मा बांधना पड़ता है फ्लूट वडिग (Flute budding)—जब चारों ओर की छाल छुड़ाकर चश्में वाली छाल इस तरह काटकर बिठलायी जाय कि सब जगह ढक ले तो उसे रिंग वडिग (Ring budding) कहते हैं और जब चश्मे की छाल इस प्रकार निकाली जाती है कि वह काष्ठ छोड़ कर नली के रूप मे ऊपर निकल आवे और पौधे की टहनी पर वैसे ही उतार कर बिठला दी जाय तो उसे ट्यूब्यूलर बडिंग (Tubular budding) कहते हैं। रिंग या ट्यूब्यूलर वडिंग आडू, द्वारा आलूबुखारा आदि की क़लमें लगायी जाती हैं। चैत्र मास मे जब आडू की नयी टहनियां निकलती हैं उस वक्त जो चश्मा लेना हो उसके ऊपर नीचे दो गोल चीरे इस प्रकार लगा दिये जायँ कि ऊपर का भाग कट जाय और नीचे का कटाव सिर्फ ३ १ की गहराई इतना हो। फिर बायें हाथ से टहनी को पकड़ कर

दाहिने हाथ के अंगूठे और पहली उंगली से चश्मा खींचा जाय तो वह जल्दी से नली के रूप में निकल आता है। इसी तरह से बीजू पौधे का चश्मा छुड़ाकर उस जगह पर नया चश्मा उतार देना चाहिए। दो तीन सप्ताह में ऐसा चश्मा लग जाता है।

भेट क़लम (Inarching)—इसमें अच्छे गुण वाले पेड़ की टहनी साधारणतः स्वजातीय और कभी कभी विजातीय पौधे के साथ बांध दी जाती है। आम के पौधे के साथ आम की टहनी का मेल स्वजातीय मेल का उदाहरण है। सपाटू की टहनी का महुआ या खिरनी के पौधे के साथ बांधना विजातीय पौधों का मेल कहा जा सकता है। बीजू पौधा या तो गमले में लगाया जाता है या जिस पेड़ से क़लम बांधना होती है उसके नीचे मिट्टी की छोटी ढेरी लगाकर उसमे लगा दिया जाता है। जब टहनी ऊँची हो अथवा क़लमी पौधा दूर भेजना हो तो गमले में लगाना चाहिए अन्यथा पेड़ के नीचे लगाना ही उत्तम होता है। इस प्रकार की क़लमें दो तीन महीने में तैयार होती हैं इसलिए यदि गमले में बीजू पौधा लगाया जाय तो उसे बराबर पानी देना पड़ता है और कभी कभी खाद भी देना पड़ता है। मिट्टी मे लगाए हुए पौधों को इतना जल्दी २ पानी नहीं देना पड़ता और चूंकि उनकी जड़ों के फैलाव के लिये काफी स्थान मिलता है इस-लिए खाद भी नहीं देना पड़ता। जो पौधे बाहर भेजे जाते हैं उनकी जड़ें ज्यादा फैलने न पावें इसलिए गमले में लगा देते हैं। जब क़लम बांधी जाने वाली टहनी बहुत ऊपर हो तो मोटी शाख
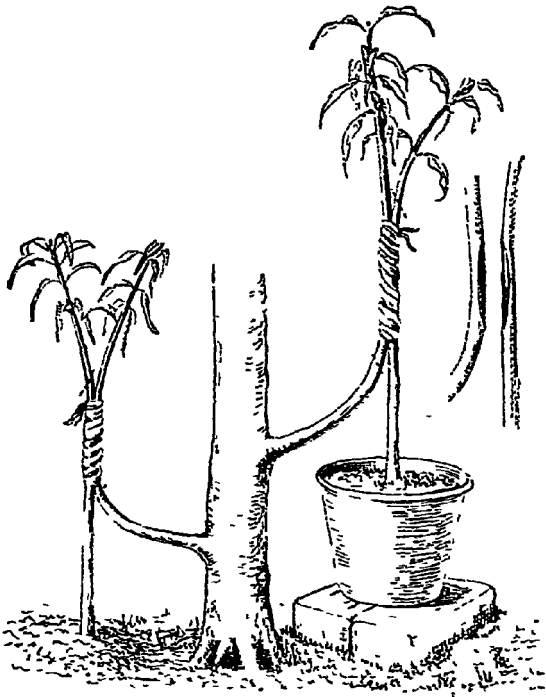
भेट कलम

से गमला बांध दिया जा सकता है अथवा मचान पर रक्खा जा सकता है।

बाँधने की क्रिया :—बीजू पौधे के धड़ इतनी मोटी एक साल की आयु की स्वस्थ टहनी चुनकर दोनो को मिलाकर देख लेना चाहिए। बाद दोनो पर चाकू से दो निशान ऐसे लगाये जायँ जो एक दूसरे से दो इञ्च की दूरी पर हो। फिर पौधे पर ऊपर के कटाव से चाकू लगाकर उसे नीचे के कटाव तक इस भांति लाओ कि छाल के साथ कुछ काष्ठ भी चला आवे। उसी भांति क़लमी टहनी को भी छील दो और फिर पौधा और टहनी के छीले हुए भागो को बराबर मिला कर उन्हें मोम-रञ्जित कपड़े की धज्जी या रस्सी से बांध दो। स्मरण रहे कि भाग बराबर मिल जायँ, नही मिलने से या तो टहनी जुड़ेगी ही नही और यदि जुड़ी भी तो पौधा मज़बूत नही होगा। ज़ोर की हवा लगने से टूट जायगा। बराबर मिल जाने से छाल के नीचे के बाढ़ कोष (Cambium cells) मिल जाते हैं और संयोग जल्दी हो जाता है। बांधने के पश्चात् बांध पर क़लमी मोम या क़लमी मिट्टी लगा देनी चाहिए। जब मेल ठीक हो जाय तो बांध के ऊपर से बीजू के सिर को और नीचे से टहनी को काटकर पौधो को नर्सरी में हटा देना चाहिए। जब पौधा नर्सरी मे लगाया जाय उस वक्त पुराने बाँध को काटकर नया बाँध देना चाहिए ताकि बढ़ते हुए पौधे की छाल पुराने बांध से कट न जाय। जब अच्छी तरह से सम्बन्ध हो जाय तो रस्सी काटने के बाद चाकू से छील कर निशान मिटा

देना चाहिए। उपरोक्त रीति से आम और सपाटू की कलमें बांधी जाती हैं।

क़लम बिठाना या पैबन्द बांधना (Grafting) :—इस क्रिया में बीजू पौधे का सिर काट दिया जाता है और उस पर किसी चुने हुए पेड़ की टहनी लगा दी जाती है। जिस प्रकार चश्मा चढ़ाने की कई युक्तियां हैं उसी भांति क़लम बिठाने की भी कई युक्तियां हैं जिनमें कि मुख्य निम्न लिखित हैं।

(१) जड़ पर क़लम बिठाना (Root grafting)।

(२) जड़ और धड़ के मेल की जगह बिठाना (Crown grafting)।

(३) धड़ पर बिठाना (Stem grafting)।

(४) शाखाओं पर लगाना (Top working)।

इनमें से पहली दो युक्तियां बहुत कम काम में लायी जाती हैं; दूसरी दो से कभी कभी लाभ उठाया जाता है। पुराने संतरे के पेड़ मे नयी टहनियां तीसरी रीति से और पुराने अथवा बंध्या आम से फल प्राप्त करने के लिए चौथी युक्ति काम में लायी जाती है। इन सब मे मुख्य अभिप्राय यह रहता है कि बीजू पौधे या पेड़ के बाढ़ कोष का क़लम के बाढ़ कोष से मेल हो जाय और नयी टहनी पुराने पेड़ के धड़ द्वारा अपना पोषण कर अच्छे फल देने लगे।

जब क़लम और स्तम्भ की मोटाई एक सी होती है तो निम्न लिखित क्रियाओं द्वारा सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।
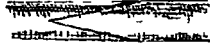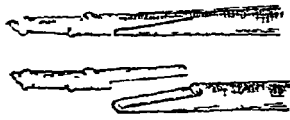
१. साधारण क़लम
२. जीभी क़लम
३. काठी क़लम
४. धड़ चीर कर बिठलायी हुई क़लमें
५. क़लमी मोम डाला गया है
६. बाजू से बिठलायी हुई क़लम

साधारण क़लम (Splice grafting) स्तम्भ और क़लम को तिरछे काट से मिलाना।

जीभी क़लम (Tongue grafting):—उपरोक्त रीति से काटकर दोनो के बीच में लम्बा चीरा लगाकर इस रीति से मेल किया जाय कि जिसमे तीन सतह हो जांय अथवा स्तम्भ में नाली का आकार बनाकर उसमे बैठने जैसी क़लम को छील कर लगाना यानी उलटी काठी क़लम लगाना।

काठी क़लम (Saddle grafting):—स्तम्भ के दोनों बाजू से छुरा चलाकर बीच में पैनी धार सी बनाना और उस पर बैठने जैसा कटाव क़लम में लगाकर बिठलाना।

जब धड़ मोटा होता है तो उसे चीरकर उसमे एक या दो क़लम बाजू पर लगा दी जाती हैं (Cleft grafting) अथवा ऊपर से चाक़ू लगाकर छाल छुड़ाकर उसमें क़लम बिठला दी जाती है (Rind or side grafting)।

पुराने पेड़ की टहनियो मे नयी क़लमें जब क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग या रिण्ड ग्राफ्टिंग द्वारा बांधी जाती हैं तो उस क्रिया को (Top working) टॉपवर्किंग कहते हैं।

उपरोक्त रीति में से किसी भी क्रिया द्वारा जब क़लम बिठला दी जाती है तो फिर मोम-रञ्जित धज्जी या रस्सी से बांध दी जाती है और घाव पर कलमी मोम या मिट्टी लगादी जाती है।

टॉपवर्किंग :—भारतवर्ष में यह क्रिया पुराने आम के वृक्षों मे नयी टहनियां लगाने के लिए कहीं कहीं ठीक सिद्ध हुई

है। इसके लिए पुराने पेड़ की काट छांट इस प्रकार की जाती है कि जिसमें नयी टहनियां जमने पर पेड़ का आकार ठीक बना रहे। जिन टहनियों में क़लमें बांधी जाती हैं वे क़रीब आधा इञ्च मोटी होनी चाहिए। क़लमें बांधने वाला पहले आवश्यकतानुसार क़लमें तैयार कर उन्हे पानी में भिगोकर गीले कपड़े में रख लेता है। फिर वे क़लमें, एक तेज़ चाक़ू, रस्सी या कपड़े की धज्जियां और एक हाथ लम्बा सोटा एक टोकरी में रखकर अपने साथ पेड़ पर ले जाता है। जिस टहनी पर क़लम बांधनी होती है उसपर चाक़ू रखकर सोटे से ठोकता है, टहनी फट जाती है जिसमें क़लम बिठलाकर चाक़ू खींच लेता है और बांध देता है। बांधने के बाद क़लमी मोम लगा देता है।

पौधे लगाने का समय :–जहॉं तक हो पौधे उसी दिन लगा देना चाहिए जिस दिन वे नर्सरी से हटाये जायँ। यह क्रिया वही सम्भव है जहाँ पौधों का जन्म-स्थान और स्थायी स्थान एक दूसरे के निकट हो। यदि पौधे बाहर भेजना हो अथवा अन्य किसी कारण से उसदिन न लगाये जा सकें तो उनके संरक्षण का पूर्ण प्रबन्ध होना चाहिए ताकि उनमे ऐसी निर्बलता न आ जाय कि वे सम्हल ही न सके। प्रत्येक पौधे की जड़ो के साथ कुछ मिट्टी रहना बहुत जरूरी है और मिट्टी सूखकर बिखर न जाय इसलिए घास, चट्टी या केले की छाल मे बांधकर रखना चाहिए और थोड़ा २ पानी भी देते रहना चाहिए जिससे मिट्टी मे तरी बनी रहे। बाहर से आये हुए पौधो को जल्दी लगाने का अवकाश

न हो अथवा स्थायी भूमि तैयार करने में विलम्ब हो या वे कमज़ोर दिखे तो उन पौधो को तुरन्त खोल कर नर्सरी में लगा देना चाहिए। फिर जब लगाने का समय आ जाय अथवा भूमि तैयार हो जाय तो नर्सरी से उठाकर निर्धारित स्थान पर लगा सकते हैं।

पौधे लगाने का साधारणतः उत्तम समय बरसात और शीत-काल का प्रारम्भिक या अन्तिम समय ठीक होता है। मध्य जाड़े में लगाने से अधिक सर्दी या पाला पड़ने से पौधों के मर जाने का भय रहता है। गर्मी में सिंचाई का पूर्ण प्रबन्ध हो तो जाड़े के अन्त मे और नही तो बरसात में ही लगाना चाहिए। आड़ू, आलूबुखारा आदि जो पेड़ जाड़े में अपने पत्ते गिरा देते हैं उन्हे जाड़े ही मे लगाना ठीक है।

पौधे लगाने की रीति :—पौधों की जड़ के फैलाव के आकारानुसार दो-तीन फीट व्यास के और उतने ही गहरे गढ़े निर्धारित स्थान की दूरी पर गर्मी में अथवा लगाने के कुछ समय पूर्व तैयार करा लेना चाहिए। खोदी हुई मिट्टी को दो-तीन सप्ताह तक धूप और हवा खिलाने के पश्चात् नीचे की दो तिहाई मिट्टी में खाद मिलाकर उसे गढ़े मे डाल करके ऊपर से दूसरी एक तिहाई मिट्टी भरवा देनी चाहिए। प्रत्येक गढ़े की मिट्टी मे जैसा कि खाद के वर्णन मे दिया गया है पेड़ की उपयोगितानुसार बीस सेर से एक मन सड़ा हुआ गोबर का खाद और दो ढाई सेर हड्डी का चूर्ण मिलाना चाहिए। फलो के लिए हड्डी का खाद बड़ा अच्छा

होता है। क़रीब क़रीब सभी प्रकार के फलों को उपरोक्त मिश्रण से लाभ पहुँचता है।

खाद मिला देने के पश्चात् गढ़ों को भरवा देना चाहिए और जब दो एक बारिश के बाद मिट्टी जम जाय तब पौधों की जड़ों की जमावट इतनी मिट्टी खोदकर पौधे लगाने चाहिएं। पौधे लगाते समय यह देखना चाहिए कि जड़ें मुड़ने न पावें और थोड़ी थोड़ी मिट्टी डालकर वे दबा दी जायँ ताकि मिट्टी के साथ जड़ों को पकड़ अच्छी हो जाय और कोई जगह ख़ाली न रहे। जड़ के निकट ख़ाली जगह रह जाने से वह सूख जाती है। इस रीति से जब गढ़ा भर जाय और मिट्टी दबा दी जाय तो पानी देकर बाद में दो-तीन इञ्च मोटी तह ढीली मिट्टी की ऊपर दे देनी चाहिए। इस तह से एक तो धूप से पानी उड़ने नही पायेगा और दूसरे यदि कहीं मिट्टी दबी तो इस मिट्टी से वह जगह भर जायगी और सब मिट्टी ज़मीन के सतह के बराबर हो जायगी।

सहारा (Staking) :—पौधे लगाने के पश्चात् वे सीधे खड़े रहे और हवा से टेढ़े न हो जायँ अथवा गिर न पड़ें इसलिए सहारे की आवश्यकता होती है। इसके लिए पौधे के धड़ से दस बारह इञ्च की दूरी पर दोनों ओर दो मजबूत बांस या लकड़ियां गाड़नी चाहिएं और उनके ऊपरी मुँह एक दूसरी लकड़ी से जोड़ देने चाहिएं। इस लकड़ी के बीचो बीच यदि पौधा बाँध दिया जाय तो वह सीधा बना रहेगा। यह कार्य एक लकड़ी से भी हो सकता है परन्तु दो लगाना ठीक होता है। यदि एक ही

लगाना हो तो जिस ओर से हवा का रुख हो पौधे के उसी ओर गाड़कर पौधे को ढीली रस्सी से बांध देना चाहिए। यदि दूसरी ओर गाड़ना हो तो लकड़ी को जमीन में तिरछी गाड़कर उसके दूसरे मुँह पर पौधे को बाँध देना चाहिए। इस प्रकार सहारे का प्रबन्ध हो जाने पर जिस रस्सी से पौधे का धड़ बाँधा जाय उसे कभी कभी खोलकर ढीला करते रहना चाहिए नही तो पौधे में निशान पड़ जायँगे और यदि अधिक दिनों तक विना देखे छोड़ दिया जायगा तो पौधों मे कटाव लग जायगा और जोर की हवा आने से उस स्थान पर से पौधा टूट भी सकता है।

प्रकरण ६

पौधों का क्रय विक्रय और चालान

बाग़ीचे के लिए जो पौधे ख़रीदे जायँ बड़ी सावधानी से ख़रीदने चाहिएं। इनकी ऐसी फ़सल नहीं होती कि एक साल ठीक न हुई तो दूसरे साल बीज बदल दिया। लगातार पाँच छः साल के परिश्रम के बाद पौधे फल देना प्रारम्भ करते हैं और यदि उस समय पौधे संतोपजनक सिद्ध न हुए तो तुरन्त बदले नहीं जा सकते इसलिए जब पौधे खरीदे जाएँ तो बहुत ही भरोसे वाले व्यवसायी से खरीदने चाहिएं। जहाँ तक हो स्ययम् जाकर पौधो की स्थति जाँचनी चाहिए। प्रारम्भ में पाँच सात रुपये अधिक खर्च कर देना भविष्य के लिए कई गुणा लाभप्रद होता है।

पौधे चुनते समय यह देखना चाहिए कि वे मज़बूत और स्वस्थ हो, पत्तों का रंग हरा और चमकीला हो, क़लम भली भाँति लगी हुई या जुड़ी हुई हो और पौधों की बाढ़ साधारण हो। यदि क़लम भली भांति जुड़ी हुई नही होगी तो गर्मी में ऊपरी भाग सूख जायगा और वह बीजू पौधे से छूटकर गिर जायगा। चश्मा चढ़ायी हुई क़लम लेना हो तो यह देखना चाहिए कि चश्मा बीजू पौधे के धड़ पर ज़मीन से एक फुट की ऊँचाई के अन्दर

ही चढ़ाई हुई हो। कुछ लोग कृत्रिम खाद देकर पौधों की बाढ़ की स्वाभाविक शक्ति को उत्तेजित कर देते हैं जिससे पौधे उस स्थान पर तो अच्छे मालूम होते हैं परन्तु जब नये स्थान पर लगाये जाते हैं तो बिगड़ जाते हैं इसलिए पौधा चुनते समय साधारण बाढ़ वाला चुनना चाहिए।

बहुत से लोग समझते हैं कि अधिक आयु वाले क़लमी पौधे मँगवाये जायँ तो फल जल्दी प्राप्त होंगे परन्तु ऐसा करना ठीक नहीं है। ऐसे पौधों की जड़ें स्वाभाविक रीति से बढ़ने नहीं दी जाती क्योंकि यदि स्वाभाविक रीति से बढ़ने दी जायँ तो भेजते समय उनके साथ बहुत मिट्टी भेजना पड़ेगी और खोदने में भी असुविधा होगी। ऐसे पौधों की जड़ें अधिक दूरी तक फैलने न पावें इसलिए व्यवसायी लोग उन्हें बार बार खोदकर नये स्थान में लगाते रहते हैं और कुछ जड़ें भी काटते जाते हैं। ऐसा करने से पौधा जीवित तो रहता है परन्तु उसके पोषण के मुख्य अंग अर्थात् जड़ें कमजोर हो जाती हैं और जब स्थानान्तर किया जाता है तो पहले तो उसके लगने में ही सन्देह है और यदि लग जाय तो जैसा चाहिए वैसा पौधा होना तो असम्भव ही समझना चाहिए।

ऐसी स्थिति में जो क़लमी पौधे ख़रीदे जायँ उनकी आयु लगभग दो वर्ष की होनी चाहिए। जहाँ तक हो एक वर्ष से कम आयु का पौधा भी नहीं खरीदना चाहिए। यदि पौधे को अपनी आयु का प्रथम वर्ष जन्मभूमि में ही बिताने का अवसर दिया

जाय तो वह साल भर के तीनों मौसम पार करके स्वस्थ हो जाता है और नये स्थान के वतावरण को अपनाने की शक्ति भी प्राप्त कर लेता है।

इसी प्रकार पौधों के विक्रेताओं को भी ध्यान रखना चाहिए कि अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए अपना माल भी बहुत भरोसे लायक हो। विक्रेताओं को चाहिए कि पौधो के चालान के लिए जिन जिन वस्तुओं की आवश्यकता हो—जैसे टोकरियाँ, लकड़ी के बक्स, लेबल इत्यादि—अपने बग़ीचे मे तैयार रक्खें।

सरकारी कृषि विभाग को चाहिए कि अच्छे भरोसे वाले विक्रेताओं को सनदें दिया करें और प्रतिवर्ष एक सूची ऐसी निकाला करें जिसमें नामी विक्रेताओं के नाम तथा उनके माल का वर्णन हो। ऐसा करने से साधारण कृषक आसानी से उत्तम पौधे प्राप्त कर सकेंगे।

पौधे उठाना:—चुनाव के पश्चात् पौधे उठाने में यह देखना वहुत जरूरी है कि खोदते समय जड़ों को (बिलकुल हानि नहीं पहुँचे यह तो असम्भव है) जितनी कम हानि पहुँचे उतना ही अच्छा है। जड़ों के आस-पास की मिट्टी टूटने या बिखरने न पावे। पौधों के आस-पास की मिट्टी वृत्ताकार रूप मे खोदकर बाद मे नीचे की मिट्टी को धीरे से काटनी चाहिए। फिर धीरे से उठाकर केले की छाल, घास या चट्टी में बाँधकर वहाँ से उठाया जाय तो पौधे की मिट्टी बँधी रहेगी और जड़ों को हानि नहीं

पहुँचेगी। यदि पौधे के नीचे की मिट्टी विशेष सूखी हुई हो (गो ऐसा नही होना चाहिए क्योंकि पौधों को नियमानुसार पानी मिलते रहना चाहिए) तो उसे एक दिन पहले कुछ पानी देकर गीली कर लेना चाहिए।

पौधों का चालानः—उपरोक्त रीति से उठाये हुए पौधे वैसे ही बँधे हुए गमले, टोकरी, मिट्टी के तेल के कटे हुए टीन या देवदारु के बक्सो मे बाहर भेजे जा सकते हैं। जब नज़दीक भेजना हो तो प्रथम दो रीतियो से मज़दूरों द्वारा या गाड़ियों मे सहूलियत से भेज सकते हैं। दूरी के लिए टोकरी, टीन या बक्स काम मे लाना चाहिए। जो पौधे संतरा, अमरूद, केला आदि जैसे कठोर हों उन्हें टोकरी मे भेज सकते हैं। आम, सपाटू, लोकाट आदि जैसे पौधों को देवदारु के बक्स या टीन में भेजना ठीक होता है। विशेष सावधानी के लिए बक्सों पर क्रेट बनवा देना चहिए ताकि पौधों को धक्का न लगने पावे। जब बक्सों में पौधे जमा दिये जायँ तो बीच की खुली जगह में घास या पुआल भर देना चाहिए। रवानगी के पहले पानी देकर पुरानी चट्टी से मिट्टी ढक देनी चाहिए ताकि पानी उड़ने न पावे। प्रत्येक बक्स के दोनो ओर दो दो छेद करके रस्सी के टुकड़े बाँध देने चाहिए ताकि कुली आसानी से उठा सकें और पौधों के साथ निर्दयता का बर्ताव न करें। बक्स का आकार और वज़न भी ऐसा होना चाहिए कि उठाने में सहूलियत हो। दो फ़ीट लम्बे, एक फीट चौड़े तथा दस बारह इञ्च ऊँचे बक्स अधिकांश

पौधों के लिए उत्तम होंगे। ऐसे बक्स में दो साल की आयु के छः आम के पौधे अच्छी तरह से जा सकते है।

प्रत्येक पार्सल पर पक्की काली रोशनाई से पाने वाले का नाम और स्टेशन तथा रेल्वे का नाम साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। बहुत से लोग क़ागज़ का लेबल लगा देते हैं जो गल जाता है, फट जाता है या उसके अक्षर मिट जाते हैं और पार्सल भटक जाता है। जब तक फिर लौट कर निर्धारित स्थान पर आता है तब तक पौधे सूख जाते हैं। जब पाने वाला स्टेशन से दूर हो और डाक द्वारा रेलवे रसीद के जल्दी पहुँचने की सम्भावना न हो तो ग्राहक को पांच सात.रोज़ पहले पार्सल भेजे जाने की सूचना दे देनी चाहिए ताकि वह यथा समय पार्सल छुड़ाने का प्रबन्ध कर ले।

प्रकरण ७

सोहनी और सिंचाई

खेतो में से घास पात निकालने और मिट्टी की पपड़ी तोड़ने की क्रिया को सोहनी कहते हैं। घास पात जमीन से खुराक लेने के सिवाय कीटो को भी शरण देते हैं जो फलों के छोटे वृक्षों को हानि पहुँचाते हैं; इसलिए इनको कभी भी नहीं बढ़ने देना चाहिए। पपड़ी तोड़ने से मिट्टी में हवा का आवागमन अच्छा होता है जिससे जड़ो को लाभ पहुँचता है। सूर्य की गर्मी से पानी जमीन से उड़ता रहता है तोड़ी हुई पपड़ी उसका बहुत कुछ अंश रोक लेती है। इससे सिंचाई कुछ कम करनी पड़ती है। इन कारणों से सोहनी बराबर करते रहना चाहिए। जब पेड़ो के बीच की भूमि से तरकारियाँ ली जायँ तो उनमें भी सोहनी करना बहुत जरूरी है। सोहनी के साथ साथ घने पौधों की छँटनी, असाध्य व्याधि-ग्रस्त पौधो का नाश, जिन पौधों को सहारे की आवश्यकता हो उनके लिए उसका प्रबन्ध और जिन पर मिट्टी चढ़ाना हो उन पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए।

सोहनी खुर्पी और हाथ वाले हो (Hoe) से अच्छी होती है। बड़े पेड़ों के बागीचों में बखर से भी यह काम अच्छा होता है। बखर के अभाव मे देशी हल भी काम में लाये जा सकते है।

सिंचाई

भारतवर्ष में बहुत कम स्थान ऐसे हैं जहाँ बिना सिंचाई के सब प्रकार के फलों के वृक्ष हो सकें। अधिकांश भाग ऐसे हैं जहाँ जाड़े के अन्त में और गर्मी मे सिंचाई करनी ही पड़ती है और कुछ स्थान तो ऐसे है जहाँ जाड़े और गर्मी की तो कौन कहे कम वर्षा होने के कारण वहाँ बरसात मे भी सिचाई करनी पड़ती है। ऐसी स्थिति में फलो की खेती वालो के लिए सिंचाई का प्रबन्ध करना एक अनिवार्य कार्य है।

सिंचाई दो प्रकार की होती है; एक प्राकृतिक जो वर्षा से होती है और दूसरी कृत्रिम जिसमें नदी, नाले, प्राकृतिक झरने, तालाब, कुएँ या शहर की मोरियों से पानी प्राप्त किया जाता है।

प्राकृतिक सिचाई मनुष्याधीन नहीं है लेकिन कुछ उपचार द्वारा उससे लाभ उठाया जा सकता है। जिन स्थानो में तीस चालीस इञ्च से अधिक वर्षा होती है वहाँ भूमि में अच्छी तरी प्राप्त हो जाती है परन्तु जहाँ बहुत कम वर्षा होती है वहाँ काफ़ी तरी प्राप्त नहीं होती और यदि गिरे हुए पानी का ठीक से ज़मीन में रक्षित होने का प्रबन्ध न किया जाय तो वह बह जाता है या सूर्य की गर्मी से उड़ जाता है। ऐसी वर्षा से लाभ उठाने के लिए वर्षा के पहले ज़मीन को हल से जोतकर रखना चाहिए ताकि गिरा हुआ पानी उसमें सोख जाय। जब वर्षा समाप्त हो जाय और ज़मीन जोतने योग्य हो जाय तो जोतकर बराबर करके छोड़ देनी चाहिए और दो एक रोज़ बाद पपड़ी भी तोड़ देनी

चाहिए ताकि पानी उड़ने न पाये। इसी भाँति जब जाड़े या गर्मी में बरसात आ जाय तो उस वक्त भी उपरोक्त प्रचार द्वारा लाभ उठा लेना चाहिए।

कृत्रिम सिंचाई:—जहाँ पानी की जगह से ज़मीन ढालू होती है वहाँ नदी, नाले, झरने या तालाब से नहर द्वारा पानी आसानी से मिल जाता है। यदि ज़मीन ऊँची हुई तो पम्प और एञ्जिन द्वारा पानी ऊपर उठाकर सिंचाई हो सकती है। नहर के अभाव में कुओं से सिंचाई करनी होती है। जहाँ पानी की सतह ऊपर होती है और कम गहराई पर पानी मिल जाता है तो थोड़ी थोड़ी दूर पर कुएं बनवाकर ढेकुली से सिंचाई की जा सकती है। जहाँ पानी बहुत नीचा हो वहाँ दस एकड़ की सिंचाई के लिए एक पक्का जलाशय बनवाना चाहिए।

जब बग़ीचा शहर के निकट हो और यदि मोरियों का पानी सिंचाई के लिए मिल सके तो उसका उपयोग किया जा सकता है।

पानी उठाने के उपचार:—नहर के अभाव में जब कुओं से जल ऊपर उठाना होता है तो मनुष्य, पशु, वायु, विद्युत (बिजली), भाप या तेल की शक्ति काम में लानी पड़ती है और पानी की गहराई के अनुसार पानी उठाने के यंत्रों* का उपयोग किया जाता है।

जब सिंचाई थोड़ी करनी होती है तो डोन, सूप, ढेकुली,

---

*यन्त्रों का विस्तारपूर्वक वर्णन साग भाजी की खेती में दिया गया। स्थानाभाव के कारण यहां संक्षिप्त वर्णन ही दिया जाता है।

चेन पम्प, सक्शन पम्प या फोर्स पम्प मनुष्य शक्ति से चलाकर पानी उठा सकते हैं। डोन से पाँच छः फीट, सूप से सात-आठ फीट, ढेकुली से पन्द्रह-सोलह फीट चेन पम्प से आठ दस फ़ीट और सक्शन या फ़ोर्स पम्प से पचीस तीस फ़ीट तक का पानी ऊपर उठाया जा सकता है।

उपरोक्त यंत्रों में से पहले चार से पचास साठ मन से लेकर सौ डेढ़ सौ मन पानी प्रति घंटा फेंका जा सकता है। सक्शन या फ़ोर्स पम्प कई तरह के होते हैं इसलिए इनसे फेंके जाने वाले पानी का अनुमान पम्प-विक्रेताओं से किया जा सकता है।

चेन पम्प और सक्शन या फ़ोर्स पम्प जब बड़े होते हैं तो पशुओं से चलाये जाते हैं। पशुओ से चलाये जाने वाले यन्त्रों में रहट और चड़सों की भी गणना है।

रहट :—एक बड़े लोहे या लकड़ी के चक्के पर रस्सी या लोहे की चेन से माला के रूप में बँधे हुए मिट्टी या लोहे के बर्तन लगे रहते हैं। चक्का एक या दो पशुओं से चलाया जाता है। भरे हुए बर्तन ऊपर आकर अपना पानी एक चौखटे में गिराते हुए फिर पानी लाने के लिए पानी के अन्दर चले जाते हैं। चौखटे से पानी बहकर खेतो की ओर चला जाता है। रहट से तीस पैंतीस फीट का पानी उठाया जा सकता है।

मोट या चड़स :—यह विशेषतः चमड़े का बनाया जाता है परन्तु कहीं कहीं लोहे का भी बनने लगा है। चमड़े के मोट दो प्रकार के होते है एक सूंड़ वाला और दूसरा बिना सूंड़ का।

पहला अपने आप पानी फेंक देता है दूसरे को खाली करने के लिए एक आदमी की आवश्यकता होती है। मोट में आकारानुसार तीन चार मन से सात आठ मन पानी समा सकता है। बड़ी मोट में दो जोड़ी पशु लगाये जाते हैं। मोट से बीस फीट से लेकर अस्सी फीट की गहराई का पानी उठाया जा सकता है। साधारण एक जोड़ी से चलाये जाने वाले मोट से यदि पानी पचीस तीस फीट से उठाना हो तो आधे एकड़ से पौन एकड़ तक की सिंचाई एक दिन में हो जाती है।

मोट की सम्हाल :—जब मोट से अधिक दिनों तक काम न लिया जाय तो उस पर तेल लगाकर रखना चाहिए।

हवा से पवन चक्की द्वारा पानी उठाया जा सकता है; यह वहीं अधिक उपयोगी होती है जहाँ हवा निर्माणित रूप से चलती हो।

विद्युत का उपयोग करने के लिए मोटर और पम्प की आवश्यकता होती है और भाप या तेल का उपयोग किया जाय तो एनजिन और पम्प लगाना होता है। इनके द्वारा सौ डेढ़ सौ फ़ीट की गहराई का पानी ऊपर उठाया जा सकता है।

पम्प नित्य नये नये बनते रहते हैं इसलिए यदि पम्प विक्रेताओं को निम्न लिखित सूचना दी जाय तो वे उचित पम्प की सलाह दे सकते हैं।

(क) कुएं की लंबाई, चौड़ाई या यदि गोल हो तो व्यास और गहराई का ब्योरा, (ख) गर्मी में पानी कितना नीचे चला जाता है, (ग) बरसात मे कितना ऊँचा चला आता है (घ) कुएँ के मुँह से

पानी कितना ऊपर फेंकना होगा, (ङ) पम्प में मोड़ कितने होंगे, (च) यदि एनजिन अपने पास हो और पम्प मँगाना हो तो उसके शक्ति सञ्चालक पहिए का व्यास और प्रति मिनट वह कितने चक्कर लगाता है इसका व्योरा (छ) और प्रति मिनिट पानी कितना फेंकना होगा।

पानी की चाह की गणना निम्न लिखित रीति से की जा सकती है। पानी का एक एकड़ पर एक इञ्च मोटा तह एक सौ टन के बराबर होता है और फलों के लिए एक बार की सिंचाई में एक इञ्च से दो इञ्च, भूमि व पेड़ों की जाति तथा पेड़ों की आयु के अनुसार दिया जाता है। मान लिया जाय हमें दो इञ्च पानी देना है और नित्य एक एकड़ की सिंचाई करनी है। इस हिसाब से हमें नित्य प्रति दो सौ टन पानी चाहिए। पानी का नाप बहुधा गैलन मे किया जाता है। एक गैलन में करीब पाँच सेर (दस पौंड) पानी आता है और एक टन मे २२४ गैलन पानी होता है इस हिसाब से २०० टन=४४८०० गैलन हुआ। मान लिया जाय हमें पम्प दस घंटा प्रति दिन चलाना है तो प्रति घंटा ४४८० गैलन अथवा प्रति मिनिट ७४.६ गैलन पानी हुआ तो हमें लिखना चाहिए कि वह पम्प ऐसा हो जो पचहत्तर गैलन पानी प्रति मिनिट फेंक सके।

सिंचाई की रीति :—फलों के बागीचो में सिचाई दो प्रकार से की जाती है। एक ऊपर से जल छिड़ककर और दूसरी नालियो द्वारा वृक्षों तक पानी पहुँचाकर। छोटे छोटे पौधों या लताओं

अथवा बीच की ज़मीन में उपजायी जानेवाली तरकारियों की सिंचाई के लिए क्यारियाँ या नालियाँ बनायी जाती हैं।

पानी का छिड़काव हज़ारे या झांझ से नर्सरी वाले पौधो के लिए किया जाता है। बड़े पेड़ों की सिंचाई नालियों द्वारा होती है। साधारणतः लोग फलों के पेड़ों के धड़ के चारो ओर थाला बनाकर उसमे पानी भर देते हैं ऐसा करना ठीक नहीं है। पौधे या पेड़ अपनी जड़ों द्वारा पानी खींचते हैं और जड़ो के मुँह धड़ के चारों ओर दूर तक फैले हुए होते हैं। ऐसी सूरत मे पानी उस स्थान पर देना चाहिए जहाँ जड़ो के मुँह हों। ऐसा करने से जड़ें और भी फैलती हैं और अधिक भूमी से उन्हे अपना पोषण करने का अवसर मिलता है जिससे पेड़ स्वस्थ और अच्छी बाढ़ वाले होते हैं। धड़ के नजदीक देने से पेड़ों की बाढ़ उत्तम नही होती और तने में व्याधियां या कीड़े लगने का डर भी रहता है इसलिए पेड़ के तने के पास की ज़मीन पर मिट्टी चढ़ाकर कुछ ऊँची करके पेड़ की शाखाओं के फैलाव के आकारानुसार गोल नाली बनाकर उसमे पानी भरा दिया जाय तो अच्छा होता है। ऐसा पानी जड़ों के मुँह के पास रहता है इससे उसका पूरा उपयोग हो जाता है। ज्यों ज्यो पेड़ बढ़ते जायँ और शाखाओं का घेरा बढ़ता जाय नालियो का चक्कर और चौड़ाई भी बढ़ाते रहना चाहिए। छोटे पौधो के लिए एक फुट तथा बड़ो के लिए दो ढाई फीट चौड़ी नालियाँ ठीक होती है। जब पेड़ काफ़ी बड़े हो जाते हैं तो नालियाँ मिल जाती हैं और अन्त मे गोलाकार रूप से बदल कर पेड़ों की

कतारो के बीच मे सीधी वर्गाकार रूप मे वन जाती है। उस समय ऐसी नालियाँ भर देने से काम चल जाता है। छोटे पेड़ों की सिंचाई वाली नाली चार पाँच इञ्च गहरी होनी चाहिए। पेड़ों की बाढ़ के साथ ज्यों ज्यों नाली की चौड़ाई बढ़ायी जाय गहराई भी बढ़ाते रहना चाहिए। बड़े पेड़ों के लिये सात आठ इञ्च गहरी नाली ठीक होती है।

पानी देने का समय और मात्रा :–यह भूमि और वातावरण की तरी तथा ऋतु और फलों की जाति पर निर्भर है इसलिए कोई एक नियम नही बनाया जा सकता। जिस भूमि में तरी अधिक रहती है अथवा वातावरण में भी काफी तरी बनी रहती है वहां कम पानी देना होता है। गर्मी की ऋतु में प्रायः सब प्रकार के वृक्षों को पानी अधिक और जल्दी जल्दी देना पड़ता है। जव पेड़ो की बाढ़ अधिक होती है अथवा वे फूलते हैं तब भी उनको विशेष पानी की जरूरत होती है। जो पेड़ गर्मी के दिनों मे फूलते हैं उनसे अच्छे फल प्राप्त करने के लिए उन्हे अच्छी तरह से सीचना ही चाहिए। छोटे पौधों को जब पानी दिया जाय तो थोड़ा लेकिन जल्दी देना चाहिए। अधिक पानी एक साथ देने से वह ज़मीन मे गहरा चला जाता है और वृथा खर्च हो जाता है। पानी इतना जल्दी जल्दी भी नहीं देना चाहिए कि ज़मीन हमेशा गीली ही बनी रहे। ज़मीन के गीली वनी रहने से पौधों की जड़ों को हवा नहीं मिलती जिससे वे कुछ अस्वस्थ होकर खुराक भी ठीक से नही लेने पातीं। दो सिंचाई के बीच में ज़मीन कुछ सिखने देनी

चाहिए ताकि मिट्टी मे हवा का आवागमन होता रहे। पौधे स्वयम् पानी की न्यूनाधिकता बतला देते हैं। नये पत्ते जब पीले पड़ने लगे तो समझना चाहिए कि पानी अधिक हो गया है और जड़ो को हवा की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति मे कुछ दिनो के लिए पानी बन्द करके जमीन की पपड़ी तोड़ देनी चाहिए और बाद में प्रत्येक सिंचाई के समय पानी कम देना चाहिए। इसी तरह से यदि पूर्ण बाढ़ पाये हुये पत्ते समय से पहिले पीले होने लगें तो समझना चाहिए कि उन्हें पानी की आवश्यकता है और पानी देना आरम्भ कर देना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के दो तीन दिन बाद जब मिट्टी मे खुर्पी चलायी जा सके उस समय दो इञ्च तक की गहराई तक की मिट्टी गोड़ देनी चाहिए। ऐसा करने से जैसा कि पहले बतलाया गया है पानी की कुछ बचत हो जाती है।

प्रकरण ८

काट छांट

यह दो प्रकार की होती है। एक जड़ों की और दूसरी शाखाओं की। जड़ों की काट छांट परोक्ष रूप में जुताई तथा खाद देने के समय होती रहती है; अपरोक्ष रूप से इस क्रिया का उपयोग उस समय किया जाता है जब पेड़ पुराना हो जाता है या फल न देकर पौधे टहनियाँ और पत्ते ज्यादे देते हैं अथवा स्थानान्तर किये जाने वाले पौधों की जड़ों की काट छांट की जाती है ताकि उनकी जड़ें अधिक दूरी तक न फैलें। कभी २ बीजू पौधे जब पेड़ों के नीचे क़लम बांधने के लिए लगाये जाते है तो उनकी मूसला जड़ काटनी पड़ती है ताकि फैलने वाली जड़ें ज्यादे बनें और अपना भोजन ऊपरी ज़मीन से लेती रहें।

बड़े पेड़ों की जड़ों की काट छाँट करने के लिए पेड़ के धड़ से शाखाओ के फैलावानुसार तीन हाथ से पांच हाथ की दूरी पर चारो ओर एक हाथ चौड़ी और हाथ डेढ़ हाथ गहरी खाई खोदकर देखना चाहिए और जड़ें ज्यादे हो तो कुछ को तेज़ छुरे से काट देना चाहिए। इस खाई को दो तीन सप्ताह तक खुली रखकर उसकी मिट्टी मे खाद मिलाकर भर देना चाहिए।

शाखाओं की काट छांट :—शाखाओं की काट छांट कई कारणों से की जाती है और यह वृक्षों की जाति पर निर्भर है।

पहली काट छांट दरख्तों के सुन्दर आकार के लिए की जाती है। जिन शाखाओं की बाढ़ अधिक हो, जो घनी हो, अथवा बहुत धीरे धीरे बढ़ने वाली हों वे काट दी जाती हैं और साधारण बाढ़ वाली छोड़ दी जाती हैं ताकि पेड़ का फैलाव चारो ओर बराबर हो। ऐसा करने से पौधों को रोशनी, धूप और हवा अच्छी मिलती है और उनके अंग मजबूत हो जाते हैं। फल बड़े बड़े, उत्तम रंग वाले और अधिक संख्या मे प्राप्त होते हैं। उनकी रक्षा अच्छी तरह से की ज़ा सकती है। आवश्यकता होने से पेड़ो पर औषधियो का छिड़काव भी चारों ओर भली भांति किया जा सकता है। फल उतारने या तोड़ने में भी आसानी रहती है।

उपरोक्त प्रकार की काट छांट की ओर ध्यान प्रारम्भ से ही रखना चाहिए। आड़, ज़रदालू, नासपाती सेब इत्यादि के पौधे (जिनमे बड़े पेड़ो मे काट छांट बराबर करनी पड़ती है) जब डेढ़ दो फीट ऊँचे हो जांय तो उनके बीच वाला कोंपल तोड़ देना चाहिए। ऐसा करने से तने मे से नये कोपल निकलेंगे। इन नये कोपलों मे से ४, ५ को रखकर शेष को धड़ के निकट से ही तोड़ देने चाहिए। जो चार पॉच रक्खे जांय उन्हे भी इस रीति से रखना चाहिए कि वे धड़ के चारों ओर रहे। ऐसा करने से पेड़ छोटे और मजबूत होते है और शाखाओं का फैलाव चारों ओर

बराबर हो जाता है। पेड़ों के अधिक ऊँचे न होकर छोटे होने में कई लाभ है। उनकी काट छांट आसानी से हो सकती है। फल सहूलियत से तोड़े जा सकते हैं। लू अथवा पाले से बचाव आसानी से किया जा सकता है। आवश्यकता पड़ने से औष-धियां अच्छी तरह से छिड़की जा सकती हैं।

नीबू, माल्टा, सन्तरा इत्यादि जैसे पेड़ जिनमें बड़े पेड़ो मे काट छॉट विशेष नही करनी पड़ती उनके पौधों के बीच की कोपल तीन चार फीट की ऊँचाई से तोड़नी चाहिए और धड़ पर पांच छः कोपल छोड़ने चाहिएं।

आम, लीची इत्यादि पेड़ जिनके बीच की टहनी और बाजू की टहनियां करीब २ एक साथ ही बढ़ती है और जिनमे विशेष काट छांट की आवश्यकता नही होती उनके पौधो के बीच के कोपल नहीं तोड़ने चाहिए। सिर्फ यह देखना चाहिए कि तने पर पांच छः कोपल से अधिक न हो। उपशाखाएं आवश्यकता-नुसार छोड़ देनी चाहिए। ये इतनी अधिक न हो कि जिसमे हवा का आवागमन और प्रकाश रुके और न इतनी कमती हो कि बहुत सी जगह खाली रह जांय और सूर्य की तेज़ धूप से नयी टहनियो या फलो को हानि पहुँचे।

दूसरी काट-छांट सूखी, व्याधि-ग्रस्त और कीट-भक्षित या आक्रमणित शाखाओ की की जाती है ताकि बेकार शाखाएं हटा ली जायॅ, व्याधि फैलने न पावे और कीट की वृद्धि न हो।

तीसरी* काट-छांट उस समय की जाती है जब वृक्षों में शाखाओं और पत्तो की बाढ़ अधिक हो और पेड़ कम फलते हो। ऐसी स्थिति मे कुछ शाखाओं और कुछ जड़ो की काट-छांट कर दी जाय तो पेड़ फलने लग जाते हैं।

कभी २ अधिक फल देने वाले पेड़ों की शाखाओं की काट-छांट करनी पड़ती है ताकि वे शाखाओं को स्वस्थ होने दें। जब पेड़ की शक्ति फलो को बनाने मे लग जाती है तो शाखाएं स्वस्थ नहीं होतीं और कभी कभी मारे बोझ के टूट पड़ती हैं। ऐसी स्थिति में फल वाली कुछ टहनियां काट देनी पड़ती हैं।

बहुधा ऐसा भी होता है कि पेड़ो को आराम देने के लिए शाखाएं और जड़ें काटनी पड़ती हैं। बहुत से पेड़ ऐसे होते हैं जिनकी बाढ़ बराबर बनी रहती है और फल कम आते हैं। उनसे अधिक फल प्राप्त करने के उद्देश्य से कुछ समय के लिए पानी रोक कर जड़ें और शाखाओं की काट-छांट करनी पड़ती है जैसा कि आड़ू, आलूबुखारा आदि के लिए किया जाता है।

चौथी काट-छांट उस समय की जाती है जब फल प्राप्त हो जाते हैं जैसी कि लीची की होती है। फल डालियो समेत तोड़े जाते है क्योकि जिस टहनी में फल आ जाते हैं, वे फिर नही

---

* तीसरी प्रकार की काट छाट पर खाद का भी बहुत असर पड़ता है। जब फल अधिक आते हों और शाखाए कमज़ोर हों तो नत्रजन पूर्ता खाद देना चाहिए और जब शाखाओं की बाढ़ अधिक हो और फल कम हो तो स्फुर और पोटाश पूर्ता खाद लाभ-प्रद सिद्ध होंगे।

फलती। नयी टहनियां ही फलती हैं सो काट-छांट से नयी टह-नियां बहुत निकलती हैं और अच्छे फल प्राप्त होते है।

पांचवीं काट-छांट क़लम बांधने के लिए की जाती है। पुराने बड़े वृक्षों में जब फल नहीं आते तो उनकी टहनियां काट कर नयी क़लमें उनमे बांध दी जाती हैं।

छठीं काट-छांट कलियों की होती है। जब किसी शाखा या टहनी पर आवश्यकता से अधिक फलों की कलियां निकल आती हैं तो वे तोड़ दी जाती हैं।

इनके सिवाय जब पेड़ों पर उनके शत्रु पौधे (parasites) लग जाते हैं तो उन्हें हटाने के लिए भी काट छांट करनी पड़ती है। जैसे अमरलता (Dodder) का लगना या आम पर लाल फूल वाले पौधे (Loranthus) का जमना।

काट छांट की रीति :—बड़ी शाखाएं जब काटनी हों तो उन्हे आरी से काटना चाहिए। कटाव धड़ के बिलकुल पास या जिस शाख से वह शाख निकली हो उसके निकट से ही होना चाहिए ताकि ठूंठ न रहे। ऐसी शाख को काटने के प्रथम नीचे की ओर करीब डेढ़ दो इञ्च गहरा और धड़ से दो ढाई इञ्च की दूरी पर एक कटाव लगा देना चाहिए और फिर ऊपर से आरी चलाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो कटी हुई शाख गिरते समय अपने साथ धड़ की कुछ छाल लिए हुए गिरेगी और पेड़ को हानि पहूँचा देगी। जब शाख गिर जाय तो जो ठूंठ रह जाय उसे काट कर बराबर कर सकते हैं। नीचे का कटाव पहले

से ही धड़ के निकट दिया जा सकता है परंतु ऊपर से आने वाला आरी का कटाव उससे मिले न मिले और कटा हुआ भाग साफ न हो इसलिए नीचे वाला कटाव जरा दूरी पर लगाना ठीक होगा। यदि शाख बहुत बड़ी हो तो उसके छोटे छोटे टुकड़े करके काटना चाहिए नही तो वह गिरते समय अपने साथ कई छोटी शाखाओ को लेती हुई गिरेगी। पतली शाखाएं पेड़ छांटने की बड़ी कैंची (Tree pruner) से और छोटी छोटी शाखाऐं छोटी कैंची (Secateurs) से काटनी चाहिए। तेज़ छूरे या चाकू से या हंसुआ से भी छोटी छोटी टहनियां काटी जा सकती है। काट-छांट के बाद हर एक कटे हुए स्थान पर अलकतरा (Coal-tar) या सफेदा (White lead) और तीसी (अलसी) का उबाला हुआ तेल लगा देना चाहिए ताकि उस जगह कीट या किसी प्रकार की व्याधि का आक्रमण न हो।

काट-छांट का विषय बड़े ही महत्व का है इसके लिए कुछ क्रियात्मक अनुभव होना बहुत जरूरी है। यह विषय इतना विस्तारित हो सकता है कि इसी पर एक अलग पुस्तक लिखी जा सकती है इसलिए स्थानाभाव के कारण यहाँ पर आवश्यकीय बातें संक्षेप मे ही दी गयी हैं। साधारणतः यह ध्यान रखना चाहिए कि जिन पेड़ो के पत्ते साल मे एक बार झड़ जाते हैं या झड़वाना आवश्यक होता है उनमे प्रति वर्ष नयी बाढ़ के प्रारम्भ होने के पहले काट-छांट हो जानी चाहिए। जो पेड़ सदा हरे भरे रहते हैं उनमें विशेष काट-छांट नही करनी पड़ती। इसी भांति वे पेड़ जो पहाड़ के ठंडे

वातावरण और मैदान के उष्ण वातावरण दोनों में हो जाते हैं उनमे ठंडे वातावरण वाले पेड़ों की काट-छांट उष्ण वातावरण वाले पेड़ों की अपेक्षा कुछ अधिक करनी पड़ती है।

प्रकरण ६

फलों के शत्रु और उनसे बचाने के उपाय

फलो के शत्रु दो प्रकार के होते हैं एक वे जो पेड़ों को अङ्गहीन कर देते है, उन्हें अस्वस्थ बना देते हैं या मार डालते हैं। दूसरे वे जो फलों को खा जाते हैं या उन्हें बिगाड़ देते हैं।

इन शत्रुओं में अधिकांश ऐसे हैं जो बिना किसी यंत्र की सहायता के दिखलायी देते हैं जैसे घातक बनस्पति या शत्रु पौधे (Parasites), मनुष्य, पशु-पची या दूसरे जानवर और कीट। कुछ ऐसे होते हैं जिनकी पहचान बिना यंत्रो की सहायता के नहीं हो सकती जैसे सूक्ष्म जन्तु।

घातक वनस्पति (Parasites) :—

फलों के पेड़ो को हानि पहुँचाने वाले विशेषतः दो प्रकार के घातक पौधे पाये जाते हैं। एक अमरलता (Dodder) और दूसरा बांभी (Loranthus)

अमरलता :—यह एक बहुत ही छोटे पत्ते वाली (बहुत ध्यान से देखने से पत्ते दीखते हैं) पीली लता होती है जो यदि पेड़ो पर लग जाय तो कुछ दिनो में पेड़ों को सुखा देती है। यदि कहीं से लता का एक टुकड़ा पेड़ पर गिर जाय तो जिस टहनी पर गिरता है वहीं पर उसमे से जड़ों के जैसे महीन अंकुर

निकलकर टहनी में प्रवेश करजाते हैं और पौधे या पेड़ का रस चूसकर अपना पोषण और वृद्धि करती है। थोड़े ही दिनों में यह इतनी फैल जाती है कि समस्त पेड़ ढक जाता है और कुछ दिनों बाद मर जाता है।

इससे बचाने का साधारण उपाय यह है कि जहां कहीं यह नजर आवे वहां से तुरन्त हटवा देनी चाहिए। जिस डाली पर लगजाय उसे भी कटवा देनी चाहिए। यदि हो सके तो बागीचे के आस पास के जंगली पेड़ों पर से भी हटवा देनी चाहिए ताकि इसके आक्रमण का भय न रहे।

अमरलता फलों के पेड़ों में नीबू और करौन्दे पर विशेष पायी जाती है।

बांझी (Loranthus) :—यह एक प्रकार का हरे पत्ते वाला लालफूल का पौधा होता है जो आम, शरीफा इत्यादि पेड़ों पर जम जाता है और उनसे रस चूसकर अपना पोषण करता है। इसके बीज बहुधा पक्षियो द्वारा एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक पहुँचा दिये जाते हैं। बीज चूंकि चिकने होते है नये पेड़ पर चिपक कर रह जाते है और अनुकूल वातावरण तथा तरी पाकर बीज से पौधे बन जाते है। यदि प्रारम्भ में ध्यान न रक्खा जाय तो कुछ दिनों मे सारे पेड़ पर बांझी ही बांझी नजर आने लगती है।

इससे बचाने का उपाय यह है कि जहां कही पेड़ों पर यह पौधा नजर आवे उसे वहां से तुरन्त हटवा देना चाहिए और जिस डाली पर हो उसे कटवा देनी चाहिए। यदि धड़पर हो तो

उस जगह को छिलवा कर उसस्थान पर अलकतरा (Coal-tar) लगा देना चाहिए। आस पास के दूसरे पेड़ो पर हो तो वहाँ से भी हटवा देना चाहिए।

मनुष्यो से बचाने के लिए मज़बूत घेरे या रखवाले का और पशुओं से बचाने के लिए घेरा, रखवाला, रोशनी या किसी प्रकार की आवाज़ का प्रबन्ध करना चाहिए। बहुत से पशु रोशनी से डरते रहते है इस लिए जहां रात्रि मे रोशनी या आग जलती रहती है वहां वे नही जाते। ढ़ोल, वर्तन या बन्दूक की आवाज़ से प्रायः सभी पशु भगाये जा सकते हैं। फलो को बन्दर भी बहुत हानि पहुँचाते हैं; इन्हें बन्दूक की आवाज़ या गुलेल से भगाना चाहिए।

इसके सिवाय दिन में गिलहरी और रात में चमगादड़ बहुत फल खा जाते हैं। टीन की आवाज़ से गिलहरी से और कुछ अंश तक चमगादड़ से भी बचाव हो जाता है। चमगादड़ से बचाने का उपाय पेड़ों पर जाली लगाने का है। पतली रस्सियां लेकर उन्हें पेड़ों पर इस रीति से बांधा जाय कि जिसमें जाल तानी गयी हो ऐसा मालूम हो। जाली के छेद एक बीते से लेकर एक हाथ लम्बे-चौड़े होने से भी काम चल जाता है।

पक्षियों मे सुग्गा और कौवा बहुत हानि पहुँचाते हैं, सुग्गा अमरूद, आम इत्यादि फलों का पक्का शत्रु है। पपीते और केले जब पकने लगते हैं तो कौवे चोंच मार मार कर अन्दर का गूदा खा जाते हैं। सभी जाति के पक्षी किसी न किसी प्रकार की आवाज़

से भगाये जा सकते हैं। सबसे सरल उपाय यह है कि बग़ीचे में कहीं कहीं पेड़ों पर मिट्टी के तेल के पुराने टीन बांध दिये जायॅ और रस्सियों से एक दूसरा इस प्रकार जोड़ा जाय कि एक को हिलाने से सब हिल जायँ और आवाज़ कर सके। इस युक्ति से एक ही स्थान पर बैठा हुआ आदमी एक टीन की रस्सी अपने पास रख कर कभी कभी खींच दिया करे तो सब टीनों से आवाज़ होगी और पक्षी उड़ जायँगे।

कीट—जहां तक हो इनसे बचाने का प्रयत्न करते रहना चाहिए और यदि आक्रमण हो जाय तो प्रारम्भ में ही इनके नाश का उपचार करना बहुत ज़रूरी है।

निम्न लिखित नियमों की ओर ध्यान रक्खा जाय तो इनके आक्रमण से बहुत कुछ बचाव हो सकता है। (१) भूमि घास पात रहित रखनी चाहिए ताकि कीट उसमे छिपे रह कर वंश-वृद्धि न करने पावें। (२) कूड़ा-कर्कट इधर-उधर नही फेंकना चाहिए क्योंकि बहुत से कीट उसमें अपने रहने तथा वंश वृद्धि योग्य स्थान बना लेते हैं। (३) पेड़ों के बीच की भूमि की कभी कभी जुताई भी करा देना चाहिए ताकि भूमि में जो कीट, उनके अण्डे अथवा कोष छिपे हुए हो तो वे ऊपर आकर पक्षियों के भक्ष्य वन जायॅ या धूप से मर जायॅ। (४) पौधे या बीज ख़रीदते समय कीट रहित ख़रीदे जायँ। (५) पेड़ों को आवश्यकतानुसार खाद और जल दिया जाय ताकि वे स्वस्थ बने रहे क्योकि स्वस्थ पौधों पर कीट का आक्रमण शीघ्र नहीं होने पाता। (६)

काट-छांट के बाद पेड़ के कटे हुए भागो पर अलकतरा लगा देना बहुत जरूरी है क्योंकि वहां का भाग कुछ कोमल रहता है जिससे कोट आक्रमण कर बैठते है। (७) आक्रमण हो जाने पर तत्काल कीट को चुनवाकर, काट-छांट अथवा अन्य प्रकार के उपचार या विष प्रयोग से उनका नाश कर देना चाहिए ताकि उनकी वंश-वृद्धि रुक जाय।

कीट नाशक उपचार और विष—

(१) हाथ से चुनवाकर मिट्टी मे गड़वा देना या मिट्टी के तेल और पानी के मिश्रण मे उन्हे डाल देना अथवा आग में जला देना साधारण उपचार है। जो कीट पौधे या पेड़ों पर दिखलायी दे और उड़ने की आयु तक न पहुँचे हो और थोड़ी संख्या में हों तो चुने जा सकते हैं। फुदकने और उड़ने वाले हानिकर्ता कीट कपड़े की थैली में पकड़े जा सकते है। संतरे और नीबू के छोटे पौधों पर जो तितलियाँ अण्डे दे जाती हैं उन्हें पकड़ने के लिए ऐसी थैली अच्छा काम देती है। इसे कोई भी कृषक अपने हाथ से बना सकता है। एक आठ-दस इञ्च व्यास के बेत या लोहे के कुण्डल मे एक महीन या जालीदार कपड़े की एक हाथ गहरी थैली लगा दी जाती है और कुण्डल की पकड़ के लिए क़रीब एक हाथ लम्बा लकड़ी का दस्ता लगा दिया जाता है। उड़ती हुई तितली, भ्रमर आदि को पकड़ने के लिए थैली को झटके से उनकी ओर बढ़ाना चाहिए जिसमे हवा से थैली फूल जाय और कीट अन्दर घुस जाय। उनके अन्दर जाते ही हाथ

को ऐसा मोड़ देना चाहिए जिसमें थैली का मुँह बन्द हो जाय और वे निकलने न पावें। पकड़े हुए कीट उपरोक्त रीति से मारे जा सकते हैं।

(२) अन्य उपचार—धड़-छेदक कीट गोबरीले कीट की जाति के होते है और पेड़ के धड़ या शाखाओं में छेद करते रहते हैं। ठण्डे या गरम लोहे के तार को छेद में डालकर वे मारे जा सकते हैं। यदि कीड़ा छेद से नीचे की ओर जाता हो तो छेद का मुँह साफ करके उसमें अलकतरा डाल देना चाहिए। यदि ऊपर की ओर हो तो क्लोरोफार्म और क्रियोसोट को बराबर भाग में मिलाकर उसमें रूई भिगो लेनी चाहिए। फिर उसे छेद में डालकर छेद का मुँह बन्द कर देना चाहिए। इस मिश्रण की गेस ऊपर जाकर कीट को मार देती है।

(३) **विष प्रयोग :**—विष दो प्रकार के होते हैं—एक आन्तरिक अर्थात् जिनके खाने से कीट मर जायँ और दूसरे स्पर्शक अर्थात् वे विष जो यदि कीट के बदन पर लगजायँ तो कीट मर जायँ।

खान-पान की रीति के अनुसार कीट दो प्रकार के होते हैं एक भक्षक अर्थात् जो बनस्पतियों को काटकर खा जाते हैं और दूसरे चूषक अर्थात् जो अपने पोषण के लिए पौधे या पेड़ों का रस चूस लेते हैं। इस कारण से भक्षक पर आन्तरिक और चूषक पर स्पर्शक विष का अच्छा प्रयोग होता है। आन्तरिक विष से चूषक कीट नही मारे जा सकते क्योंकि आन्तरिक विष

तो पौधों के अंग पर ही रह जाता है और ये कीट अपने मुंह की नली को पत्तो के अन्दर डालकर रस चूसते हैं।

आन्तरिक विष :-लेड आर्सिनेट (Lead arsenate) यह शीशे और संखिया का बना हुआ लवण होता है। एक मन पानी में दो ढाई छटांक दवा का घोल बनाना चाहिए। यह छिड़कने के यंत्र (Sprayer) द्वारा छिड़का जाता है। इसी तरह से लेड क्रोमेट का भी उपयोग किया जाता है।

फलों की मक्खी को आकर्षित करने के लिए एक मन पानी मे तीन सेर गुड़ और पाव भर लेड आर्सिनेट का घोल बनाकर पेड़ों पर या लकड़ी या टीन के तख़्तों पर लगाकर पेड़ों पर बांध देते हैं। मक्खियाँ इस पर आकर्षित होकर खा जाती हैं और मर जाती हैं।

उपरोक्त तीनों प्रकार के विष का प्रयोग बड़ी सावधानी से करना चाहिए क्योंकि ये बड़े जहरीले हैं। जहां तक हो कृषि विभाग द्वारा ही इनका प्रयोग कराना चाहिए।

नर्सरी के पोधो पर छिड़कने के लिए तम्बाकू का काढ़ा भी अच्छा उपयोगी होता है। एक सेर तम्बाकू दस सेर पानी में दिन रात भिगोकर अथवा आधे घंटे तक पानी में उबाल कर जो काढ़ा बनाया जाय उसमें सात भाग और जल मिलाकर काम मे लाया जा सकता है। मिट्टी के तेल मे भीगी हुई राख का छिड़कना भी लाभप्रद होता है।

स्पर्शक विष :—इनमें क्रूड आइल इमलशन (Crude oil-emulsion) अच्छा विष है, यह मिट्टी के तेल और साबुन से बना हुआ होता है, एक मन पानी में एक सेर दवाई घोलनी चाहिए। यह भी यंत्र द्वारा छिड़का जाता है।

आम के मोर में जो कीट (Jassids) लग जाते हैं उनके लिए फ़िश-आइल-रोज़िन सोप (Fish-oil-rosin-soap) का छिड़काव अच्छा होता है। डेढ़ मन पानी में एक सेर औषधि घोलनी चाहिए।

स्पर्शक विष में मिट्टी का तेल भी बड़ा अच्छा होता है। रोशनी पर आकर्षित होने वाले कीट इससे मारे जा सकते है। फलों के पेड़ों पर मिट्टी के तेल के टीन जिनमें थोड़ा पानी और थोड़ा मिट्टी का तेल हो बांध दिये जॉय और उन पर रोशनी टांग दी जाय तो कीट आकर्षित होकर आते हैं और टीन मे गिरकर मर जाते हैं।

कीट का जीवन चरित्र :— कीट की पहचान के लिए उनका जीवन रहस्य जानना बहुत जरूरी है। स्थानाभाव के कारण यहाँ संक्षिप्त रूप मे कुछ वर्णन दिया जाता है ताकि फलो की खेती करने वाले हानिकर्ता कीट को पहचान सकें।

कीट सब अण्डे से पैदा होते है और जीवन प्रणाली के अनुसार दो भागो में विभाजित किये जा सकते हैं। एक वर्ग मे रूपान्तर कर्ता कीट की गणना है। इस वर्ग में तरुण कीट का रूप बाल कीट के रूप से बिलकुल निराला होता है। सिर्फ रूप ही नहीं

बदलता बल्कि किसी किसी जाति में खान पान की रीति भी बदल जाती है। भक्षक बाल कीट तरुण अवस्था में चूषक हो जाते हैं। बाल कीट इल्ली के रूप के होते हैं। किसी किसी के बदन पर बाल भी होते हैं। कुछ पांव रहित तो किसी किसी के बहुत से पाँव होते हैं। पूर्ण बाढ़ पाने पर अपने ऊपर एक झिल्ली बना कर कुछ दिनों तक बिना खान-पान उसमे रह जाते हैं, इसी में इनके पंख भी आ जाते हैं। झिल्ली फटने पर पंख वाले कीट निकल आते हैं।

जिन कीट का रूपान्तर नहीं होता उनके बाल कीट के रूप मे विशेष अन्तर नहीं होता। आकार बढ़ जाता है और खान पान की रीति वैसी ही बनी रहती है।

भक्षक कीट जो आन्तरिक विष से मारे जा सकते है उनमें टिड्डे, तितलियों की जाति के बाल कीट (Caterpillars) गोब-रीले (Beetles) दीमक (White-ants) और फलों की मक्खी की गणना है।

चूषक में तितलियों के तरुण कीट और खटमल की जाति के कीट होते हैं जो फूल और पत्तो का रस चूसकर पेड़ को कमज़ोर कर देते हैं।

टिड्डे (Grass-hoppers, Crickets, Locusts) ये पौधे या पेड़ो के कोमल और हरे पत्तो को खाते हैं। इनके अण्डे ज़मीन मे दिये जाते हैं। बाल्यावस्था से तरुणावस्था तक ये हानि पहुँचाते रहते हैं। इनसे विशेष हानि नर्सरी में होता है। अण्डों का नाश

भूमि की जुताई से और कीट का आन्तरिक विष से या कपड़े की जाली में पकड़कर किया जा सकता है।

तितलियों की जाति के कीट :—इस जाति के जो कीट दिन में बाहर आते हैं उन्हें तितलियाँ (Butterflies) कहते हैं और जो रात्रि में बाहर आते हैं उन्हें पतंग (Moths) कहते है। तितली हो या पतंग दोनों ही में नर मादा के मेल के पश्चात् मादा पौधों के निकट ज़मीन में, पौधो पर या पेड़ों पर अण्डे दे देती हैं जिनसे बाल कीट निकल कर अपना खाना शुरू कर देते हैं और पूर्ण बाढ़ पाने पर पेड़ पर या ज़मीन मे कोष बनाकर रूपान्तर करते हैं। तरुण कीट वैसे विशेष हानिकारक नही होते क्योंकि ये फूलों के रस पर निर्वाह करते हैं परन्तु अण्डे देकर वंश-वृद्धि करते हैं इसलिए परोक्ष रूप से हानिकारक हैं।

इनके नाश का यह उपाय है कि कम संख्या मे हों तो बाल कीट चुनवाये जा सकते हैं। अधिक संख्या में हों तो पम्प द्वारा आन्तरिक विष छिड़काया जा सकता है। पतंग को रोशनी पर आकर्षित कर मार सकते हैं। ताप के लिए आग जलायी जाती है उसमें बहुत से कीट भस्म हो जाते हैं। तितलियां कपड़े की जाली में पकड़कर मारी जा सकती हैं।

गोबरीले कीट की जातिवाले कीट :–(Beetles) इस जाति के कीट की मादा पेड़ों पर या ज़मीन पर कूड़ा कर्कट में अण्डे देती है। अण्डे से बाल कीट निकलकर अपना खाने का काम शुरू कर देता है और पूर्ण बाढ़ पाने पर पेड़ में या बाहर

निकलकर जमीन मे रूपान्तर करता है। तरुण कीट कोमल पत्ते और फूलों की पंखड़ियां खाते हैं।

दीमक:*—(White-ants), इनका जीवन बड़ा रहस्यमय है परन्तु इन्हे और इन की शरारत को सब कृषक जानते हैं इसलिए यहाँ पर उनसे बचाव का उपाय ही बतला दिया जाता है। स्मरण रहे कि तनदुरुस्त पौधे या पेड़ को दीमक हानि नही पहुँचा सकती। जब पौधा कमजोर होता है तो उसपर इनका आक्रमण हो जाता है और लोग समझते हैं कि दीमक से पौधा मर गया। दीमक विशेषत: सूखी लकड़ियों पर धावा करती है इसलिए बागीचे में इधर उधर सूखी टहनियाँ या लकड़ियाँ नही पड़ी रहने देनी चाहिएं। सिंचाई से भी दीमक का असर कुछ कम हो जाता है। छोटे पौधों को बचाने के लिए पौधे के तने के चारों ओर दो फ़ीट की दूरी तक नीम की खली यदि मिट्टी में मिला दी जाय तो दीमक तने के निकट नहीं आती। जहाँ अधिक भय हो वहाँ रोपने के पहले ही खली डाल देनी चाहिए।

फल की मक्खी :-(Fruit fly)—आम, फूट आदि फलों के छिलको मे छेद करके यह मक्खी अण्डे दे देती है जिनमें से बाल कीट निकलकर गूदे में चले जाते हैं। पूर्ण बाढ़ पाने पर बाहर निकलकर जमीन में कोष बनाकर रूपान्तर करते हैं। एक सप्ताह में कोष से मक्खी निकल आती है। व्याधि ग्रस्त फलों के

*साग भाजी की खेती में इनका विस्तार पूर्वक वर्णन दिया गया है।

सुधार का तो कोई उपाय नहीं है। व्याधि अधिक फैलने न पावे इसलिए जिन फलों में मक्खियों के बालकीट पाये जायँ उन्हें जला देना चाहिए। आन्तरिक विष (पृष्ठ ९५) पर आकर्षित करके भी इनका नाश किया जा सकता है।

चूषक कीट :—ये स्पर्शक विष से मारे जाते हैं उनमें अधिकतर खटमल की जाति के होते हैं। इनके अण्डे बहुधा पत्ते और नये कोंपलपर दिये जाते हैं जिनमें से तरुण कीट निकल कर पेड़ों का रस चूसते रहते हैं। जिनके पर नहीं आते वे पत्तों पर धीरे धीरे घूमकर रस चूसते हैं और जिनके पर आजाते हैं वे एक स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर पहुँच जाते हैं। इनके मुँह नली के रूप के होते हैं जिसके द्वारा ये रस चूसते हैं।

मुख्य मुख्य फलों को हानि पहुँचाने वाले कीट —

फलों को थोड़ी बहुत हानि पहुँचाने वाले बहुत जाति के कीट हैं परन्तु विशेष हानि पहुँचाने वाले बहुत कम हैं इसलिए यहां पर उन्हीं कीटों का वर्णन दिया जाता है जिनसे फल या फलों के वृक्षों को बचाना बहुत जरूरी है।

अङ्गूर :—इसमें पतंग की जाति का एक कीट लग जाता है जो पत्ते बहुत खाता है। बाल कीट हरे रंग का होता है और पूर्ण बाढ़ पाने पर करीब डेढ़ दो इञ्च लम्बा छोटी उंगली इतना मोटा होता है। इसकी दुम पर सींग जैसा एक अंग होता है। यह कीट अपना कोष भूमि में बनाता है। तरुण कीट भूरे रंग का क़रीब

एक इञ्च लम्बा पतंग होता है। जब पत्ते कटे हुए दिखलायी दें तब इसे लता पर ढुंढ़वाकर मार देना चाहिए।

गोबरीले कीट की जाति का छोटा सा कीट भी पत्तों को बहुत हानि पहुँचाता है। पत्तों में छोटे छोटे बहुत से छेद हो जाते हैं। काट-छांट के पश्चात् यदि केले के सूखे पत्ते लताओं पर रख दिये जायँ तो ये कीट उन पत्तों पर चढ़ जाते हैं जिन्हें कपड़े की थैली में गिरा कर मार सकते हैं। दिन में दो तीन बार पांच छः दिन तक ऐसा करने से बहुत से कीट मर जाते हैं।

अनार :—अनार के फलों की तितली की जाति का एक कीट बहुत हानि पहुँचाता है। मादा तितली फूल या छोटे फल पर जहाँ फूल की पंखड़ियाँ होती हैं अण्डे दे देती है। प्रायः एक फल पर एक ही अण्डा देती है। अण्डे से निकलते ही बाल कीट फल में घुस जाता है और बीज खाना शुरू कर देता है। बाल कीट काले रंग का छोटे छोटे केश वाला होता है। इसकी दुम चपटी होती है। इसका रूपान्तर फल में ही होता है। जिस फल पर इसका आक्रमण होता है वह अन्दर से काला होकर कुछ दिनों में नीचे गिर जाता है। ऐसे फलों को काटने से अन्दर बाल कीट मिल जाते हैं।

व्याधि अधिक नहीं फैलने पावे इसलिए सड़े हुए फलों को जला देना चाहिए। आक्रमण न होने पावे इसलिए यदि थोड़े ही फल हों तो उन्हें कपड़े या कागज़ की थैलियों में बन्द कर देने से बचाव हो जाता है।

आड़ू :—जब फल पकते हैं उस समय यदि पानी आ जाय तो भूरे रंग की, एक मक्खी जिस पर काली पीली धारी होती है, फलों के छिलकों में छेद करके अण्डे दे देती है। इन अण्डों से तीन ही दिन में बाल कीट निकल कर फल का गूदा खाना शुरू कर देते हैं और फल बेकार हो जाते हैं। क़रीब दो सप्ताह तक गूदे से अपना पोषण कर पूर्ण बाढ़ पाया हुआ तरुण कीट नीचे गिर क़र भूमि में रूपान्तर करता है। एक सप्ताह में कोष से तरुण मक्खी निकल जाती है।

व्यधि फैलने न पावे इसलिए आक्रमणित फलों को जला देने चाहिएं। मक्खियां पृष्ठ ९५ पर दिये हुए विष पर आकर्षित कर मारी जा सकती है।

आम :—धड़-छेदक कीट:—यह गोबरीले कीट की जाति का एक बड़ा कीट होता है जो बहुधा पुराने आम के पेड़ों में लग जाता है और कुछ समय मे पेड़ मर जाते हैं। मादा छाल के नीचे अण्डे दे देती है जिनसे बाल कीट निकल कर पहले छाल को और बाद में अन्दर के काष्ठ को खाता हुआ अन्दर घुसता चला जाता है और विष्टा मिश्रित लकड़ी का बूरा पीछे फेंकता रहता है। यह कीड़ा कई साल तक पेड़ में रह जाता है।

पृष्ठ ९४ में दिये हुए उपचार से इसे मार सकते हैं।

टहनी का रस चूसने वाला सफेद कीट (The mango white bug. ;—यह खटमल की जाति का रस-चूषक कीट गर्मी के मौसम में पेड़ पर धीरे धीरे चढ़ता उतरता दिखलायी देता है।

मादा पेड़ के नीचे की मट्टी में अण्डे देती है। बाल कीट निकल कर पेड़ पर चढ़ जाते हैं और रस चूसते रहते है। ये कीट अमरूद और कटहल पर भी मिलते हैं इसलिए जहाँ कहीं मिलें कीट-नाशक उपचार से इनका भी नाश करा देना चाहिए। थोड़े हों तो चुन करके और अधिक संख्या में पेड़ पर चढ़ते हुए दिखलायी दें तो पेड़ के धड़ पर मोटे रस्से के समान चारों ओर से सन बाँध कर उसमे निम्न लिखित चिपकने वाला पदार्थ लगा देना चाहिए। कारबोलिक एसिड एक भाग, वेसलीन दस भाग, नीम का तेल पचास भाग और राल एक सौ बीस भाग मिला कर उबलते हुए पानी मे यह मिश्रण गरम करके लगाना चाहिए। पेड़ पर चढ़ने वाले कीट सन के पास पहुँचते ही चिपट कर मर जाते हैं। उपरोक्त मिश्रण के अभाव में यदि सन को क्रूड-आइल इमल्शन में डुबोकर बांध दिया जाय तो भी ठीक होगा।

मौर-चूषक कीट (Jassids)—इस कीट की मादा नये कोंपलों पर फाल्गुन-चैत्र मे अण्डे दे देती है जिनसे बाल कीट निकल कर पहले कोंपलों का और मौर (फूल) आने पर उनका रस चूस कर दस बारह दिन में पर सहित तरुण कीट बन जाते हैं। तरुण कीट भी मौर का रस चूसते रहते हैं। कभी कभी तो इनकी इतनी वृद्धि हो जाती है कि सभी मौर का रस चूस लेते हैं जिससे फल मिलते ही नहीं। इनके शरीर से मीठा रस निकल कर पत्तों पर और टहनियों पर गिरता रहता है। इस रस पर एक प्रकार की फंगस (Fungus) लग जाती है जिससे टहनियां

काली काली नज़र आती हैं। आकर में तरुण कीट पाव इञ्च से भी छोटा होता है।

पृष्ठ ९६ में दिया हुआ उपचार करके इनके आक्रमण से पेड़ बचाये जा सकते हैं। मौर आने के दो एक सप्ताह पहले से छिड़काव प्रारम्भ कर जब तक छोटे छोटे फल न बन जायँ छिड़काव करना चाहिए। करीब पाँच छः छिड़काव करने पड़ते हैं और छिड़काव का मूल्य लगभग ।।) प्रति पेड़ पड़ता है। छिड़काव सुबह में करना उत्तम होगा क्योंकि उस वक्त कीट अचैतन्य अवस्था में रहते हैं।

आम की मक्खी :—आड़ू की मक्खी ही आम के फलों पर भी आक्रमण करती है। पृष्ठ ९५ में दिये हुए उपचार से यह मारी जा सकती है।

आम का घुन :—यह पाव इञ्च से कुछ बड़ा अनाज के घुन के आकार का काले और भूरे रंग का एक घुन होता है जिसकी मादा छोटे-छोटे फलों पर अण्डे दे देती हैं। बाल कीट अण्डे से निकलते ही छिलके में छेद करके अन्दर घुस जाते हैं। ज्यों ज्यों आम बढ़ता जाता है छेद बन्द हो जाता है और बाहर से कुछ भी पता नहीं लगता। बाल कीट गूदे को खाते खाते जब गुठली की मींगी बनती है तो उसे खाने लग जाते हैं। पूर्ण बाढ़ पाने पर रूपान्तर करके तरुण कीट बाहर निकल आते हैं और दूसरे साल की फ़सल पर आक्रमण करने के लिए छाल में या मिट्टी में पड़े रहते हैं।

मौर आने लगे उस वक्त से पेड़ की सिंचाई की जाय और धड़ पर क्रूड-आइल-इमलशन का छिड़काव किया जाय तो बहुत कुछ बचाव हो जाता है। सिंचाई से भूमि के अन्दर के और औषधि से छाल में विश्राम करनेवाले कीट मर जाते हैं। आक्रमणित फल जला देने चाहिएँ।

कटहल :—आम पर आक्रमण करने वाला सफेद रंग का चूषक कीट इस पर भी पाया जाता है।

नारियल :—नारियल का घुन—यह भी अनाज के घुन जैसे भूरे रंग का डेढ़ इञ्च लम्बा घुन होता है जिसकी मादा पेड़ के कोमल भाग पर किसी तरह का घाव मिल जाने पर उसमें अण्डे दे देती है। बाल कीट निकल कर अपना भोजन करते हुए अन्दर घुसते चले जाते हैं। तरुण कीट पूर्ण बाढ़ पाने पर रूपान्तर करते हैं और क़रीब तीन सप्ताह में घुन निकल आता है। तरुण घुन रात्रि में उड़ते रहते हैं।

पेड़ पर कोई घाव खुला नहीं छोड़ना चाहिए। अलकतरे से सब बन्द कर देने चाहिएँ।

धड़-छेदक कीट—यह भी गोबरीले कीट की जाति का एक सींग वाला दो इञ्च लम्बा कीट होता है। नर को बड़ा सींग और मादा को बहुत छोटा सींग होता है। मादा कूड़ा कर्कट या गोबर की ढेरी में अण्डे दे देती है। बाल कीट उसी में अपना पोषण कर रूपान्तर करते हैं। पूर्ण बाढ़ पाया हुआ बाल कीट क़रीब चार इञ्च लम्बा और पौन इञ्च मोटा सफेद रंग का

छः पांव वाला होता है। तरुण कीट पत्तों के बीच में घुस कर कोमल स्थानों पर आक्रमण करके अपना पोषण करते हैं। दिन भर वहीं छिपे रह कर रात्रि में खाने के लिए बाहर निकलते हैं।

तरुण कीट रोशनी पर आकर्षित किये जाकर मारे जा सकते हैं। ताप जलाया जाय तो उसमें आकर ये गिर जाते हैं। यदि पेड़ मे हानि-कर्त्ता दिखलायी दे तो तार से निकालकर मार देना चाहिए। इस कीट से मरे हुये पेड़ को जला ही देना चाहिए। कूड़े कर्कट और गोबर की ढेरी नारियल के पेड़ों के पास नहीं होनी चाहिए। मिट्टी के घड़ों में सड़ती हुई रेण्डी की खली जगह जगह रख दी जाय तो कीट उस में आकर मर जाते हैं।

नींबू और संतरा की जाति को हानि पहुंचाने वाले कीट—

धड़-छेदक—संतरे में गोबरीले कीट की जाति का धड़-छेदक कीट कभी कभी लग जाता है। पृष्ठ ९४ में दिये हुए उपचार कर देने चाहिएँ। क्लोरोफार्म और क्रियोसोट मिश्रण के अभाव में कार्बन-बाइ-सलफाईड का उपयोग भी किया जा सकता है।

कोंपल-भक्षक नींबू की तितली—यह तितली देखने में बड़ी सुन्दर होती है। इसके पर बहुत से पीले धब्बे वाले काले रंग के होते हैं। मादा नये कोंपल पर सफेद रंग के छोटे छोटे अण्डे देती है जिनसे बाल कीट निकलकर कोंपल खा जाते हैं और कुछ बड़े

होने पर पत्ते भी खाने लग जाते हैं। छोटे कीट ऐसे मालूम होते हैं जैसे पत्तों पर पक्षियों की बीट गिरी हो। ये अपना रंग भी बदलते रहते हैं। पूर्ण बाढ़ पाया हुआ कीट हरे रंग का मोटे सिर वाला होता है। इसकी गर्दन पर एक पीली धारी होती है। कोष पेड़ पर ही बनाता है जो एक तार के सहारे से बँधा रहता है। इस कीट से नर्सरी में बहुत हानि होती है।

छोटे कीट को चुन कर और तितलियों को हाथ जाली से पकड़वा कर मार सकते है। यदि बाल कीट अधिक संख्या में हों तो आन्तरिक विष छिड़कवा देना चाहिए।

दूसरा कीट (Leaf miner) बहुत पतला होता है और पत्ते के बीच में रहता है। जिस रास्ते से यह पत्ते मे घूसता है वह रास्ता ऊपर से साफ़ दिखलायी पड़ता है। आक्रमण के कुछ दिन बाद पत्ते मुड़ जाते है। जिन पेड़ों को पूरी धूप और हवा नही मिलती उन पर इनका आक्रमण अधिक होता है। इसलिए ऐसा प्रबन्ध रखना चाहिए जिसमें धूप और हवा का अभाव न हो।

फल छेदक—बरसात मे एक जाति का पतंग (Ophideres fullonica) रात्रि में फलो को छेद देता है। छेद के आसपास पहले फल का रंग भूरा हो जाता है और बाद में फल गिर जाता है। दिन में यह कीट छाल मे छिपा रहता है।

इससे बचाने के लिए फलों को काग़ज़ की थैलियों में बांधना होगा या जाड़े की फ़सल न लेकर गर्मी की फ़सल ही लेनी ठीक होगी।

बेर :—एक प्रकार की फल की मक्खी का आक्रमण बेर के फलों पर भी होता है। उपचार पृष्ठ ९५ में दिये हुए अनुसार करना चाहिए और आक्रमणित फलों को जला देना चाहिए।

लीची :—इसके पत्ते को मोड़कर सुखा देने वाला एक जन्तु (Mites) होता है जो पत्तों के नीचे की ओर मखमल की सी बाढ़ से पहचाना जा सकता है।

उपचार—आक्रमणित पत्ते और टहनियों को जला देना चाहिए और पेड़ों पर क्रूड-आइल-इमल्शन और गंधक के फूल का छिड़काव करना चाहिए।

उपरोक्त शत्रुओं के सिवाय फलों के बागीचों में लू या ज़ोर की हवा और पाले से भी बडी हानि होती है। हवा से बचाने के लिए बाग़ीचों के चारों ओर अथवा निर्माणित दूरी पर बीच में भी जगह जगह पेड़ की कतारें या टट्टियाँ लगाना पड़ती हैं। बीच में लगाने के लिए शहतूत के पेड़ भी अच्छे होते हैं। एक तो ये जल्दी बढ़ जाते हैं और दूसरे इनकी जड़ें भी अधिक नहीं फैलतीं। काफी ऊँचे होते हुए भी काट-छांट से इन्हें टट्टियों के समान बनाकर रख सकते हैं। टट्टियां लगा देने से दूसरा लाभ यह होता कि ज़ोर की हवा से भूमि से जो पानी उड़ जाता है वह उड़ने नहीं पाता। पेड़ों की बाढ़ भी सीधी होती है।

पाले से बचाने के लिए निम्न लिखित उपचार होने चाहिएं।

छोटे पेड़ों के बचाव के लिए उन पर चटाई, घास की टट्टी अथवा ताड़ के पत्तों की छाया करनी चाहिए। बड़े पेड़ों का

बचाव (१) सिचाई (२) धुआं या (३) गर्मी पहुँचा कर किया जा सकता है।

सिंचाई—जिस दिन पाले की सम्भावना हो उस दिन जितनी बन सके सिंचाई कर देनी चाहिए। पानी एक बार गरम होने से इतना जल्दी ठंडा नहीं होता जितनी जल्दी वातावरण की हवा हो जाती है। जब मिट्टी मे पानी बना रहता है तो उसके अन्दर की गर्मी जल्दी से नष्ट नहीं होती। पानी इतना देना चाहिए कि मिट्टी गीली सी बनी रहे। बहुत कम पानी से लाभ नहीं होता। उसी भांति पानी इतना भी न हो कि क्यारियों में भरा ही रहे।

आम के मौर को घने बादल वाले दिन भी बड़ा नुकसान हो जाता है। ऐसे अवसर पर यदि फूलों पर पानी का छिड़काव करा दिया जाय तो फूल मुर्झाने या झड़ने नहीं पाते।

(२) धुआँ—पत्ते और घास की जगह जगह ढेरियाँ बना कर यदि ऊपर से कुछ गीली करके जलायी जायँ तो उनसे काफ़ी धुआं निकलता रहता है। यह धुआँ बाग़ीचों पर बादलों सा छाया रहता है जिससे पेड़ या पौधों पर पाले का पूरा २ असर नहीं पड़ता। मध्य रात्रि में या एक प्रहर रात बीतने पर ढेरियों में आग लगा दी जाय तो उत्तम होगा।

(३) वातावरण की हवा को कुछ अंश तक गरम करने की युक्ति विदेशों मे काम में लायी जाती है। कुछ यंत्र ऐसे बने हुए हैं जिनमें सस्ता तेल जला कर हवा गरम करते हैं बहु मूल्य पेड़

हों और जलावन सस्ता हो अथवा घास पात मिल सके तो आग जलाकर वातावरण कुछ अंश तक गरम किया जा सकता है।

इनके सिवाय फलों के वृक्षों पर या फलो पर जब सूक्ष्म जन्तु (Fungi or Bacteria) का आक्रमण हो जो बिना सूक्ष्म दर्शक यंत्रों की सहायता के नही पहिचाने जा सक्ते तो उनसे बचाने के लिए प्रान्तीय कृषि विभाग के कार्य कर्ताओं से जांच करा कर उनकी सम्मति अनुसार उपचार करने चाहिएं।

प्रकरण १०

फलों का विक्रय

यह विषय बड़ा ही गहन है। इसमे अधिक से अधिक लाभ वही उठा सकता है जो स्वयम् ग्राहकों तक माल पहुँचा सके। यह कार्य सब व्यक्तियों से नहीं हो सकता। शिक्षित अग्रसोची और शीघ्र निर्णयकर्त्ता व्यक्ति ही ऐसे काम कर सकते हैं। कहां किस प्रकार के माल की मांग है इसकी पूरी पूरी ख़बर रखनी पड़ती है। माल को किन युक्तियों से कम व्यय में और अच्छी स्थिति में बाहर लेजाना चाहिए; किस प्रकार ग्राहको को प्रसन्न कर उनसे द्रव्य प्राप्त किया जाय; माल की विज्ञप्ति की रीतियां आदि से पूरी जानकारी रखनी पड़ती है और साथ में बाग़ीचों की देख-भाल भी करनी पड़ती है।

जो इन सब झंझटों मे नही पड़ना चाहे अथवा वे लोग जिनके पास वहुत वड़े वग़ीचे हों और जो अपने समय का उत्तम उपयोग वग़ीचे की देखभाल में करना उचित समझें उनके लिए माल तैयार होने पर किसी थोक वन्द व्यापारी के हाथ बेचना ही ठीक होगा। ऐसे व्यापारी ख़रीदे हुए माल को स्थानान्तर कर सुभीतानुसार बेच देते हैं। साधारणतः उपयोग कर्ता ग्राहक के पास पहुँचने तक फल तीन चार मध्यस्थ व्यक्तियों के

हाथ से निकलते हैं और प्रत्येक अपना अपना नफ़ा चढ़ाकर माल को काफी महँगा कर देते हैं।

इनके नफे के सिवाय माल के उलट फेर में हम्माली, शहरो की चुंगी, तुलाई या गिनाई, धर्मादा इत्यादि का खर्च बढ़ता ही रहता है।

फलो की बिक्री साधारणतः पांच प्रकार से हो सकती है।

(१) कुछ वर्षों के लिए बग़ीचों को बेच देना।

इसमें जो व्यवसायी बाग़ीचा ख़रीदता है वह प्रति वर्ष फलने नही फलने अथवा आंधी और कीटादि से फ़सल को हानि पहुँचने नहीं पहुँचने की जोखिम में पड़ कर लेता है इसलिए यह स्वाभाविक है कि वह कम दाम देगा। इस रीति से बेचने में मालिक को आमदनी तो कुछ कम होती है लेकिन वार्षिक आय पक्की हो जाती है।

(२) बाग़ीचों की वार्षिक बिक्री :—

इसमें कुछ व्यापारी छोटे छोटे फलों को देखकर ही बाग़ उस फ़सल के लिए खरीद लेते हैं और कुछ ऐसे भी होते हैं जो पूर्ण बाढ़ पाये हुए फल ही ख़रीदते हैं। पहिली रीति से बेचने में देख-भाल नहीं करनी पड़ती और आँधी अथवा कीट से जो हानि की सम्भावना रहती है वह ख़रीददार के सिर पड़ती है। इसमें भी आमदनी कुछ कम ही होती है। यदि फसल अच्छी रही तो फलों के पूर्ण बाढ़ पाने पर ही बेचने में अधिक लाभ प्राप्त होता है।

(३) अपनी ओर से फलों को छांट करके मांग के अनुसार

बाज़ार मे पहुँचा कर थोक बन्द व्यापारी के हाथ बेचना। इसमें रास्ते में फल बिगड़ने न पावे इसका पूरा प्रबन्ध करना पड़ता है।

(४) स्वयम् अपने ही ग्राहकों तक पहुँचाना:—

इस प्रकार से बेचने मे कुछ विशेष परिश्रम करना पड़ता है परन्तु लाभ अच्छा होता है। इसमें फलो की छँटनी करनी पड़ती है और भेजने के लिए पेकिंग का सब सामान तथा एक मिस्त्री भी रखना पड़ता है जो काट-छॉट कर बक्सों को आवश्यकतानुसार बनाया करे और पार्सल ठीक से तैयार करदे।

जो व्यक्ति अपने ही हाथ मे सब कार्य्य रखना चाहता है उसके लिए निकटवर्ती बाज़ार मे अपनी एक दूकान भी रखना बहुत जरूरी है जिस पर कुछ फल और तरकारियाँ बिकती रहें। जो कृषक फलों की खेती करते हैं उन्हे फलों के पेड़ों के तैयार होने तक बीच की भूमि में कुछ तरकारियॉ भी उपजाना पड़ती है और उनसे अधिक से अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए अपनी दूकान होनी चाहिए। ऐसी दूकान का प्रबन्ध किसी भरोसे वाले मधुर-भाषी, स्वच्छता-प्रेमी व्यक्ति के हाथ में होना चाहिए। भरोसे वाला आदमी दूकान की पीठ अच्छी जमाता है। मधुर भाषण से ग्राहक प्रसन्न होकर माल ले ही जाते हैं। स्वच्छता-प्रेमी होने से माल को साफ सुथरा रक्खेगा ताकि ग्राहक आकर्षित हों।

(५) सहकारी मंडल द्वारा, जिसके सदस्य स्वयम् भी हो, व्यवसाय चलाना:—

आजकल इस प्रकार से व्यवसाय चलाने की ओर बहुत ध्यान दिया जाता है और यदि ठीक से चलाया जाय तो लाभ भी अच्छा होता है। अन्य प्रकार के व्यवसायों में जहाँ एक ही प्रकार का या क़रीब क़रीब एक ही प्रकार का माल तैयार किया जाता है वहाँ इसके सञ्चालन में किसी प्रकार की कठिनाई नही होती परन्तु फलों की खेती में जहाँ एक ही प्रकार के फल उत्पन्न करना ज़रा कठिन कार्य होता है, संघ के सञ्चालन में कुछ कठिनाइयाँ होती हैं। इस कार्य में सब से प्रथम पूर्ण विश्वास ही नहीं कुछ उदारता का भाव भी रखना पड़ता है। सभी कृषक एक ही प्रकार के उत्तम फल तैयार नहीं कर सकते; ऐसी स्थिति में लाभ के बँटवारे में झंझट पैदा हो जाता है। धीरे धीरे कृषक नीची श्रेणी का माल ऊँची श्रेणी के माल में किसी तरह से चलाने का प्रयत्न करते हैं जिससे कुछ काल में उदारता और विश्वास के भाव नष्ट होजाते हैं। संघ के कार्य कर्त्ताओं की नियुक्ति में कुछ लोग अपने अपने आदमी रखने का प्रयत्न करते हैं और सभी नियुक्त व्यक्ति भी ऐसे उच्च कोटि के नहीं होते जो सब सदस्यों के प्रति समानता का व्यवहार रख सकें। इन झंझटो से कुछ ही काल में संघ टूट जाते हैं।

उपरोक्त प्रकार की बाधाओं से संघ को धक्का नही पहुँचे इसलिए पहले पहल ग्रामीण संघ स्थापित करने चाहिएं जिनमें समान प्रेम-भाव वाले उदार-हृदयी व्यक्ति सदस्य बनाये जायँ और वे आदर्शनीय उदाहरण स्थापित कर दूसरों के हृदय में भी

पारस्परिक सद्व्यवहार के भाव जागृत करें। भारत की वर्त्तमान स्थिति में पहिले पहिल अखिल भारतीय संघ या प्रान्तीय संघ स्थापित करने में सफलता नहीं होगी। प्रारम्भ में ग्रामीण और फिर जिला संघ बनाने चाहिएं। ऐसे संघ मे एक ही प्रकार के रहन-सहन और व्यवहार वाले सदस्य रहते हैं इसलिए ऐसे संघ का सञ्चालन सफलता पूर्वक हो सकता है। संघ के सञ्चालनार्थ सदस्यों को अपने लाभ का कुछ भाग तो व्यय अवश्य करना पड़ता है परन्तु लाभ के विचार से व्यय कुछ भी नहीं है। किसी प्रकार का सुधार करने की आवश्यकता होती है तो संघ के सभी सदस्य सूचित किये जाते हैं और सब एक साथ सुधार कर लेते हैं। किसी प्रकार की व्याधि का सामना करने के लिए भी एक दो या दो चार पृथक पृथक व्यक्तियों की अपेक्षा संघ अधिक सफल हो सकता है। किस प्रकार के माल की कहाँ खपत अधिक होगी और कहाँ विषेश लाभ हो सकता है इसकी सूचना भी संघ आसानी से रख सकता है और माल का उचित मूल्य प्राप्त कर सकता है। पृथक पृथक व्यक्तियों की चढ़ा ऊपरी से जो बहुधा मूल्य घटाना पड़ता है वह नहीं होने पाता। माल भेजने के लिए भी बक्स, टोकरियां वगैरह बहुत सस्ते मूल्य में मिल जाती हैं। माल एक साथ भेजने से सस्ते मूल्य पर बाहर भेजा जा सकता है। थोड़ा माल रेल द्वारा बाहर भेजा जाय तो खर्च बहुत पड़ जाता है। यदि कुछ व्यक्ति संघ बनाकर भेजे तो पूरे डिब्बे भर कर भेज सकते हैं जिनका दर बहुत कम पड़ता है।

फलों का चालानः—व्यवसायार्थ फलों की खेती करने वालों को फलों के चालान की भाँति भाँति की युक्तियाँ पूरी तरह से ध्यान में रखनी चाहिएं। विशेष लाभार्थ फलों का बाहर भेजना उनके लिए एक अनिवार्य कर्तव्य समझना चाहिए। घरू अर्थात् निकटवर्ती बाज़ार में अच्छा मूल्य नहीं प्राप्त हो सकता क्योंकि जहाँ जो चीज़ पैदा होती है वहाँ लोग अपने आप ही निजी बग़ीचों मे अपने घरू उपयोग के लिये तैयार कर लेते हैं और आवश्यकता से अधिक होने पर सस्ते मूल्य पर बाज़ार मे बेच देते हैं। इनके सिवाय छोटे बग़ीचे वाले कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनके पास माल कम होता है और बाहर भेजने की झंझट से बचना चाहते हैं वे भी सस्ते मूल्य पर निकटवर्ती बाज़ार मे अपना माल बेच लेते है। ऐसी स्थिति में दूर के बाज़ार से ही अधिक लाभ की आशा की जा सकती है।

फलों का बाहर भेजना उनके गुण, मांग मूल्य, फलो की भौतिक स्थिति, उनकी आयु तथा स्थानान्तर की सुविधा पर निर्भर है।

गुणः—बहुत से फल ऐसे हैं जिनकी मांग, उनके गुण पर ही निर्भर है जैसे बेदाना अनार, मौसम्बी या माल्टा और संतरा। ग़रीब और साधारण स्थिति वाले साधारणतः इन्हे नहीं ख़रीदते परन्तु जब कोई व्याधि उनके घर में आ जाती है तो व्याधि-ग्रस्त व्यक्तियों के लिए इन्हें इनके गुण के

कारण खरीदना ही पड़ता है। निकटवर्ती बाजार मे नही मिलने से दूर से भी मँगवाने पड़ते हैं।

मांगः—यह स्थानीय जल वायु और ग्राहकों की चाह पर निर्भर है। जिन स्थानो मे गर्मी विशेष होती है वहां गर्मी में संतरा और माल्टा की मांग विशेष होती है। इसी तरह से जाड़े में काजू, किसमिस, अखरोट आदि सूखे फलों की मांग अधिक होती है।

एक ही वस्तु जो कुछ व्यक्तियों के लिये अधिक स्वादिष्ट हो दूसरों के लिए उतनी ही स्वादिष्ट नहीं भी हो सकती है। उदाहरणार्थ बहुत से व्यक्ति ऐसे हैं जो कटहल और बेल बड़े प्रेम से खाते हैं और कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्हे ये बिलकुल अच्छे नही लगते। आम, सेव इत्यादि कुछ फल ऐसे हैं जो सब को अच्छे मालूम होते हैं और जिस स्थान पर इनकी अच्छी जातियां पैदा होती है वहां से लोग अपनी इच्छा पूर्ति के लिए मँगवाते हैं। इसलिए कहां किस स्थान पर कौन से माल का चालान लाभप्रद होगा यह भी चालानकर्ता को ध्यान में रखना चाहिए और पहुँच के स्थान पर फलों की तैयारी के दो सप्ताह पहले से ही विज्ञापनों द्वारा फलो के नाम, वर्ग तथा दर की सूचना देते रहना चाहिए।

मूल्यः—संसार मे सभी जगह धनाढ्य, निर्धन और साधारण स्थिति के व्यक्ति पाये जाते हैं उसी भांति हमारे देश में भी तीनो प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं परन्तु पहली की अपेक्षा दूसरी और तीसरी श्रेणी के व्यक्ति कही अधिक है। ऐसे

व्यक्तियों के लिए अधिक मूल्य वाले फल खरीदना असम्भव हो जाता है इसलिए यह देखना बहुत जरूरी है कि फलों की तैयारी तथा उनके भेजने में इतना अधिक व्यय न हो जाय कि उनका मूल्य ही बहुत बढ़ जाय।

फलों का मूल्य उनकी तैयारी, तथा भेजने के खर्च के सिवाय बाजार में उनकी आमद और मांग पर भी निर्भर है। निकटवर्ती बाजार मे कम आमद होने से मूल्य बढ़ जाता है। जब मूल्य बढ़ जाता है तो आमद भी अधिक हो जाती है और वह फिर घट जाता है इसलिए घबराकर माल को कम मूल्य पर जल्दी नहीं निकाल देना चाहिए। दूरवर्ती बाजार के भाव की सूचना रखते हुए दाम घटाना बढ़ाना चाहिए।

फलों की भौतिक स्थितिः—भौतिक स्थिति अनुसार फल चार भागों मे विभाजित किये जा सकते हैं।

(१) सूखे फल जैसे सूखे नारियल, काजू, किसमिस, खुबानी आदि ऐसे फल हैं जो कभी भी और कितनी ही दूरी पर बिना पेकिंग का व्यय वढ़ाये साधारण बोरों में भेजे जा सकते है।

(२) कठोर फल जैसे हरे नारियल, कैथ, बेल, ये भी सहूलियत से भेजे जा सकते हैं परन्तु सस्ते बिकने के कारण दूर तक नही भेजे जा सकते।

(३) टिकाऊ फल :—सेव, नासपाती, संतरा, आम आदि ऐसे फल हैं जिनसे अच्छा मूल्य प्राप्त किया जा सकता है और

पकने पर उनके ठहरने की स्थिति अनुसार अच्छा पैकिंग करके दूर तक भेजे जा सकते हैं।

(४) वे फल जो अपनी कोमलता के कारण पकने पर एकाद रोज़ से अधिक नहीं ठहर सकते; जैसे जामुन, खिरनी, करौन्दे आदि। ऐसे फल दूर नही भेजे जा सकते।

स्थानान्तर की सुविधा— जहां रेल से माल भेजा जा सके वहां जल्दी, कम व्यय और अच्छी स्थिति में माल दूर तक भेजा जा सकता है। जहाँ पक्की सड़कें हों वहां बैल गाड़ी द्वारा और जहां सजीव नदियां हों वहां नदियों में नाव द्वारा भी कुछ दूरी तक माल अच्छी स्थिति मे भेजा जा सकता है परन्तु जहाँ रास्ते ख़राब हों वहाँ कोमल फलों को अच्छी हालत में भेजना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होता है। ऐसे स्थानों पर मनुष्यों द्वारा या ऊँट, बैल, घोड़े या गदहों पर माल भेजना पड़ता है जिससे मूल्य भी बढ़ जाता है।

चलान की युक्तियाँ:-हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि फल बाज़ार में ताज़े, अखण्डित और व्याधि-रहित स्थिति मे पहुँचें इसलिए पेड़ पर से फल उसी दिन तोड़ना चाहिए जिस दिन भेजना हो और जहाँ तक हो रात्रि की ठण्ड खाये हुए हों अर्थात् सुबह में तोड़ कर छँटती करके उसी दिन चालान करना चाहिए।

बड़े फल पेड़ पर से बड़ी सावधानी से तोड़ने चाहिएं जिसमें उन्हें चोट न पहुँचे। चोट खाया हुआ फल अपने आप तो नष्ट

हो ही जाता है और साथ वाले दूसरे फलों को भी बिगाड़ देता है। जहां तक हो फलों को पेड़ पर चढ़ करके अथवा सीढ़ी लगा कर हाथ से तोड़ना चाहिए। पतली डालियों के फल सींकी* से तोड़े जा सकते हैं, यदि उसको भी पहुँच के बाहर हो तो डालियों को हिला कर फलों को कपड़ों में झेलना चाहिए। जो फल छोटे हों जैसे लीची तो उनके गुच्छे के गुच्छे तोड़ने ठीक होंगे। उससे भी छोटे फल जैसे खिरनी या जामुन हों तो उन्हें गिराते समय पेड़ के नीचे कुछ थोड़ा सा घास बिछा देना चाहिए। ऐसे फल कपड़े में नहीं झेले जा सकते क्योकि उनमे चिकना दूध होता है उससे अथवा उनके रंग से कपड़ा बिगड़ जाता है। घास पर गिरने से फल टूटते नहीं और आसानी से चुने जा सकते हैं।

जब फल नजदीक भेजना हो तो पके हुए या ऐसे फल जो दो एक रोज़ में पक जायँ भेजने ठीक होंगे। दूरी के लिए जहाँ कि तीन चार दिन का समय लगता हो ऐसे फल तोड़ कर भेजने चाहिएं जो वहाँ पहुँचने पर पकें। जब इससे भी अधिक समय लगे अथवा फल कोमल हों तो बर्फ द्वारा ठढे रक्खे जाने वाले डिब्बों में या जहाज़ के ठंढे गोदाम मे रखवाने चाहिएं।

चालान के प्रथम बाज़ार की मांगानुसार फलों की छंटनी

---

* एक लम्बे बास के मुँह पर लोहे या बेत का नौ दस इञ्च व्यास का एक कुण्डल बांधकर उसमे एक जाली लगा दी जाती है जिसमें फल टूट कर जाली में गिरे। फल जल्दी से टूट जायँ इसलिए कुण्डल मे बांस के दो टुकड़े जो एक ओर से तेज़ किये हुए होते हैं गगा दिये जाते हैं। फलों के डण्ठल इस युक्ति से जल्दी टूट जाते हैं।

होनी चाहिए। अखण्ड, उत्तम आकार और सुन्दर रंग वाले प्रथम श्रेणी मे, उनसे हलके लेकिन अखण्ड दूसरी श्रेणी में और अन्य तीसरी श्रेणी में रखना चाहिए। तीसरी श्रेणी के फलों को निकटवर्ती बाजार में ही बेचना चाहिए। उन्हें दूर भेजना वृथा है क्योंकि एक तो उनसे यथेष्ट मूल्य नहीं प्राप्त हो सकता और दूसरा टूटे-फूटे होने से उनके रास्ते में बिगड़ जाने की सम्भावना रहती है।

छंटती के पश्चात् उनके भेजने का प्रबन्ध होना चाहिए।

यदि फल नजदीक भेजने हों तो मजदूर द्वारा टोकरियों मे भरकर अथवा गाड़ी, गधे, घोड़े, खच्चर, बैल, भैंसे या ऊँट पर लाद कर भेज सकते हैं। दूर भेजने के लिए नाव, रेल, मोटर या वायुयान काम में लाये जाते हैं। विदेश में जहाजों या वायुयानों द्वारा भेजने होते हैं।

माल भेजने के लिए कोई भी सवारी हो सकती है परन्तु पैकिंग ऐसा होना चाहिए जिसमें रास्ते में एक दूसरे से रगड़ खा कर फल बिगड़ने न पावे या कोई आसानी से उसमें से कुछ माल पार न कर ले।

सूखे फल जैसे खुवानी, काजू, किसमिस आदि बोरों में भेज सकते है। नारियल जैसा कठोर फल भी बोरे में भेजा जाता है। टिकाऊ लेकिन कोमल जैसे सेव, आम, संतरा आदि बाँस की टोकरियो में या देवदारु अथवा प्लाई वुड के बक्स में भेजना चाहिए। प्लाई वुड का बक्स मजबूत भी होता है और हल्का भी होता है। कटहल जैसा फल बिना पेकिंग के ही भेज सकते हैं।

इसके डण्ठल से लेबल बांध देना ही काफ़ी होता है। कच्चे केले भी बिना पेकिंग के भेज सकते हैं।

बहुमूल्य और प्रथम श्रेणी के फलों को पतले प्लाई वुड या देवदारु के बक्सों में भेजना ठीक होता है। प्रत्येक बक्स में फलों की दो या तीन तह से अधिक नहीं होनी चाहिएं। फल एक दूसरे से रगड़ कर बिगड़ने न पावें अथवा वे हर प्रकार की व्याधि से बचे रहें इसलिए प्रत्येक फल को पतले रंगीन काग़ज़ में लपेट कर रखना चाहिए। अधिक सावधानी के लिए सेलीसीलाईज्ड* काग़ज़ काम में लाया जा सकता है। काग़ज़ के उपयोग से फलों पर धूल भी नहीं जमने पाती और उनका रंग भी चमकीला बना रहता है।

अनार, नासपाती आदि जैसे फल लकड़ी के क्रेट में चटाइयाँ लगाकर उनमें बन्द करके भेजे जा सकते हैं।

जो फल छोटे हों उन्हें छोटी २ बाँस की टोकरियों में जिनमें एक सेर के लगभग फल रक्खे जा सकें रख कर टोकरियों को बड़े बक्स में रख सकते हैं। एक बक्स में ऐसी टोकरियों की दो तीन तह ही रखनी चाहिएं।

फलों को रखते समय जो जगह ख़ाली हो उसे लकड़ी के महीन छीलन से या हरे पत्तों से भर देना चाहिए। बक्सों में दोनों

---

*सेलीसैलिक ऐसिड (Salicylic acid) और एल्कोहल (Alcohol) के घोल में पानी सिर्फ़ इतना दिया जाय कि जिसमें ऐसिड नीचे जमने न पावे। ऐसे घोल में काग़ज़ डुबोकर सुखा करके काम में लाया जाता है।

बाजू पर कुछ छोटे २ छेद हवा के आवागमन के लिये बनवा दिये जायँ तो फल अच्छी स्थिति में बने रहते हैं।

बक्सों का आकार और वज़न ऐसा होना चाहिए कि कुली आसानी से उठा सकें और धीरे से रख सकें। अधिक से अधिक दो फीट लम्बा, फुट सवा फुट चौड़ा और करीब एक फुट गहरा होना चाहिए। वज़न में लगभग एक मन का बोझ ठीक होता है। टोकरियों का वज़न दस सेर से बीस सेर तक ठीक होगा।

प्रत्येक पार्सल पर बड़े बड़े सुन्दर अक्षरों में फल और विक्रेता का नाम अवश्य होना चाहिए। यह भी विज्ञापन का काम करता है। एक पार्सल में एक ही श्रेणी के फल होना चाहिए। श्रेणी का वर्णन, फलों की संख्या और वज़न भी अवश्य लिखना चाहिए। ऐसा करने से माल जल्दी खप जाता है और मूल्य भी अधिक प्राप्त होता है। सबसे विशेष लाभ तो यह होता है कि एक बार पीठ जम जाने से लोग बिना सन्देह के तुरन्त माल खरीद लेते हैं। उसे खोल कर दिखलाने में समय नष्ट नहीं होता। जो नियम पौधे भेजने के पृष्ठ ७१ पर दिये गये हैं उन्हीं को ध्यान में रखकर फलों के पार्सल भी भेजने चाहिएं।

विदेशों से व्यवसाय—पाठकों के सूचनार्थ कुछ अङ्क नीचे दिये जाते हैं जिनसे ज्ञात होगा कि हमें फलों के व्यवसाय की ओर कितनी उन्नति करने की आवश्यकता है।

निम्न लिखित अङ्क जहाज़ द्वारा समुद्र के रास्ते से आये हुए माल के है।

भरती के अङ्कों की जांच करने से ज्ञात होता है कि फलों की आयात सदा बढ़ती ही जा रही है। १९३१-३२ में जहां १,२८,०६, १२६ रु० का माल आया था वही १९३५-३६ में २,१०,५२,७७५ रु० पर पहुँच गया। फलो के उपयोग का जैसा प्रचार बढ़ रहा है यह देखते हुए फलों की आमद कम होगी ऐसी सम्भावना नही दीखती। ऐसी स्थिति में भारतीय कृषि-प्रेमियों का लक्ष्य फलों की खेती की ओर होना अत्यन्त ही आवश्यक है; भविष्य उज्वल ही ज्ञात होता है। स्वतन्त्र धन्धा और परिश्रम का उचित पुरस्कार पाने में कोई सन्देह नहीं ज्ञात होता।

उसी भांति मुरब्बे और सुरक्षित फलों (Tinned and bottled fruits) के कारखाने भी देश में खोलने को बहुत आवश्यकता है। आम, लीची, संतरे इत्यादि कई ऐसे फल हैं जो मौसम में बहुत ही सस्ते बिक जाते हैं और ग़ैर मौसम में मिलते ही नहीं। हाल में छोटे छोटे कुछ कारखाने अवश्य खुले है परंतु व्यवसाय की दृष्टि से इनकी संख्या 'नही' के बराबर है। ऐसे फलों की कटती या निर्यात बिलकुल नही है।

अचार, चटनी आदि में आयात की अपेक्षा निर्यात अवश्य अधिक है परंतु पिछले पांच साल के अङ्कों को देखते हुए निर्यात घटता ही हुआ नजर आता है। इसलिए इस व्यवसाय को बढ़ाना भी बहुत जरूरी है।

नाम जिन्स	आयात या भरती—मूल्य रुपये मे				
	१९३१-३२	१९३२-३३	१९३३-३४	१९३४-३५	१९३५-३६
ताजे फल	६,०३,१३०	७,०७,०५३	६,२४,०१५	८,२८,६६७	७,६७,६६०
सूखे फल—(अञ्जीर, किसमिस, बादाम, खोपरा, नारियल वग़ैरह)	१,११,३२,८८७	१,१४,४६,०७०	१,११,४६,२५६	१,३९,३६,९७७	१,८१,७२,३९२
मुरब्बे (Jams and Jellies)	३,१३,८८८	३,६९,५६७	५,६०,९६५	५,७७,२२१	६,२३,४०१
सुरक्षित फल (Tinned and bottled fruits)	४,७५,२०४	६,१३,२१७	८,२८,०८३	८,८६,२५२	९,१२,१३७
चटनी, अचार वग़ैरह	२,८१,०१७	३,३७,६७६	५,२१,५२०	५,४=,५७१	५,७७,१८५
कुल	१,२८,०६,१२६	१,३४,७३,५८३	१,३६,८०,८३९	१,६७,६९,६८८	२,१०,५२,७७५

नाम जिन्स	निर्यात या कटती—मूल्य रुपये में				
	१९३१-३२	१९३२-३३	१९३३-३४	१९३४-३५	१९३५-३६
ताज़े फल	१,५०,१२२	१,८८,२८५	३,८८,७६५	१,९१,१०१	१,७३,०७२
सूखे फल—(अञ्जीर, किसमिस, बादाम, खोपरा, नारियल वगैरह)	५६,७३,९८८	३६,५९,१७१	६९,३४,४२२	७९,३४,३७२	१,३३,८०,८२७
मुरब्बे (Jams and Jellies)	..	..	.	.	
सुरक्षित फल (Tinned and bottled fruits)	...	..	.		
चटनी, अचार वगैरह	७,७८,३६१	८,६९,५८१	८,२३,००७	६,३६,४८३	४,९५,५१८
कुल	६६,०२,४७१	४७,१७,०३७	८१ ४६,१९४	८७,६१,९५६	१,४०,४९,४१७

नोट:—१९३१-३२, १९३२-३३ और १९३३-३४ के आयात निर्यात के अङ्क पिछले संस्करण के अङ्को से भिन्न हैं इसका कारण यह है कि पहले ब्रह्म प्रदेश भारतवर्ष मे शरीक था और अब पृथक हो गया है इसलिए वहां के अङ्क निकाल दिये गये हैं।

प्रकरण ११

फलों के वृक्षों का वर्गीकरण और खेती की विस्तारित रीति

फलों के वृक्षों का वर्ग निर्माण तीन प्रकार से हो सकता है।

१ बनस्पति शास्त्रानुसारः—

इस रीति से वर्ग निर्माण में कुछ अंश तक पेड़ों के गुणावगुण तथा उनके संवर्धन की रीति और खाद की मांग का पता चल जाता है।

२ वृक्षों के आकारानुसार जैसा कि पृष्ठ २२ में किया गया है।

३ उपयोगानुसार जैसेः—

(क) ताज़े फल—पकने पर ताजे खाये जाने वाले फल।

(ख) सूखे फल—सुखाकर उपयोग मे लाये जाने वाले फल।

(ग) चटनी मुरब्बा आदि के लिए काम में लाये जाने वाले फल।

इनमें से पहली रीति से वर्ग निर्माण किया जाना उत्तम है परन्तु फलो की जाति के नाम हिन्दी में तो क्या अंग्रेज़ी में भी नहीं हैं। वे सब लेटिन में हैं इसलिए साधारण पढ़े लिखे पाठकों की समझ में नहीं आ सकते। इस कारण से इस पुस्तक में

तीसरी रीति का उपयोग किया गया है और फलों में वे ही फल चुने गये हैं जो अधिकतर भारतवर्ष में होते हैं या हो सकते हैं।

सूखे फलों में दो तीन ऐसे फलों का वर्णन है जो अफ़ग़ानिस्तान की तरफ़ से अथवा बाहर से आते हैं। चूंकि उनका उपयोग भारतवर्ष में बहुत होता है पाठकों की जानकारी के लिए संक्षिप्त रूप से उनका वर्णन किया गया है।

तीसरे वर्ग के पृथक पृथक उपवर्ग में निम्न लिखित फल समावेष्ठित हैं।

ताज़े फलः—अङ्गूर, अमरूद, अनानास, अनार, आडू आम, ककड़ी, कटहल, कमरख, केला, खजूर, खरबूज़ा, खिरनी, गुलाब जामुन, चकोतरा, जामुन, तरबूज़, तुरंज, तेंदू, दिलपसन्द, नासपाती, नीबू, पपैया, फालसा, बीही, बेर, बेरी (गूज़ बेरी, ब्लेकबेरी, स्ट्राबेरी), बेल, रामफल, रैंता, लीची, लोकाट, शफ़ताळू, शरीफ़ा, शहतूत, संतरा सपाटू, सिंघाड़ा, सेव।

सूखे फल :—अखरोट, अञ्जीर, काजू, खुबानी, चिलगोजा, चिरौंजी, नारियल, पिस्ता, बादाम।

चटनी मुरब्बा आदि के फल :—आलू बुखारा, आँवला इमली, करोंदा, कैथ, वाम्पी (आमपोच)।

उपरोक्त वितरण बिलकुल सीमा बद्ध नहीं है क्योंकि बहुत से फल ऐसे हैं जो ताजे भी खाये जाते हैं और उन्हे सुखाकर भी खाते हैं अथवा उनसे चटनी, अचार, मुरब्बा आदि भी बनाये जाते हैं जैसे आम। इसी भांति अञ्जीर की गणना ताजे और

सूखे फलो में हो सकती है। जिसकी जिस वर्ग मे विशेष उपयोगिता पायी जाती है उसी में उसे स्थान दिया गया है।

ताज़े फल

अंगूर Grapes *Vitis vinifera*

अंगूर की खेती फ्रान्स और इटली में बहुतायत से होती है। धीरे धीरे अन्य देशों में भी इसकी खेती का विस्तार बढ़ रहा है। भारतवर्ष में सीमा प्रान्त और बलोचिस्तान की तरफ़ के अंगूर अच्छे होते हैं और सारे उत्तर भारत में वहीं से इसकी पूर्ति होती है। दक्षिण मे नासिक, पूना, औरंगाबाद, आदि स्थानों में भी अंगूर होते हैं।

फलों के आकार, रंग स्वाद, छिलके की मोटाई और बीज की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति अनुसार अंगूर कई तरह के होते हैं परन्तु साधारणतः हम इन्हे दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

एक बिना बीज के और दूसरे बीज वाले।

बिना बीज के बहुधा हरे या मोतिया रंग के गोल और छोटे दाने वाले होते हैं। बीज वाले हरे, मोतिया, काले या बैंगनी रंग के गोल या लम्बे दाने वाले पहले की अपेक्षा बड़े होते हैं।

अंगूर का पौधा डाली, दाब कलम या गूटी से तैयार किया जाता है! इसके लिए एक साल की स्वस्थ टहनी जिसकी छाल का हरा रंग मिटकर भूरा हो गया हो काम में लानी

चाहिए। डाली बरसात में और गूटी अन्तिम बरसात में लगानी चाहिए। पौधों का चालान देवदारू के बक्सों में किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद—इसके लिए दुमट मिट्टी अच्छी होती है; जिस मिट्टी में पानी लगता हो अंगूर ठीक नहीं होते। गर्मी में चार सौ मन गोबर का खाद और क़रीब तीन मन हड्डी का चूरा प्रति एकड़ के हिसाब से डाल कर जुताई अच्छी तरह करवानी चाहिए। अंगूर के लिए मछली का खाद भी बहुत अच्छा होता है। चार भाग सरसों या एरण्डी की खली में एक भाग हड्डी का चूरा मिला हुआ मिश्रण पौष माघ में प्रति पौधा सेर सवा सेर दे दिया जाय तो वह भी लाभप्रद होता है।

पौधा लगाना—बरसात में या जाड़े के प्रारम्भ में आठ आठ फ़ीट के अन्तर पर क़लमें या पौधे लगाने चाहिए। लता के चढ़ने के लिए कुछ सहारे का प्रबन्ध करना पड़ता है। इसके लिए बांस की टट्टियां, मचान या तार लगाने होते हैं। उत्तम तो यही है कि पाँच छः फीट ऊंची टट्टियाँ लगा दी जायं ताकि लता को धूप और हवा भी पूरी मिलती रहे और फलों के तोड़ने मे भी सहूलियत हो। कहीं कहीं निर्माणित दूरी पर ईंट चूने के खम्भे बनवा कर उनमें एक या दो तार लगा दिये जाते हैं और लता तार के सहारे पर चढ़ा दी जाती है। सीमा प्रान्त की तरफ अंगूर के बाग़ीचे के चारों ओर मिट्टी की ऊँची दीवाल बना दी जाती है और लताएँ इतने नीचे मचानों पर चढ़ाई जाती हैं कि

घुटनों के वल चल कर अंगूर तोड़ना पड़ता है। बम्बई प्रान्त में कही कहीं पंगारा (Erythrina indica) नाम का पेड़ अंगूर की लता के साथ लगा दिया जाता है जिस पर लता चढ़ जाती है। वरसात के पहले पंगारा की छ छ फीट लम्बी क़लमें अंगूर के पेड़ से नौ दस इञ्च की दूरी पर लगा दी जाती हैं। अंगूर की जड़ गहरी चली जाती है और इसकी छिछली होती है इसलिए लता को हानि नहीं पहुँचती।

सिंचाई और काट छाँट—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। जब फल पकने लगे तब पानी नहीं देना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से स्वाद बिगड़ जाता है। जब पौधा लग जाय तो वीच की फुनगी तोड़ देनी चाहिए ताकि नये कोपल फूट जायं। प्रतिवर्ष फल मिल जाने के पश्चात् अथवा जाड़े मे, जिन टहनियों से फल मिल जायँ उन्हे पाँच छ इञ्च छोड़ कर आगे का शेष भाग काट देना चाहिए। इन छोड़ी हुई टहनियो में से जो नई टहनियाँ निकलती हैं उन पर अंगूर बैठते हैं। जब फल के गुच्छे वैठ जायँ तो उनके आगे एक दो इञ्च टहनी छोड़ कर बाकी काट देनी चाहिए। ऐसा करने से फलो की बाढ़ अच्छी होती है। अंगूर को पाले से भी वहुत हानि पहुँचती है इसलिए हो सके तो पृष्ठ १०८ में दिये हुए उपचार करने चाहिएं।

फ़सल की तैयारी और चालान—क़लम लगाने के समय से दो तीन साल की आयु की होने पर लताएं फलने लगती हैं और चालीस पचास साल तक अच्छी फलतो रहती हैं फूल

आने के समय से चार पाँच महीने में फल तैयार होते हैं। एक पेड़ से दस बारह सेर बढ़िया अंगूर मिल जाते हैं। सीमाप्रान्त की तरफ़ अंगूर भाद्रपद और आश्विन में प्राप्त होते हैं। मैदानों में गर्मी में प्राप्त होने वाली फ़सल अच्छी होती है। जाड़े के प्रारम्भ में जो फसल आती है वह बहुत कम होती है और अच्छी भी नहीं होती। दक्षिण भारत में फाल्गुन चैत्र (मार्च) से अंगूर मिलना प्रारम्भ हो जाते हैं।

अंगूर का फल बड़ा कोमल होता है इसलिए छोटी-छोटी टोकरियो में या प्लाइवुड के बक्सों में पाँच छः सेर के लगभग महीन घास या केले के सूखे पत्तों के साथ भर कर भेजना चाहिए। विशेष सावधानी के लिए एक एक सेर की टोकरियाँ बनाकर उन्हें बहुत सी इकट्ठी रख कर क्रेट में भेज सकते हैं। प्रत्येक गुच्छे में से छोटी कैंची से ख़राब और बहुत छोटे अंगूर काट देने चाहिएं। गुच्छों को उस वक्त तोड़ना चाहिए जब कि वे क़रीब क़रीब पके हों अर्थात् तोड़ने पर तीन चार रोज़ बाद उपयोग के योग्य हो जायँ। चुने हुए अंगूर छोटी टोकरियो में रुई में भी भेजे जाते हैं।

उपयोग और गुण—ताज़े फल वैसे ही खाये जाते हैं। दाख (सूखे अंगूर) औषधि और मिठाइयों में डाली जाती है। अंगूर बलवर्धक और खांसी और बुख़ार को मिटाने वाले होते हैं। वायुजनित रोग में भी इनका सेवन करना चाहिए। ये दस्तावर और आँखों को हितकारी होते हैं। इनसे ख़ून भी साफ़ होता है।

अमरूद Guava—*Psidium guyava.*

अमरूद मैदानों में सब जगह पाये जाते हैं। पहाड़ पर ये नहीं फलते। इनके पेड़ पन्द्रह बीस फ़ीट ऊँचे होते हैं। फल आकार मे कई तरह के होते हैं; कोई गोल और कोई लम्बे, किसी का छिलका साफ तो किसी का ऊँचा नीचा, कोई कैथ इतने बड़े तो कोई नीबू से भी छोटे होते हैं। गूदा किसी का लाल तो किसी का सफेद होता है। अमरूद इलाहाबाद और मिर्ज़ापुर के आस-पास के बड़े विख्यात हैं। इलाहाबाद का सफेदा और करेला ऐसी दो जाति के फल अच्छे होते हैं। दोनों का गूदा मीठा सफेद और कम बीज वाला होता है। पहले का छिलका साफ और दूसरे का करेले जैसा होता है। सम्भव है इसी से इसका नाम करेला पड़ा हो। अमरूद के पौधे बीज से या भेंट कलम से तैयार किये जाते हैं। कही कहीं गूटी से भी तैयार करते हैं। ये क्रियाएँ बरसात में होनी चाहिएं। भेंट क़लम के लिए बीजू पौधे नर्सरी में तैयार करके गमलों मे लगा देने चाहिएं। जाड़े में प्राप्त होने वाले पके फल के बीज सुखा कर राख के साथ बरसात तक भली भांति रक्खे जा सकते हैं। इन्हे वर्षा के प्रारम्भ में लगा देना चाहिए।

अमरूद के पौधे काफी मजबूत होते हैं इसलिए टोकरियों में इनका चालान आसानी से किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद—अमरूद के लिए बलुआ दुमट ज़मीन अच्छी मानी गयी है वैसे ये सब प्रकार की ज़मीन में हो जाते

हैं। पेड़ कठोर होता है इसलिए यदि थोड़ा बहुत पानी भी लग जाय तो यह बरदाश्त कर लेता है। उसी भांति कुछ ठंढ बरदाश्त करने की शक्ति भी इसमें है। गर्मी के दिनों में अच्छी जुताई के पश्चात् पन्द्रह से अठारह फ़ीट की दूरी पर तीन फ़ीट व्यास के उतने ही गहरे गढ़े बनवाकर भरते समय उनकी मिट्टी में पचीस तीस सेर गोबर का खाद और क़रीब दो सेर हड्डी का चूर्ण मिला देना चाहिए। दो एक बारिश के बाद जब मिट्टी जम जाय तब पौधे लगाने चाहिएं। प्रति वर्ष वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में जड़ें खोलकर गोबर, पत्ते और हड्डी के मिश्रण का खाद दे देना चाहिए। मिश्रण में एक शतांश हड्डी ठीक होगी।

पौधा लगाना—बरसात के प्रारम्भ में या जाड़े के अन्त में क़रीब दो साल की आयु के पौधे लगाना ठीक होता है।

सिंचाई और काट छांट—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। काट-छांट बहुत लोग करते ही नहीं परन्तु अच्छे फल प्राप्त करने के लिए काट-छांट अवश्य होनी चाहिए। छोटे पौधे को इस तरह बढ़ने दिया जाय कि प्रत्येक धड़ पर तीन चार शाखाएं और प्रत्येक शाख पर तीन चार उप शाखाएँ हों। पुराने पेड़ जब बहुत कम फल देते हैं उस वक़्त उप शाखाओं तक काटछांट कर दी जाय तो कुछ अधिक फल प्राप्त होते हैं।

फ़सल की तैयारी और चालान—बीजू पौधे पांच छः साल में और क़लमी तीन चार साल में फल देना प्रारम्भ करते हैं। कच्चे फल पकने पर अंगूरी या सफ़ेद रंग क हो जाते हैं। प्रति

वर्ष पहिली फसल श्रावण से आश्विन तक (जुलाई से सितम्बर) और दूसरी जाड़े में नवम्बर से फरवरी तक मिलती है। जहां तक हो जाड़े की फसल ही लेना उत्तम है। जाड़े के अन्त में दो तीन वार सिंचाई करके एक दम पानी वन्द कर देने से गर्मी मे फूल आकर आप ही झड़ जाते हैं। इस रीति से गर्मी की फ़सल रोकी जा सकती है। यदि गर्मी की ही फ़सल लेना हो तो खाद माघ (जन-वरी) में देकर सिंचाई बराबर करते रहना चाहिए। अमरूद के बाग़ीचे से बीस पचीस साल तक अच्छी आमदनी होती रहती है। वैसे चालीस पचास साल की आयु तक भी पेड़ कुछ न कुछ फल देते रहते हैं। प्रति पेड़ २) रु० की आय का अनुमान किया जा सकता है।

फलों का चालान बाँस की टोकरियों में घास के साथ किया जा सकता है। अमरूद का चालान बहुत दूर तक नहीं होता क्यों-कि एक तो ये बहुत सस्ते विकते हैं और दूसरे ये अधिक दिनों तक टिकते भी नहीं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनकी चटनी भी बनायी जाती है। चीनी के साथ गूदे की बरफी और जेली (Jelly) भी बनायी जाती है। मलाई और चीनी के साथ गूदा मिला दिया जाय तो अच्छा पदार्थ बन जाता है। कच्चे अमरूद कब्जकारी और पके हुए हल्के दस्तावर होते हैं।

अनानास Pine-apple—*Ananassa sativa*

भारतवर्ष में बंगाल, आसाम, मलाबार तट, ब्रह्म प्रदेश और

लङ्का में इसकी खेती विशेष होती है। पहाड़ों पर कहीं २ हो जाता है। मैदानों में तरीदार वातावरण में अच्छा हो सकता है। इसके पौधे जड़ के पास से निकले हुए नये पौधों (Suckers) से तैयार किये जाते हैं। पौधों के सिरे पर जो पोंच (Bulb bills) निकलते हैं उनसे भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं। पौधों का चालान टोकरियों में किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद:—खुली हुई दुमट या बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। गोबर का खाद तीन सौ मन जिसमें एक शतांश हड्डी का चूर्ण और उतनी ही राख मिली हो डालना चाहिए और फिर अच्छी जुताई के पश्चात् तीन तीन फीट की दूरी पर नालियाँ बनवा कर उनसे निकली हुई मिट्टी से बीच की भूमि ऊँची कर लेनी चाहिए। बरसात के प्रारम्भ में प्रति पौधा एक मुट्ठी सरसों, नीम या एरण्डी की खली दे दी जाय तो फलों की बाढ़ अच्छी होती है। मछली का खाद भी इसके लिए अच्छा माना गया है। कृत्रिम खाद में मन सवा मन एमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट, ढाई मन के लगभग सुपरफ़ॉसफेट और उतना ही पोटेशियम सलफेट प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होगा।

पौधे लगाना :—उपरोक्त रीति से तैयार की हुई नालियो के बीच की ऊँची ज़मीन पर सकर्स दो दो फीट की दूरी पर भाद्रपद-आश्विन (अगस्त-सितम्बर) में लगाने चाहिएं।

सिंचाई और काट छांट:—पौधे लगाने के समय से आव-

श्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। और जब फल बैठने लगे तब से पानी जल्दी जल्दी देना चाहिए। हर तीसरी चौथी फ़सल के बाद ज़मीन बदल देनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—रोपने के समम से बारह से पन्द्रह महीने में फल मिलना आरम्भ होते हैं और प्रति वर्ष श्रावण भाद्रपद में फल मिलते रहते हैं। पके हुए फल रंग और सुगन्ध से पहचाने जाते हैं। जब नीचे का आधा फल कुछ रंग बदलने लगे तब तोड़ना चाहिए। फलों का चालान टोकरियों में किया जा सकता है क्योंकि ये बड़े सख़ होते हैं। चोरी का भय हो तो बक्सो मे भेजना चाहिए।

उपयोग और गुण:—ऊपर का मोटा छिलका निकाल कर बीच का गूदा खाया जाता है जो बड़ा स्वादिष्ट, पाचक और बल वर्धक होता है।

अनार, दाड़िम Pomegranate—*Punica granatum*

अनार भारतवर्ष में प्राय: सब जगह पाये जाते हैं परन्तु मसकती या काबुली अनार जैसे मीठे और छोटे बीज वाले होते हैं वैसे नहीं होते फिर भी काफी बड़े और साधारण मीठे अनार हो जाते हैं। अहमदाबाद ज़िले में धौलका के आस पास के अनार अपने बीज की मिठास तथा नर्मी के लिए विख्यात हैं। वहाँ पर काबुली अनार लगाये जाँय तो बहुत ही कम फलते हैं और मसकती तो फलते ही नहीं। अनार के पौधे बीज, डाली, या दाब कलम से तैयार किये जाते हैं। बीज और डाली बरसात में और

दाब क़लम जाड़े के अन्त में लगानी चाहिए। इसके पौधे मज़बूत होते हैं। टोकरियों में भेजे जा सकते हैं।

जमीन और खाद:—ये सब प्रकार की जमीन में हो जाते हैं परन्तु कछार और अधिक खटिक वाली भूमि में अच्छे होते हैं। गर्मी में खेती की जुताई के पश्चात् पन्द्रह पन्द्रह फीट के अन्तर पर दो ढाई फीट गहरे और उतने ही व्यास के गढ़े बना कर उनकी मिट्टी में आधा मन के लगभग गोबर का खाद और दो सेर के लगभग हड्डी का चूर्ण और यदि अम्लदार मिट्टी हो तो उसमें दो सेर के क़रीब बुझाया हुआ चूना मिला देना चाहिए। पेड़ों में प्रतिवर्ष पौष माघ में खाद दिया जा सके तो अच्छा है।

पौधे लगाना:—उपरोक्त रीति से तैयार किये हुए गढ़ों मे दो साल की आयु के पौधे बरसात में लगाने चाहिएँ।

सिंचाई और काट छांट:—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। काट छांट जाड़े के प्रारम्भ में सूखी, तथा घनी और उन टहनियों की जिनसे फल मिल जायँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान:—रोपने के समय से चार पांच साल में पौधे फल देने योग्य होते हैं और चालीस पचास साल की आयु तक फलते रहते हैं। मध्य बरसात से फल आना प्रारम्भ हो कर दो तीन महीने तक आते रहते हैं। बहुत से अनार पकने पर फट जाते हैं। कुछ सिर्फ़ अपना रंग ही बदलते हैं; हरे से लाल या कुछ सफेदी लिए हुए हो जाते हैं। पैदावार औसत दर्जे ५०-६० अच्छे फल प्रति पेड़ ली जा सकती है।

फलों का चालान टोकरी, चटाई और क्रेट या बक्सों में किया जा सकता है।

उपयोग और गुण:—रस चूस कर बीज फेंक दिये जाते है। अनार का शरबत भी बनाया जाता है जो गर्मी में या ठण्ढ़क के लिए औषधि के काम मे लाया जाता है। पेड़ की छाल चमड़ा रंगने में काम में लायी जाती है।

अनार ठण्डा, त्रिदोष नाशक, हृदय रोग, दाह, ज्वर और कण्ठ रोग मे लाभप्रद होता है। यह कृमि नाशक भी होता है। छिलका पेचिश में काम में लाया जाता है।

आड़ू, सतालू Peach—*Prunus persica*

बढ़िया आड़ू सीमा प्रान्त की तरफ होते है। वहाँ इसकी सफेद, लाल और पीली ऐसी तीन जातियां मानी गयी है। ये रंग विशेषतः गूदे में पाये जाते हैं। इसका फल खटमीठा होता है और बीच में बादाम जैसा बीज होता है। छिलका ऐसा रोंएदार होता है कि मखमल जैसा मालूम होता है। पौधे चश्मा चढ़ाकर (Tubular or Ring budding) तैयार किये जाते हैं। यह क्रिया चैत्र बैसाख (मार्च एप्रिल) मे होनी चाहिए। बीजू पौधे तैयार करने के लिए बीज नर्सरी में आठ दस इञ्च की दूरी पर ताज़े ही लगा देने चाहिएं। ये बहुत देरी से अंकुर फेकते हैं। बरसात के लगाये हुए पौधे चैत्र मे जा कर चश्मा चढ़ाने योग्य होते हैं। जिस डाली पर चश्मा चढ़ाया जाय वह क़रीब पाव इञ्च मोटी होनी चाहिए। पौधों का चालान क्रेट में होना चाहिए।

ज़मीन और खाद—बलुआ दुमट ज़मीन में ये अच्छे होते हैं। भारी मटियार इनके लिए ठीक नहीं होती। गढ़े तीन फुट व्यास के और उतने ही गहरे बीस बीस फीट की दूरी पर गर्मी में बनवा कर पचीस तीस सेर के क़रीब गोबर, सड़े पत्ते और हड्डी का चूर्ण नीचे को दो फीट मिट्टी में देना चाहिए। हड्डी क़रीब दो सेर काफी होगी। जाड़े में जब पत्ते झड़ने लगें तब जड़ें खोल कर दस पन्द्रह दिन बाद खाद देकर मिट्टी भर देनो चाहिए।

पौधा लगाना—बरसात में या जाड़े के अन्त में लगाना ठीक होता है। इसके पेड़ बग़ीचे की सड़कों के किनारे पर भी लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काट छांट—सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाचिए। माघ में काट-छांट के पश्चात् खाद देते ही सिंचाई अच्छी होनी चाहिए। फलों की बाढ़ के समय अधिक और पकने के समय कम पानी दिया जाय तो फल अच्छे स्वादिष्ट होते हैं। काट-छांट ऐसी करनी चाहिए कि जिसमे नयी टहनियाँ आठ दस इञ्च लंबी ही रह जायँ। पत्ते झड़ने से पौधों को विश्राम मिलता है इसलिए यदि न झड़ें तो सिंचाई बन्द करके जड़ें खोल कर झड़वाना चाहिए। इससे फल अच्छे आते हैं। कभी कभी डालियाँ सूखने लग जाती हैं और गोंद जैसा पदार्थ निकलता रहता है। यदि ऐसा हो तो पानी बन्द कर देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :-पेड़ लगाने के समय से तीसरे साल से फल देना शुरू होकर सात आठ साल तक अच्छे फल देते

रहते हैं। प्रति वर्ष ज्येष्ठ में फल मिलते हैं। पकने पर फल हरे रंग से सफेद और गुलाबी रंग के हो जाते हैं। बरसात आते ही फल में एक प्रकार का कीट लग जाता है और फल बिगड़ जाते हैं। सीमाप्रान्त जैसे सूखे स्थानों में भाद्रपद से कार्तिक तक फल मिलते हैं। प्रति पेड़ से एक मन के लगभग फल मिल जाते हैं। फलों का चालान छोटी टोकरियों में होना चाहिए।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। ये कृमि-नाशक, पेट के दर्द को मिटानेवाले और हल्के दस्तावर होते हैं। बीज से तेल निकाला जाता है जो रोशनी के काम में आता है।

आम Mango—*Mangifera indica*

आम मैदान में सब जगह पाये जाते हैं। चूंकि ये उष्णता प्रिय हैं दो हज़ार फीट से अधिक ऊंचे पहाड़ों पर अच्छे नहीं फलते। आम की कई जातियाँ हैं और एक ही जाति के आम के पृथक् पृथक् स्थान में पृथक् पृथक् नाम भी हैं। जलवायु और भूमि के हेर-फेर से स्वाद में थोड़ा बहुत अन्तर पड़ जाता है और आम एक ही जाति के होने पर भी दूसरी जाति के मान लिए जाते हैं। कुछ मुख्य मुख्य जाति के नाम आगे दिये गये हैं परन्तु यहां पर हम आम को दो भागों में विभाजित करते हैं—एक बीजू अर्थात् बीज से तैयार किये हुए पेड़ के फल और दूसरे क़लमी। बीजू आम बहुधा छोटे और पतले रस वाले होते हैं। ये चस कर खाये जाते हैं। इनकी गुठली रेशेदार होती है। इनके विपरीत क़लमी अधिकतर रेशा-रहित, बड़े और गाढ़े रस वाले

होते हैं। ये बहुधा काठ कर खाये जाते हैं। क़लमी पौधे भेंट क़लम* से बहुधा बरसात में तैयार किये जाते हैं परन्तु जो क़लमें अन्तिम बरसात में बांधी जाती हैं वे अच्छी होती हैं। कहीं कहीं जाड़े के अन्त में भी बांधते हैं। पौधों का चालान क्रेट में होना चाहिए।

ज़मीन और खाद—पानी नहीं लगने वाली सब प्रकार की मिट्टी में आम हो जाते हैं। अच्छी जुताई के पश्चात् गर्मी में कमज़ोर भूमि में पचीस तीस और अच्छी उपजाऊ में तीस पैंतीस फीट की दूरी पर गढ़े बनवाने चाहिएं। बीजू पेड़ के लिए चालीस फ़ीट का अन्तर भी अधिक नहीं होगा। गढ़े तीन फीट व्यास के उतने ही गहरे होने चाहिए। मिट्टी को कुछ दिनों तक धूप खिलाने के बाद भरते समय पहले भरी जाने वाली दो तिहाई मिट्टी में दो सेर हड्डी का चूर्ण, पांच सेर लकड़ी की राख और क़रीब एक मन गोबर-पत्तों का मिश्रण मिला देना चाहिए और बाद में बची हुई एक तिहाई मिट्टी भर देनी चाहिए। जब दो एक बरसात के बाद मिट्टी जम जाय तो पौधे लगा सकते है। आम को बहुधा एक बार लगा देने के पश्चात् खाद देते ही नहीं ऐसा नहीं करना चाहिए। प्रति वर्ष जहाँ पानी दिया जाय वहां जाड़े के अन्त में फूल आने के पहले गोबर, पत्ता, राख और हड्डी मिश्रित

* कहीं कहीं चश्मा चढ़ाकर भी पौधे तैयार करते हैं ऐसा करने से पौधे जल्दी तैयार होते हैं। सफलता के विचार से अभी तक तो भेंट क़लम की रीति ही अच्छी जचती है।

खाद देना चाहिए। जहां पानी की असुविधा हो वहां बरसात के प्रारम्भ में अथवा फल ले लेने के बाद ही खाद दे देना चाहिए। खली या सोडियम नाइट्रेट का खाद देना हो तो फूल आने लगे तब देना चाहिए। खली पांच शतांश नत्रजन वाली पांच छ मन प्रति एकड़ के हिसाब से और सोडियम नाइट्रेट मन सवा मन के हिसाब से दिया जा सकता है।

पौधा लगाना—पौधा बीजू हो या क़लमी दो ढाई साल की आयु का हो जाय तो लगा देना चाहिए। अधिक आयु के पेड़ ठीक नहीं होते। बीजू पौधे रोपने या क़लम के लिए नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। आम की ताज़ी गुठलियाँ ही लगानी चाहिएं क्योंकि इनकी उपज-शक्ति बहुत जल्दी नष्ट हो जाती है। पौधे लगाने का उत्तम समय बरसात या जाड़े का अन्त है। आम को ठण्ढ से बड़ी जल्दी हानि पहुँचती है इसलिए मध्य जाड़े मे नहीं लगाना चाहिए। हवा से पौधे टूट न जायँ इसलिए सहारे का प्रबन्ध भी करना चाहिए।

सिंचाई और काट छांट—पौधे यदि जाड़े के अन्त में लगाये जायँ तो लगाने के साथ ही पानी देना चाहिए और गर्मी मे बराबर देते रहना चाहिए। पूर्ण बाढ़ पाये हुए पेड़ों को मौर (फूल) आने लगे उस समय से आवश्यकतानुसार जल देना ठीक होता है। काट छांट सूखी या व्याधि-ग्रस्त टहनियों की होनी चाहिए। छोटे पौधों की काट छांट आकार के लिए भी की जाती है। कलमी पौधों पर बांध के नीचे से कोंपल निकल आवें तो

उन्हें तोड़ देना बहुत जरूरी है। आम के पेड़ पर लाल फूल वाला एक पौधा जम जाता है उसे तुरन्त काट देना चाहिए। वह आम के पेड़ से रस चूसकर अपना पोषण करता है।

फ़सल की तैयारी और चालान—दस बारह साल की आयु के होने पर बीजू और पांच छः साल की आयु के क़लमी पौधे फल देना प्रारम्भ करते हैं। क़लमी आम क़रीब पचास साठ साल तक और बीजू लगभग एक सौ साल तक अच्छे फलते रहते हैं। व्यवसायिक दृष्टि से क़लमी आम दस साल से लेकर चालीस पचास साल की आयु तक अच्छे समझना चाहिएं। कुछ ही आम ऐसे होते हैं जो प्रति वर्ष फलते हैं। वरना अधिकतर ऐसे ही होते हैं जो हर दूसरे साल फलते हैं। उत्तरीय भारत में आम ज्येष्ठ-आषाढ़ (मै-जून) में पकते हैं। बिहार और संयुक्त प्रान्त में जाति अनुसार ज्येष्ठ से प्रारम्भ हो कर भाद्रपद तक (मै से अगस्त-सेप्टेम्बर) मिलते रहते हैं। क़लमी आमों में मिठुवा, बम्बई, कृष्णभोग, माल्दा (बनारसी लँगड़ा), सिपिया, शुकुल, सेन्दूरिया और भदैया क्रमानुसार पकते रहते हैं। बम्बई की तरफ़ क़लमी आम हाफूज़ (Alphonse) और पायरी ज्येष्ठ-अषाढ़ (मै-जून) में मिलते हैं। दक्षिण भारत में चैत्र बैसाख से शुरू होकर आषाढ़-श्रावण तक मिलते हैं। दक्षिण भारत में अरकाट और सलीम के आम अच्छे होते हैं, वहाँ के विख्यात आमो के नाम दिलपसन्द, तोतापरी, काला पहाड़, नवाब पसन्द, शकरपारा आदि हैं। वाल्टेर के आस पास राजमान्य, नल कल्याण, स्वर्ण-

रेखा आदि नाम के आम अच्छे माने गये हैं। बीजू आम की फ़सल बहुधा महीने डेढ़ महीने तक रहती है। जब आम के पेड़ पर से दो एक आम पके हुए गिरें तब समझना चाहिए कि आम उतारने (तोड़ने) योग्य हो गये। पृष्ठ ११९ में बतायी हुई रीतियों को ध्यान में रख कर बड़ी सावधानी से फल तोड़ने चाहिएं। यदि बाहर भेजना हो तो बक्स में बन्द करके भेजना ही उत्तम होता है। निकटवर्ती बाज़ार में गाड़ियों में भेजे जा सकते हैं। यदि माल का पूरा डिब्बा (Wagon) भर कर आम का चालान करना हो तो टोकरियों में हो सकता है। हज़ारों रुपये के आम का चालान उत्तर विहार से ऐसे ही किया जाता है। क़रीब डेढ़ फ़ुट व्यास की बीच में आठ दस इञ्च गहरी टोकरी ऊपर तक भर कर उस पर दूसरी टोकरी उलटी धर दी जाती है फिर दोनों को बांध कर डिब्बों में डाल देते हैं। यदि पकाना हो तो क़लमी आम वैसे ही मचान पर रख दिये जायँ तो धीरे धीरे पक जाते हैं। जल्दी पकाने के लिये आम को घास या पुआल (Rice straw) में दबा कर पका सकते हैं। ऐसा करने से वातावरण की गर्मी से अधिक गर्मी पहुँचती है इससे फल जल्दी पक जाते हैं। यदि जल्दी नहीं पकाना हो तो पेड़ पर ही रहने देने चाहिए। वहां न हो तो ठण्ढे वातावरण वाले घर में या बरफ से ठण्ढे रक्खे जाने वाले कमरों में रखना ठीक होता है।

पकने पर अधिकांश आमों का रंग पीला, कुछ का लाल और पीला और कुछ का सेन्दूरिया हो जाता है। माल्दा और कृष्ण-

भोग जैसे कुछ आम ऐसे भी हैं जो पकने पर भी हरे रहते हैं। मद्रास का तोतापरी पीला हो जाता है। बम्बई का हाफूज़ मुँह की ओर सेन्दूरिया और बाकी का पीला हो जाता है।

उपयोग और गुण—बीजू आम चूसकर और क़लमी तराश कर खाये जाते हैं। रस निकाल कर चीनी और चिरौंजी के साथ खाया जाय तो बड़ा स्वादिष्ट हो जाता है। घृत और चीनी के साथ आम की बर्फी भी बनायी जाती है। सिर्फ आम का रस जमाना हो तो आगर-आगर (सामुद्रिक बनस्पति से प्राप्त किया हुआ पदार्थ) से अच्छा जम जाता है। सवा सेर रस में करीब दो तोला आगर-आगर (Agar agar) डालना पड़ता है। आगर-आगर को घोलने के लिए थोड़े से गरम पानी में आधे घंटे तक उबालना चाहिए। फिर रस को थोड़ा गरम करके (चालीस शतांश से ऊपर गर्मी आ जाय इतना ही गरम करना चाहिए) उसमें आगर-आगर मिला दिया जाय और बर्फी जमा दी जाय तो अच्छी जम जाती है। आम के रस को सुखाकर भी रखते हैं जिसे आमोठ या आम का पापड़ कहते हैं। कच्चे आम से चटनी, शरबत, अचार, मुरब्बा, आमचूर आदि बनाते हैं। कुछ लोग गुठली के बीच का गूदा भूंज कर खाते हैं। पत्तों से मंडप सजाये जाते हैं।

पका आम बल-वर्द्धक, दस्तावर और तृप्ति-कारक होता है। दूध के साथ रस का सेवन किया जाय तो शरीर पुष्ट होता है। कच्चा आम खट्टा और पित्तकारक होता है। आग में भूंजे हुए

आम का शरबत लू (गर्म हवा) लग जाने पर अच्छा फायदा करता है। बीज का गूदा कब्ज़कारी होता है इसलिए दस्त रोकने के लिए काम में लाया जाता है। मौर (फूल) खांसी, कफ, पित्त और रुधिर विकार मे काम मे लाये जाते हैं। नये पत्ते में भी फूल जैसा गुण होता है।

ककड़ी या खीरा Cucumber—*Cucumis sativus*

यह एक वार्षिक फल है। इसके पेड़ नहीं होते—लता होती है। फल छ इञ्च से फुट डेढ़ फुट लम्बे और एक इञ्च से तीन चार इञ्च मोटे होते हैं। खीरा भी प्रायः उन सब जगहों में पाया जाता है जहां पर मक्का की फसल होती है। उत्तम खीरे मध्य भारत में रतलाम और सैलाने के निकटवर्ती स्थानों में होते हैं जहाँ से बम्बई तक चालान होता है। ये ककड़ियाँ सिर की तरफ़ कुछ मोटी होती हैं और गूदा हरा होता है। छिलका सफेद या हरे पीले रंग का होता है। खीरे की लताएँ बीज से तैयार की जाती हैं।

ज़मीन और खाद—इसके लिए बलुआ-दुमट या दुमट जमीन अच्छी होती है। गर्मी में डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से गोबर का खाद देकर जुताई खूब अच्छी करनी चाहिए।

बोना—चैत्र (मार्च) से आषाढ़ (जून) तक कभी भी बो सकते हैं परन्तु बहुधा बरसात के प्रारम्भ में ही बोयी जाती है। इसे फलों के पेड़ के बीच की भूमि में भी लगा सकते हैं। पंक्तियाँ छ छः फीट के अन्तर पर और पौधे चार चार फ़ीट के अन्तर पर

रहने चाहिएँ इसलिए इसी अन्दाज़ से बीज बोने चाहिएँ। एक एकड़ के लिए आठ दस छटांक बीज की आवश्यकता होती है। इसकी एक जाति ऐसी भी होती है जिसके बीज माघ में बोये जाते हैं।

सिंचाई और काट छांट—बरसात से पहले लगायी जाने वाली फसल को सींचना पड़ता है। बरसात वाली को नहीं सींचना पड़ता। काट-छांट तो नही करनी पड़ती परन्तु बरसाती फ़सल के लिए मचान बनाना चाहिए जिसमें फलों की बाढ़ अच्छी हो। जाड़े मे जो बोयी जाती है उसके लिए सूखी टहनियाँ इधर-उधर खेतों मे डाल देने से लता उन पर चढ़ जाती है। ऐसा करने से ज़मीन पर पड़े रहने वाले खीरे जो कभी कभी बिगड़ जाते हैं बिगड़ने नहीं पाते।

फ़सल की तैयारी—आषाढ़ मे बोयी जाने वाली से आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्टूबर) और माघ वाली से वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में फल मिलते हैं। जब काफी बड़ी हो जायं और कुछ रंग बदलती हुई नज़र आवें तब ककड़ियाँ तोड़नी चाहिएँ। दूसरी फ़सल के लिए बीज, अच्छे फलों को खूब सुखा कर, राख या नेप्थलीन की गोलियों के साथ रख सकते हैं।

उपयोग और गुण—छोटी और पूर्ण बाढ़ पायी हुई दोनो ही ककड़ियाँ वैसे ही खायी जाती हैं। इनकी तरकारियाँ भी बनायी जा सकती हैं। बीज के गूदे से मिठाई भी बनाते हैं।

ककड़ियाँ ठंढी और स्वादिष्ट होती हैं। रक्तपित्त के विकारों को शान्त करती हैं।

कटहल, फणस Jack fruit—*Artocarpus integrifolia*

इसकी खेती बङ्गाल और बिहार में विशेष रूप से होती है। गुजरात और दक्षिण भारत में भी कुछ अंश तक होती है। अन्य प्रान्तों में कही कहीं दो एक पेड़ बाग़ीचों में पाये जाते हैं। कटहल का पेड़ पचीस तीस फीट ऊँचा होता है परन्तु फल धड़ और मोटी मोटी शाखाओ पर ही लगते हैं। पुराने पेड़ों में कभी कभी ज़मीन के अन्दर भी फल हो जाते हैं, जिनकी उपस्थिति भूमि फटने से जानी जाती है।

कटहल के पेड़ की ज्यों ज्यों आयु बढ़ती है फल बड़े बड़े आते है और शाखा से धड़ पर और ज़मीन में फलना शुरू होते हैं। एक एक पेड़ से पचीस तीस से लगाकर सौ डेढ़ सौ अच्छे फल मिल जाते हैं वैसे पाँच सौ तक की संख्या में भी फल पाये गए है। साधारण कटहल आठ दस सेर का होता है वैसे कोई कोई बीस पचीस सेर के भी हो जाते है। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। बीज बरसात मे लगाने चाहिएँ। कुछ लोगों का अनुमान है कि नयी शाख पर के कटहल के बीज लगाये जायँ तो उनसे जो पेड़ होते हैं वे जल्दी फलते हैं।

ज़मीन और खाद—दुमट कछार भूमि इसके लिए अच्छी होती है। इसके खेत के खेत कहीं नहीं लगाये जाते। दस एकड़ वाले बग़ीचे मे दो एक पेड़ लगा दिये जा सकते हैं। आम की

भांति गढ़े तैयार कर लगा देना चाहिए । एक बार लग जाने के बाद कभी कभी खाद भी आश्विन-कार्तिक में दे देना चाहिए।

पौधा लगाना—पौधे बरसात में लगाये जाते हैं।

सिंचाई और काट छांट—पहले दो एक साल पानी का प्रबंध होना चाहिए बाद मे नहीं मिलने से काम चल जाता है। जब फूल आने लगें उस वक्त हो सके तो पानी देना लाभप्रद होगा । काट-छांट सूखी टहनियों को होनी चाहिए या जब पेड़ नहीं फलता हो तो काट-छांट पूरी कर देने से फलने लग जाता है।

फ़सल की तैयारी और चालान—लगाने के समय से सात आठ साल और कहीं कहीं इससे भी अधिक समय के बाद पेड़ फलता है और प्रति वर्ष वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में अधिक फल प्राप्त होते हैं, वैसे श्रावण तक भी फल मिलते रहते हैं। इसके फल के चालान में किसी तरह का परिश्रम नहीं होता। फल वैसे ही तोड़ कर भेज सकते हैं। फल पर पाने वाले के पते का लेबल चिपका दिया जाता है या डंठल से लेबल बाँध दिया जाता है। ज्यादा भेजना होता है तो गाड़ियों में भर कर या माल के डिब्बों में वैसे ही डाल कर भेज सकते हैं। पके फल रंग से और सुगंध से पहचाने जाते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फल की और पके हुए फल के बीज की तरकारी बनायी जाती है। पके फल का अन्दरूनी भाग जिसे कोआ या गूदा कहते हैं खाया जाता है। यह चिकना और मीठा होता है। कोए को सुखा कर उसका आटा भी बनाया जाता

है जो फलाहार में उपयोगी होता है। कुछ स्थानों में लोग भर पेट भोजन भी इसी का कर लेते हैं। पत्ते की पत्तलें बनाई जाती हैं। लकड़ी बक्स, आलमारी इत्यादि बनाने के लिए काम में लायी जाती है। कटहल भोजनोपरान्त खाया जाय तो बलदायक होता है। ये पीने की तम्बाकू बनाने के काम में भी बहुत लाये जाते हैं।

कमरख Kamarakh—*Anerrhōa carambola.*

कमरख के फल तीन चार इञ्च लम्बे और पांच धारी वाले होते हैं। पेड़ पन्द्रह बीस फीट की ऊँचाई के होते हैं। वे पहाड़ों पर नहीं होते; मैदानों में होते हैं। कमरख दो जाति के होते हैं—एक खट्टे और दूसरे मीठे।

पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। बीज ताजे ही पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में बोने चाहिएं। पौधों का चालान टोकरियों मे किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद :—ये सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। दो फीट व्यास के उतने ही गहरे गढ़े बनवाकर उनकी मिट्टी में आधे मन के लगभग हड्डी मिश्रित गोबर का खाद मिला देना चाहिए। गढ़ों में पन्द्रह फ़ीट का अन्तर काफ़ी होता है। प्रति वर्ष जाड़े में काटछांट के बाद खाद भी देना चाहिए।

पौधे लगाना :—बरसात में पौधे लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट :—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। काट छांट जाड़े में जब फल ले लिये जाँय तब करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान:—छः सात साल की आयु वाले पौधे फल देना प्रारम्भ करते हैं और प्रति वर्ष आश्विन कार्तिक में फल मिलते हैं। फल दूर नहीं भेजे जा सकते। निकटवर्ती बाज़ार में टोकरियों में भेज सकते हैं।

उपयोग और गुण:—कुछ लोग फलों को वैसे ही खा जाते हैं परन्तु बहुधा चीनी के साथ इनका शरबत बनाया जाता है जो बड़ा ठण्ढा होता है। इसका मुरब्बा भी बनाया जाता है। कमरख कफ़ और बादी नाशक हैं। ये शीतल और ग्राही होते हैं। फल के रस से कपड़ों का दाग़ जल्दी छूटता है।

केला Plantain—*Musa sapientum*

केले भारतवर्ष में प्रायः सब जगह होते हैं परन्तु गरम और तरी वाला वातावरण इनके लिये अच्छा होता है। केले दो प्रकार के होते हैं। एक वे जिनके पके हुए फल खाये जाते हैं और दूसरे वे जिनके कच्चे फल तरकारी के लिए अच्छे होते हैं। यदि तरकारी वाले केले पकाये जाँय तो वे स्वादिष्ट नहीं होते और यदि दूसरे केले की तरकारी बनायी जाय तो वह भी अच्छी नहीं होती। दोनों ही जातियों में कई उपजातियां हैं जिन्हें स्थानानुसार भिन्न २ नाम से पुकारते हैं। मालभोग, चीनी चम्पा, सोनकेला राजेली, रसवाल इत्यादि केलों की गणना अच्छे केलों में है। केले के पौधे सकर्स से तैयार किये जाते हैं जो केले के थम्भ की जड़ के पास से निकलते हैं। पौधों का चालान वैसे ही पांच सात पौधों को एक साथ बांधकर किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद :—केले बलुआ को छोड़कर सब ज़मीन में हो जाते हैं। ज़मीन की गहरी जुताई के पश्चात् दस दस फ़ीट के अन्तर पर एक फुट गहरे और उतने ही व्यास के गढ़े बनवा कर उनकी मिट्टी में गोबर और पत्ते का खाद क़रीब दस बारह सेर, हड्डी का चूर्ण एक सेर और दो तीन सेर राख डालनी चाहिए। प्रत्येक स्थान पर प्रति वर्ष बरसात के प्रारम्भ में आधा सेर सूपरफ़ॉसफेट या हड्डी का चूर्ण, पाव भर एमोनियम सलफेट या एक सेर खली और एकाद टोकरी राख का डाला जाना भी उत्तम होगा।

पौधे लगाना :—उपरोक्त रीति से तैयार किये हुए गढ़ों में बरसात में केले के सकर्स लगाने चाहिएं। जब तक ये पूर्ण बाढ़ पाकर फल देने योग्य होते हैं तब तक इनकी जड़ के निकट दूसरे पौधे निकल आते हैं और फल आने पर जब थम्भ काट दिये जाते हैं तो नये पौधे उनका स्थान ले लेते हैं।

सिंचाई और काटछांट :—सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। जिन थम्भ से फल प्राप्त हो जायें वे काट कर फेंक देने चाहिएं क्योंकि वे फिर नहीं फलते और फले हुए थम्भ के पास दो पौधे से अधिक हों तो वे उखाड़ देने चाहिएं। उन दो में से एक पौधा बड़े पेड़ की आधी ऊँचाई का और दूसरा छोटा ही होना चाहिए। अधिक पौधे रहने से फलने वाले पेड़ को पूरी खुराक नहीं मिलती इससे फल छोटे हो जाते हैं और पकते भी

देरी से हैं। जो खुराक फलों की बनावट के लिये जानी चाहिए उसे नये पौधे ही ले लेते हैं।

फलों की तैयारी और चालान :—अच्छी जमीन और तरी वाला वातावरण हुआ तो रोपने के समय से एक साल में फल प्राप्त हो जाते हैं नहीं तो डेढ़ दो साल में तो फल आही जाते हैं। एक थम्भ एक ही बार फलता है परन्तु पास मे जो पौधे निकलते हैं वेतैयार हो जाते हैं; इस रीति से नये थम्भ तैयार होते रहते हैं। एक खेत से पांच छः साल तक फल ले लेने के बाद भूमि बदल देनी चाहिए। थम्भ के बीच में जो फूल की डंडी निकलती है उसमें फल आते हैं। डंडी और फल दोनों मिलकर घड़ कहलाते हैं, प्रति एकड़ करीब तीन सौ घड़ प्रति वर्ष मिल जाती हैं। थोड़ी बहुत फसल साल भर मिलती रहती है। जब घड़ में दो एक केले पीले पड़ जायँ उस वक्त काटकर रख दी जाय तो दो चार दिन में सब केले पक जाते हैं। व्यवसायी लोग जल्दी पकाने के विचार से जमीन में अथवा भट्टी में केले के सूखे पत्तों के साथ रख कर कुछ धुआं देते हैं जिससे गर्मी पहुँचती है और केले की सारी घड़ एक साथ तैयार हो जाती है। राजेली नाम की जाति के केले सुखाये भी जाते हैं।

उपयोग और गुण:—केले के थम्भ से मंडप सजाये जाते हैं। इनसे सन भी मिलता है जिससे रस्सियां और कपड़े बनाते हैं। कहीं कहीं थम्भ की राख से कपड़े भी धोये जाते हैं। पत्तों का उपयोग पत्तलों के लिए किया जाता है और उनसे बीड़ी भी

बनायी जाती है। कहीं कहीं ये पशुओं को भी खिलाये जाते हैं। फूल फल और थम्भ के बीच का सफेद भाग तरकारी के काम में लाया जाता है। कच्चे केले का चूर्ण फलाहार के काम में लाते हैं। चूर्ण तैयार करने की सरल रीति यह होगी कि चार पांच मिनिट के लिए फलों को गरम पानी में छोड़ दो। ऐसा करने से छिलका जल्दी छूट जाता है। बाद में बांस के तेज पतले टुकड़े से गूदे के टुकड़े बना कर सुखा लेना चाहिए। गूदे को लोहे के चाकू से काटने से चूर्ण काला हो जाता है इसलिए बांस का टुकड़ा या ऐसा चाकू जिसमें केले काले न पड़ें काम मे लाना चाहिए। पके हुए केले वैसे ही या दूध दही और चीनी के साथ पकवान बनाकर काम में लाये जाते हैं। केले का शिरका भी बनाया जा सकता है।

कच्चे केले के आटे की रोटी से वायु विकार Dyspepsia दूर होते हैं। पक्का केला पाचक, शीतल और पुष्टिकारक होता है। नेत्र रोग में इसका सेवन लाभप्रद होता है। केले के फूल की तरकारी कृमि नाशक लेकिन चिकनी और भारी होती है।

खजूर-अरबी—Dates—*Phoenix dactylifera.*

खजूर-देशी—*Phoenix sylvestris.*

पहले प्रकार के खजूर की खेती अरबस्तान मे बहुत होती है। खजूर के लिए सूखा और गर्म वातावरण अच्छा होता है। बरसात भी पांच सात इञ्च से अधिक नहीं होनी चाहिए। भारतवर्ष में ऐसी जगह सिन्ध और बलोचिस्तान हैं सो वहां पर ये हो जाते

हैं। इसके पेड़ सत्तर अस्सी फ़ीट से लेकर सौ फीट की ऊँचाई तक के होते हैं। इनमें नर पेड़ और मादा पेड़ अलग अलग होते हैं। फल मीठे, रसीले और अच्छे गूदे वाले होते हैं। इनके पेड़ सकर्स (पेड़ की जड़ के पास से निकलने वाले पौधे) से तैयार किये जाते हैं। पौधों का चालान टोकरियों में हो सकता है।

दूसरी जाति का खजूर भारतवर्ष में सब जगह पाया जाता है। इसके पेड़ पचीस तीस फीट ऊँचे होते हैं। इनमें सकर्स नहीं होते। इनके पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं जिन्हें ताज़े ही बरसात में बो देना चाहिए। इनका गूदा बहुत पतला होता है इसलिए फल के लिए इन्हें कोई नहीं लगाता। ये जंगल में अपने आप हो जाते हैं।

ज़मीन और खाद:—अरबी के लिए बलुआ ज़मीन ठीक होती है; देशी सब प्रकार की मिट्टी मे हो जाता है। अरबी के पेड़ बीस पचीस फीट की दूरी पर लगाये जाते हैं। देशी के लिए आठ दस फीट का अन्तर काफी होता है। अरबी के लिए दो ढाई फीट व्यास के उतने ही गहरे गढ़े बनवाकर उनकी मिट्टी में क़रीब बीस पचीस सेर गोबर का खाद, दो सेर हड्डी का चूर्ण और थोड़ा नमक या शोरा मिला देना चाहिए। पेड़ लगा देने के बाद खाद बीच की भूमि में दिया जाता है। पेड़ की जड़ें खोली नहीं जाती बल्कि उन पर मिट्टी चढ़ायी जाती है।

पौधे लगाना:—उपरोक्त रीति से तैयार किये हुए गढ़ों में बरसात में पौधे लगाने चाहिएँ। जो सकर्स लगाये जायँ उन्हे

तीन चार साल की आयु के होने पर पेड़ से पृथक करके लगाना चाहिए।

सिंचाई और काटछाँट :—पहले कुछ साल तक गर्मी में जल्दी जल्दी पानी देना पड़ता है। बाद में आवश्यकतानुसार देना चाहिए। यदि सर्कस ज्यादे हों तो वे हटा देने चाहिएँ और पुराने पत्ते तथा फलों की सूखी डंडियाँ भी हटा देनी चाहिए ताकि नयी के लिए जगह मिल जाय।

फ़सल की तैयारी और चालान :—पौधे लगाने के समय से सात आठ साल की आयु के होने पर पेड़ फल देना प्रारम्भ करते हैं लेकिन पन्द्रह बीस साल की आयु के पेड़ अच्छे फल देते हैं और लगभग सत्तर अस्सी वर्ष तक फल मिलते रहते हैं। इसके पेड़ दो सौ वर्ष तक भी फलते रहते हैं ऐसा कुछ लोगों का अनुमान है। फाल्गुन में नर पेड़ों के फूल खिलते है जिनमें कीट को आकर्षित करने के लिए सुगंधित मीठा रस रहता है। आकर्षित कीट द्वारा केसर मादा फूल तक पहुँचायी जाती है। फल अच्छे बैठें इसलिए बहुधा नर फूल के खिलने के पहिले पेड़ से हत्थे (Spathe) हटा कर रख लिए जाते हैं और जब मादा फूल खिलते है तब उनके पास पेड़ो पर लगा दिये जाते हैं। प्रत्येक सौ मादा पेड़ पीछे एक नर पेड़ अवश्य होना चाहिए। फल ज्येष्ठ आषाढ़ से आश्विन तक मिलते रहते हैं और प्रत्येक पेड़ से डेढ़ मन से दो मन फल प्राप्त हो जाते हैं। देशी खजूर के फल ज्येष्ठ आषाढ़ में मिलते हैं।

खजूर का चालान छोटे बक्सों में या चटाई के बोरों में हो सकता है। खजूर लाल और काले दो रंग के होते हैं। काले का बीज छोटा होता है और फल लाल की अपेक्षा अधिक मीठा होता है।

उपयोग और गुण :—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं। सूखे फल जिन्हें खारक, छोहारा या खजूर भी कहते हैं वैसे भी खाये जाते हैं और औषधि के लिए भी काम में लाये जाते हैं। बीज पशुओं को खिलाये जाते हैं।

जहाँ खजूर होते हैं वहाँ कच्चे और अधपके फल एक रात के लिये मिट्टी के वर्तन में बन्द करके रक्खे जाते हैं और बाद में खाये जाते हैं। कभी २ नमक के पानी में कुछ देर के लिए छोड़ कर भी खाते हैं।

देशी खजूर के फल भी ग़रीब लोग खाते हैं। इनके पत्तों और छड़ियों से पंखे, चटाइयां और छोटी छोटी थैलियां बनायी जाती हैं। छड़ियों से टोकरियाँ बनाते हैं। पत्ते सहित छड़ियों से झाड़ू भी बनाये जाते हैं। पत्ते पशुओं को भी खिलाये जाते हैं। पेड़ से पाट का काम लिया जाता है। छोटी मोटी पानी की नालियां भी इनसे बनायी जाती हैं। पेड़ के सिर के पास छेद करके रस निकाला जाता है उसकी ताड़ी (एक प्रकार का शराब) बनायी जाती है। खजूर के रस से गुड़ भी बनाया जाता है।

खजूर शीतल, हृदय को हितकारी, और पुष्टिकारक होता है।

खांसी, दमा, क्षयरोग आदि में इसका सेवन गुण दायक माना गया है।

ख़रबूज़ा Melon—*cucumis melo*.

ये पानी के निकट नदी नाले की बालू पर ही हो सकते हैं इस लिए बग़ीचे के पास ऐसी ज़मीन हो तो इन्हे लगा देना चाहिए। खरबूजे के स्वाद पर भूमि का बड़ा असर पड़ता है। भूमि बदलने से स्वाद भी बदल जाता है। भारतवर्ष में लखनऊ के ख़रबूजे अच्छे माने गये हैं। ये चपटे और छोटे होते हैं परन्तु खुशबूदार और मीठे होते हैं। वैसे बेलाताल इत्यादि स्थानों के ख़रबूजे भी काफी मीठे होते हैं। इनका वजन सेर डेढ़ सेर से ढाई सेर तक होता है।

ज़मीन और खाद:—नदी नाले के बीच की जमीन में डेढ़ फुट चौड़ी और आठ दस इञ्च गहरी नालियां बनवाकर उनमें गोबर और पत्ते का सड़ा हुआ खाद लगभग डेढ़ सौ मन मिला देना चाहिए। नालियो में तीन फुट का अन्तर रखना ठीक होता है।

बोना:—माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) मे नालियों में इनके बीज तीन तीन फीट की दूरी पर बोने चाहिएं। प्रति एकड़ डेढ़ सेर बीज की आवश्यकता होती है। जहां तक हो बीज ताजे ही लगाने चाहिएं। दो तीन साल के बीज लगाने से फल जल्दी आते हैं परन्तु पौधे स्वस्थ नहीं होते।

सिंचाई और काटछाँट:—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। जब फल पकने लगे तब बहुत कम पानी देना चाहिए। जब पौधों के तीन चार पत्ते आ जायं तब बीच का कोंपल तोड़ दिया जाय तो ठीक होगा क्योंकि ऐसा करने से नये कोंपल निकलते हैं जिनके तीसरे चौथे पत्ते पर फूल आ जाते हैं यदि न आयें तो इनकी फुनगी (Growing point) भी तोड़ देनी चाहिए। ऐसा करने से फल अच्छे बन जाते हैं। फल बैठ जाने पर प्रत्येक उपलता पर दो तीन फल छोड़कर आगे की फुनगी तोड़ देनी चाहियें। प्रति पौधा आठ दस फल से अधिक नही रहने देने चाहिए क्योंकि अधिक फल रखने से फलों की बाढ़ ठीक नहीं होती।

फ़सल की तैयारी और चालान:—बोने के समय से दो ढाई महीने में फल पकना शुरू हो जाते हैं। जब फलों का रंग पीला या सफ़ेद हो जाय और उनमें से मीठी सुगन्ध निकलने लगे तब तोड़ने चाहियें। फलों का चालान-हंडाकार टोकरियों में अच्छा होता है।

उपयोग और गुण :—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है। पक्के हुए फल वैसे ही या चीनी के साथ खाये जाते हैं। बीज से मिठाई बनायी जाती है। उन्हें तल कर नमकीन बना कर भी खाते हैं। ख़रबूजा दस्तावर और बलदायक होता है। बीज ठण्ढे बलदायक और अधिक पेशाब लाने वाले होते हैं।

खिरनी Khirni—*mimusops hexandra*

यह पहाड़ों पर नहीं होती है; मैदानों में होती है और जंगलों में पायी जाती है। चूंकि फल स्वादिष्ट होते हैं इच्छा होने से एक दो पेड़ बग़ीचे में लगा दिये जांय तो उत्तम होगा। पौधे तैयार करने के लिए ज्येष्ठ महीने में ताज़े बीज बोये जाते हैं।

ज़मीन और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। इसके खेत के खेत तो लगाये नहीं जाते। दो एक पेड़ कहीं लगाना हो तो पेड़ों के लगाने की साधारण रीति के अनुसार लगा सकते हैं।

पौधा लगाना :—पौधा लगाने का उत्तम समय बरसात का है।

सिंचाई और काटछांट :—पहले दो एक साल तक गर्मी में पानी देना चाहिए बाद में देने की आवश्यकता नहीं। काट छांट सूखी टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान :—बीज लगाने के समय से दस बारह वर्ष की आयु के होने पर पेड़ फल देते हैं। प्रति वर्ष अगहन पौष में फूल कर गर्मी में फल मिलते हैं। कहीं कहीं फाल्गुन चैत्र में भी फल मिलते हैं। फल जब पीले हो जायँ तब तोड़ने चाहिएं।

उपयोग और गुण :—ताज़े फल वैसे ही खाये जाते हैं। उन्हें सुखाकर भी खाते हैं। खिरनी बलदायक, शीतल और भारी होती है। क्षय रोग में इसका सेवन अच्छा माना गया है।

गुलाब जामुन Rose apple—*Eugenia jambos*

इसके लिए उष्ण वातावरण अच्छा होता है इसलिए यह मैदानों में ही फलता है। फल खट्-मीठे छोटी सेव के आकार के गुलाबी रंग के होते हैं। पौधे तैयार करने के लिए मध्य बरसात में बीज लगा देने चाहिएं। दाब क़लम से भी पौधे तैयार हो सकते हैं।

ज़मीन और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है परन्तु दुमट या कछार भूमि में अच्छा होता है। गढ़े पन्द्रह पन्द्रह फीट की दूरी पर गर्मी में बनवाकर उनकी मिट्टी में आधा मन के लगभग खाद मिला देना चाहिए। गढ़े डेढ़ दो फ़ीट गहरे होने चाहिएं।

पौधा लगाना :—पौधे लगाने का उत्तम समय बरसात का है।

फ़सल की तैयारी और चालान :—इसका पेड़ बहुत देरी से तैयार होता है। चौदह पन्द्रह साल की आयु के होने पर फलता है। प्रतिवर्ष मात्र फाल्गुन में फूल और ज्येष्ठ-आषाढ़ (मई, जून) में फल प्राप्त होते हैं। फलों का चालान छोटे बक्सों में किया जा सकता है।

उपयोग और गुण :—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी अच्छा बनता है। इसके फल कफ और खांसी को हरने वाले होते हैं।

चकोतरा Pomelo, Grape fruit—*Citrus decumana*

यह नींबू या संतरे की जाति का सब से बड़ा फल है। इसका छिलका भी बहुत मोटा होता है। एक जाति इसकी कुछ मीठी होती है जिसे पोमेलो कहते है। अमेरिका से आयी हुई जाति कुछ खट्टी होती है जिसे 'ग्रेप फ्रूट' कहते हैं। इसका पौधा बीज, दाब क़लम, भेंट क़लम या चश्मा चढ़ा कर तैयार किया जाता है परन्तु जहां तक हो चश्मा चढ़ा कर ही तैयार करना चाहिए क्योंकि दाब क़लम वाला इतना अधिक नहीं फलता जितना चश्मे वाला फलता है। चश्मे वाले पेड़ के फल भी बड़े होते हैं। चश्मा बरसात मे या बरसात के अन्त में चढ़ाना चाहिए।

ज़मीन और खाद :—जिस प्रकार संतरे के लिए जमीन तैयार की जाती है उसी भांति इसके लिए भी करनी चाहिए। चूंकि इसके पेड़ का फैलाव संतरे के पेड़ से अधिक होता है गढ़े बीस बीस फीट की दूरी पर होने चाहिएं। प्रतिवर्ष बरसात के प्रारम्भ में खाद द देना चाहिए।

पौधा लगाना :—पौधा लगाने का उत्तम समय बरसात का है।

सिंचाई और काटछांट :—आवश्यकतानुसार सिंचाई और काटछांट सूखी तथा व्याधिग्रस्त टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान :—लगाने के समय से बीजू पौधे आठ दस साल में और क़लमी पांच छः साल में फलने लग जाते हैं। संतरे की भांति इसमें भी माघ (जनवरी) तथा

आषाढ (जून) में फूल आते हैं परन्तु अधिकतर फल माघ वाले फूल से—भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से अक्टूबर) तक आते हैं। फलों का चालान संतरे की भांति हो सकता है।

उपयोग और गुण :—इनका रस चूसकर खाया जाता है और रस से शरबत भी बनाते हैं। स्वास्थ्य के विचार से विलायत में ग्रेप फ्रूट की खपत बहुत ज्यादा है। भारतवर्ष में भी धीरे धीरे इसका प्रचार बढ़ रहा है। चकोतरा ठण्ढक पहुँचाने वाला होता है। इससे हाजमा अच्छा होता है। यह हिचकी को रोकता है और खांसी में हितकारी माना गया है।

जामुन Jamun—*Eugenia jambolana*

जामुन दो प्रकार के होते हैं। एक बड़े और दूसरे छोटे। बड़े को कहीं कहीं राय जामुन भी कहते हैं। जामुन पहाड़ों पर नहीं होते, मैदानों में सब जगह पाये जाते हैं। पौधे तैयार करने के लिए ताजे बीज आषाढ़ में बोने चाहिएं।

ज़मीन और खाद :—जामुन सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। इनके खेत के खेत नहीं बोये जाते। ये जंगलों में पाये जाते हैं। बड़े जामुन के दो एक पेड़ बागीचे में लगा दिये जांय तो ठीक होगा। अन्य फलों के पेड़ों के लिए जिस प्रकार गढ़े तैयार किए जाते हैं इनके लिए भी उसी तरह तैयार करने चाहिएं।

पौधा लगाना :—बीज ही लगाना हो तो बरसात के प्रारम्भ में और यदि तैयार पौधा लगाना हो तो बरसात में कभी भी

लगाया जा सकता है। इस पेड़ को अपने फैलाव के लिए पचीस तीस फीट व्यास के घेरे की जमीन देनी चाहिए।

सिंचाई और काटछांट :—पहले दो साल तक पानी देना चाहिए फिर देने की जरूरत नहीं। फूल आने लगे उस वक्त से कुछ पानी दिया जा सके तो फल अच्छे आते हैं। काटछांट सूखी टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चलान :—दस बारह साल की आयु के होने पर पेड़ फल देते हैं और प्रति वर्ष वर्षा के प्रारम्भ में फल आते हैं। फलों का चालान निकटवर्ती बाज़ार में टोंकरियों में हो सकता है।

उपयोग और गुण :—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनका सिरका भी बनाया जाता है। फल दाहनाशक और पेट के दर्द को मिटानेवाला होता है। सिरका पित्तनाशक होता है। मसोढ़े फूलने पर छाल के काढ़े से कुल्ले किये जायँ तो लाभ होता है।

तरबूज़, कलिंगड़ा, हिन्दवाना Water melon—

Citrullus vulgaris

तरबूज की मांग गर्मी के दिनों में विशेष होती है। मैदानों में प्रायः सब जगह ये पाये जाते हैं। पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त के तरबूज बड़े स्वादिष्ट होते हैं। तरबूज़ का व्यास क़रीब नौ दस इञ्च का होता है। बंगाल की तरफ़ कहीं कहीं बहुत बड़े तरबूज मिलते हैं जिनका व्यास एक फुट का और लम्बाई क़रीब दो फ़ीट की होती है।

ज़मीन और खाद :—खरबूजे की भांति ये बलुआ मिट्टी में अच्छे होते हैं लेकिन यदि बलुआ-दुमट या दुमट में लगाये जायँ तो उसमें भी हो जाते हैं। जब नदी की बालू में लगाया जाय तो नालियाँ पाँच पाँच फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिएं और खाद नालियों की बालू में मिलाना चाहिए। जब साधारण खेत में लगाना हो तो दो सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से खाद देकर ज़मीन की जुताई खूब गहरी होनी चाहिए। अन्तिम जुताई के बाद पॉच पॉच फ़ीट की दूरी पर नालियां बना लेनी चाहिएं।

बोना—माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) में नालियों में चार चार फीट की दूरी पर इसके बीज बोने चाहिएं।

सिंचाई और काटछांट—सिंचाई साधारण होनी चाहिए। जब फल पकने लगें तब इतनी ही देनी चाहिए जिसमें लता मुर्झाने न पावे। इसमें भी प्रत्येक लता में सात आठ फल से अधिक नहीं लगने देना चाहिए और जिन फलों से बीज लेना हो उनकी संख्या प्रति पौधा तीन चार ही होनी ठीक है।

फ़सल की तैयारी और चालान—वैशाख ज्येष्ठ तक फल पक कर तैयार होते हैं। फल तोड़ने पर यदि वह डण्ठल से जल्दी छूट जाय और जोड़ की जगह साफ गोल चिन्ह हो तो समझना चाहिए कि फल पक गया है। कुछ अनुभव से पके फल पहचाने जा सकते हैं। जिन फलों को वाहर भेजना हो डण्ठल समेत भेजना चाहिए। फल टोकरियों में आसानी से भेजे जा सकते हैं। दूसरी फसल के लिए बीज को गूदे से छुड़ा कर अच्छी तरह से

धोकर रखना चाहिए। सूखे हुए बीज बन्द बर्तन मे रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण—फलों के अन्दर का लाल गूदा खाया जाता है और सफेद भाग की तरकारी बनायी जाती है। तरबूज ठण्डा, पाचक और दस्तावर होता है।

तुरंत, बिजौरा Citron—*Citrus medica Proper*

इसकी गणना नीबू की जाति में है। फल लम्बा, मोटे और खुरदरे छिलके वाला होता है। इसका छिलका बड़ा सुगन्धित होता है जिससे मार्मेलेड (एक तरह का मुरब्बा) बनाते हैं। पौधा बीज, गूटी या दाब क़लम से तैयार किया जाता है। जब बीज लगाना हो तो ताजे ही लगाने चाहिएं। गूटी या दाब क़लम बरसात के अन्त में लगायी जा सकती है।

इसकी खेती ठीक संतरे की खेती के समान होनी चाहिए। पेड़ छः साल की आयु के होने पर फल देना प्रारम्भ करते हैं और प्रति वर्ष भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से नवम्बर) तक फल देते हैं।

उपयोग और गुण—फल का रस बहुत खट्टा होता है। यह हृदय के लिए हितकारी माना गया है। छिलके का ऊपरी भाग जो बड़ा सुगन्धित होता है चीनी के साथ मार्मेलेड बनाने के काम में लाया जाता है।

तैन्दू Persimmon—*Diospyros kaki*

यह पहाड़ों पर और मैदानों में दोनों जगह हो जाता है।

फल छोटी सेब के आकार का मीठा होता है। पौधा बीज से या भेंट कलम से तैयार किया जाता है। क़लम बरसात में इसी के पौधे के साथ बाँधी जाती है। पौधों का चालान बक्सों में होना चाहिए।

जमीन और खाद—हर किस्म की उपजाऊ मिट्टी में हो जाता है। गढ़े बीस फीट की दूरी पर दो ढाई फ़ीट गहरे और तीन फ़ीट व्यास के होने चाहिएं। इन्हे गर्मी में तैयार कर लेने चाहिएं। प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में एक मन गोबर का खाद और दो ढाई सेर हड्डी का चूर्ण डालना लाभप्रद होगा। जब फलने लगे उस वक्त से प्रति वर्ष पौष-माघ में जड़ें खोल कर खाद दे देना चाहिए।

पौधा लगाना—बरसात या जाड़े में पौधे लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट—खाद देने के पश्चात् गर्मी में पानी देते रहना चाहिए। जब फल पकने लगे तब कम पानी देना चाहिए। काटछांट सूखी टहनियों की पौष-माघ में जब पत्ते झड़ जायँ उस वक्त करके दो सप्ताह के लिए जड़ें भी खोलना ठीक होगा।

फ़सल की तैयारी और चालान—चार पांच साल की आयु के पेड़ फल देते हैं। प्रति वर्ष कार्तिक-अगहन (अक्टूबर-नवम्बर) में फल मिलते हैं। फलों का चालान छोटी छोटी टोकरियों में होना चाहिए।

उपयोग—जब फल मुलायम होते हैं तब खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनाया जाता है।

दिलपसन्द Dilpasand—*Citrullus Var Fistulosus*

यह भी तरबूज की जाति का एक फल है जिसकी खेती सिन्ध की तरफ़ बहुत होती है। कच्चे फल हरे और पके हुए नारंगी रङ्ग के होते हैं। कच्चे फलों पर कुछ रोएँ भी रहते हैं। वज़न में ये फल करीब आध सेर के होते हैं।

ज़मीन और खाद—बलुआ ज़मीन में इसकी खेती अच्छी होती है। खाद क़रीब सवा सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए। ज़मीन की जुताई पांच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए।

बोना—सिन्ध और गुजरात में यह गर्मी में बोया जाता है। बीज इस तरह से लगाये जाते हैं कि पौधों में क़रीब तीन फ़ीट का अन्तर रहता है। एक एकड़ के लिए क़रीब एक सेर बीज की आवश्यकता होती है।

सिंचाई और काटछांट—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। काटछांट ऐसी होनी चाहिए कि प्रत्येक लता पर सात आठ फल रहें।

फ़सल की तैयारी और चालान—बोने के समय से डेढ़ दो महीने में कच्चे और तीन चार महीने में पके हुए फल आ जाते हैं।

उपयोग—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है। पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं।

नासपाती Pear—*Pyrus communis*

इसके पेड़ शरीफे के पेड़ के जैसे होते हैं। नासपाती पहाड़ पर अच्छी होती है। कुछ जातियाँ ऐसी भी हैं जो मैदानों में हो जाती हैं परन्तु फल उतने अच्छे नहीं होते। विदेश से लायी हुई जातियाँ पहाड़ पर ही हो सकती हैं। देश-रञ्जित या देशी जातियों के पौधे क़लम (डाली) से तैयार किये जाते हैं। क़लम अगहन-पौष (नवम्बर-दिसम्बर) में लगायी जाती है विदेशी जातियों के पौधे चश्मा (रिंग या ट्यब्यूलर ग्राफ्टिगं) चढ़ा कर तैयार किये जाते हैं। चश्मा आड़ू, नासपाती, बीही या सेव के पौधे पर चढ़ाया जाता है। यह क्रिया माघ (जनवरी) में होनी चाहिए। पौधों का चालान क्रेट में करना ठीक होता है।

ज़मीन और खादः आड़ू या नासपाती पर तैयार किये हुए पौधों के लिये बलुआ-दुमट जमीन उत्तम मानी गयी है। दूसरे पौधों पर हो तो दुमट ज़मीन ठीक होगी। जाड़े में बीस बीस फीट की दूरी पर गढ़े तैयार करवाने चाहिए। बलुआ जमीन में दो फीट व्यास के और उतने ही गहरे और दुमट में तीन फीट गहरे और उतने ही व्यास के होने चाहिएं। जब मिट्टी तीन चार सप्ताह तक खुली रह जाय तो उसमें एक मन खाद और दो सेर हड्डी का चूरा मिला देना चाहिए। खाद नीचे की दो फीट मिट्टी में मिलाना ठीक होता है। जब फल आने

लगे उस समय से प्रति वर्ष पौष-माघ में जड़ें खोल कर खाद देना चाहिए। खली या नाइट्रेट और हड्डी या सुपर फॉसफेट का खाद भी नासपाती के लिये लाभप्रद होगा। प्रत्येक पौधे पीछे क़रीब पावभर नत्रजन पहुँचे इतनी खली या आध पाव नत्रजन पहुँचे इतना सोडियम नाईट्रेट और दो सेर के करीब हड्डी का चूर्ण या सुपरफॉस्फेट डालना चाहिए।

पौधा लगाना:-पौष माघ (दिसम्बर-जनवरी) मे जब पौधों की वाढ़ रुकी हुई होती है उस समय इन्हें लगाना चाहिए।

सिंचाई और काटछांट:—सिंचाई साधारण होनी चाहिए। जब फल बैठते हैं उस वक्त विशेष और पकने लगें उस वक्त कम पानी दिया जाय तो फल आकार में बड़े और स्वाद में अच्छे स्वादिष्ट होते हैं। काटछांट पत्ते झड़ें उस वक्त मध्य जाड़े में होनी चाहिए। सूखी टहनियों को निकालने के सिवाय लम्बी लम्बी शाखाओं का एक तिहाई भाग काट दिया जाता है।

फ़सल की तैयारी और चालान:— छः सात साल में पौधे फल देने योग्य हो जाते हैं। प्रति वर्ष फल बरसात भर (जून से सितम्बर) मिलते रहते हैं। फलों का चालान टोकरियों में हो सकता है परन्तु इनमें न करके पतले प्लाइवुड के बक्स में या चटाई और क्रेट में किया जाय तो उत्तम होगा। बहुधा प्रत्येक फल को पतले रंगीन काग़ज में लपेट कर रक्खा जाता है।

उपयोग और गुण:—पके फल वैसे ही छील कर खाये जाते हैं। कुछ जातियां ऐसी भी हैं जिनके फल से तरकारी बनायी

जाती है। नासपाती हलकी वीर्यवर्धक, पित्त और कफ नाशक होती है।

नीबू Lime—*Citrus medica acida* (कागज़ी नीबू)
„ „ *limonum* (जमेरी नीबू)

नीबू कई प्रकार के होते हैं जिनके नाम भी अलग अलग हैं। आकार में नारियल से लेकर सुपारी के बराबर जाति अनुसार होते हैं। जिन नीबू की खेती विशेष रूप से की जाती है वे सन्तरे से छोटे होते हैं और दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। कागज़ी और जमेरी। कागज़ी का छिलका पतला, रस सुगन्धित और कुछ कम खट्टा होता है। जमेरी का छिलका मोटा और रस खट्टा होता है। कागज़ी नीबू भी दो प्रकार के होते हैं एक गोल और दूसरे अण्डाकृति वाले। कागज़ी और जमेरी के सिवाय एक प्रकार का नीबू और भी होता है जिसका रस मीठा होता है (*Citrus medica Var limetta*)। नीबू के पौधे बीज या गूटी से तैयार किये जाते हैं। बीज ताजे ही नर्सरी में गिरा देने चाहिएं। ये पन्द्रह बीस दिन में अंकुर फेंकते हैं। जब पौधे चार पाँच इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उन्हें एक एक फुट की दूरी पर लगा देना चाहिए और जब इस नये स्थान में डेढ़ दो फीट ऊँचे हो जायँ तो निर्धारित स्थान पर लगा सकते हैं। बीज से पौधे बहुधा संतरे की कलमें बांधने के लिए तैयार किये जाते हैं। गूटी या दाब कलम भाद्रपद के अन्त में लगाना ठीक होता है।

ज़मीन और खाद—नीबू बलुआ और मटियार को छोड़ कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। गढ़े पन्द्रह पन्द्रह फीट की दूरी पर संतरे के लिए जिस रीति से तैयार किये जाते हैं उसी रीति से करने चाहिएं। खाद प्रति वर्ष फल मिल जाने के पश्चात् जाड़े के अन्त में दे देना उत्तम होगा।

पौधे लगाना—पौधे बरसात में या जाड़े के अन्त में लगाये जाने चाहिएं।

सिंचाई और काट छांट—नीबू में फल आने के समय से फल तोड़ने तक बराबर सिंचाई करनी चाहिए। काटछांट सूखी और व्याधिग्रस्त टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—बीजू छः-सात साल में और कलमी तीसरे चौथे साल से फल देना प्रारम्भ करते हैं। यदि पाँच-छः साल की आयु के होने पर भी फल न दें तो गंधक के साथ सड़ाई हुई हड्डी का खाद (पृष्ठ ४०) देना चाहिए। प्रति पौधा पाँच सेर खाद देना ठीक होगा। नीबू वैसे तो बारहों महीने आते रहते हैं परन्तु अच्छी बहार दो बार आती है। एक तो श्रावण-भाद्रपद (जुलाई-अगस्त) और दूसरी जाड़े के अन्त में। फलों का चालान टोकरियों में आसानी से किया जा सकता है।

उपयोग और गुण—दोनों ही प्रकार के नीबू से भोज्य पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं। इनका आचार भी डाला जाता है। कागज़ी नीबू औषधि के लिए अधिक काम में लाये जाते हैं। मिल सके तो नित्य प्रति सेवन करना चाहिए। इनके रस को कुछ गरम

करके छान कर थोड़े से नमक के साथ बोतलों में भर कर रक्खा जाय तो महीनों तक रह जाता है। ऐसा रस दाल और तरकारियों को स्वादिष्ट करने के लिए काम में लाया जा सकता है।

जमेरी नीबू अग्निदीपक, कृमि नाशक, खांसी, वमन और प्यास को मिटाने वाला होता है। कागजी पाचक, हल्का, कृमि नाशक, पेटदर्द को आराम करने वाला और त्रिदोष नाशक है। जुकाम या सर्दी होने के प्रारम्भ में गरम पानी में नीबू का रस डाल कर कुल्ले किये जायँ और पिया जाय तो सर्दी रुक जाती है। ऐसे कुल्ले करने से दांत को भी लाभ पहुँचता है।

पपीता, पपैया, एरण्ड ककड़ी Papaya—*Carica papaya*

पेड़ की ऊँचाई के विचार से पपीते दो प्रकार के होते हैं। एक वे जिनकी ऊँचाई पन्द्रह बीस फीट होती है और दूसरे वे जो सात आठ फीट ऊँचे होते हैं। फल का वजन आधा सेर से दो ढाई सेर तक होता है। पपीते लङ्का की तरफ के बड़े मीठे होते हैं। इस जाति का फल लम्बा होता है। कुछ वर्षों से अमेरिका से एक जाति लायी गयी है जिसे Washington variety कहते हैं वह भी बड़ी अच्छी है। इसके फल दूसरे फलों की अपेक्षा कुछ अधिक दिनों तक टिकते हैं। पपीते मे नर और मादा पेड़ अलग अलग होते हैं। नर पेड़ से सिर्फ फूल ही मिलते हैं। कोई कोई पेड़ ऐसा भी निकल आता है जिसमें नर फूल के साथ साथ मादा फूल भी निकल आते हैं। ऐसे फूल के फल छोटे छोटे रह जाते हैं और विशेष स्वादिष्ट नहीं होते। अच्छे फल प्राप्त करने के लिए

प्रति पचीस मादा पेड़ों के साथ एक नर पेड़ भी अवश्य होना चाहिए। नर पेड़ के अभाव में फल छोटे और बीज रहित हो जाते हैं। पपीते के पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। वर्षा के प्रारम्भ में बीज नर्सरी में गिरा देने चाहिएं। करीव २०-२५ दिन में बीज अङ्कुर फेकते हैं। जब पौधे डेढ़ दो फीट ऊँचे हो जायँ तब खेत में लगाये जा सकते हैं।

ज़मीन की तैयारी और खाद:—गढ़े दस दस फ़ीट की दूरी पर डेढ़ दो फ़ीट व्यास के उतने ही गहरे बनवाकर प्रत्येक गढ़े पीछे हड्डी मिश्रित आठ दस सेर खाद मिलाना चाहिए।

पौधे लगाना:—जब जाड़ा कम हो जाय तब पौधे लगाने चाहिएं। नर मादा पेड़ बाल्य अवस्था में नहीं पहचाने जा सकते और खेत में लगाने पर बहुत से नर निकल आते हैं। उनकी जगह भरने के लिए कुछ पेड़ बड़े बड़े गमलों में भी तैयार रखने चाहिएं। कुछ लोगों की सम्मति है कि नर पेड़ का सिर काट दिया जाय तो वह मादा पेड़ हो जाता है। इसमें मुझे सफलता नहीं मिली है परन्तु प्रयत्न करना उचित है।

सिंचाई और काटछांट:—सिंचाई साधारण करते रहना चाहिए। जब पेड़ में कोई शाख निकल आवे तो उसे काट देना चाहिए ताकि बड़े बड़े फल प्राप्त हों। शाखें फूटने देने से फल संख्या में तो बढ़ जाते हैं परन्तु वज़न के विचार से प्रति पेड़ विशेष अन्तर नहीं होता। यदि पेड़ बहुत ऊँचा हो जाय और हवा से उसके टूटने का भय हो अथवा फल तोड़ने में कठिनाई

हो या जहाँ पर पाले का भय हो वहाँ पेड़ की ऊँचाई कम रखने के लिये शाखाएँ फूटने देना लाभप्रद ही होगा। दो तीन शाखाएँ फूटने देकर बीच का धड़ काट कर ऊपर कलमी मिट्टी लगा देनी चाहिए। जब फल बहुत घने हों तो छोटे छोटे फलों को तोड़ देना चाहिए। चौथे साल की फ़सल के बाद पेड़ों को काट कर भूमि बदल देना बहुत जरूरी है। यदि ऐसा न किया जाय तो फल बहुत छोटे २ आने लग जाते हैं और दो एक साल बाद पेड़ मर जाते हैं।

फ़सल की तैयारी और चालान:—अच्छी ज़मीन में लगाने के समय से एक साल में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। दूसरे और तीसरे साल में फल अच्छे आते हैं। चौथे साल बाद पेड़ों को काट देना ही ठीक है। फल बराबर मिलते रहे इसलिए तीसरे साल की फसल के समय ही नयी जमीन में पौधे लगा देने चाहिऍ। पपीते में फल करीब करीब साल भर आते रहते हैं परन्तु जाड़े में कम आते हैं और जल्दी पकते भी नहीं परन्तु जो पकते हैं वे मीठे होते हैं। प्रत्येक पेड़ से प्रति वर्ष डेढ़ दो दर्जन उम्दा फल प्राप्त करने का अनुमान आसानी से किया जा सकता है वैसे छोटे बड़े लगाकर किसी किसी पेड़ में चार पांच दर्जन फल भी मिल जाते हैं। पपीते के फल को पेड़ पर पूरा नहीं पकने देना चाहिए। जब नीचे का भाग पीला पड़ता नजर आवे तब तोड़ लेना चाहिए। फलों का चालान बांस की टोकरियों में घास के साथ किया जा सकता है। विशेष सावधानी के लिए देवदार के बक्स में जिनमें एक एक फल रखने के खाने बने हों भेजना

और भी उत्तम होगा। ऐसा करने से फल एक दूसरे से रगड़ खाकर बिगड़ेगें नहीं।

उपयोग और गुण :—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है और उनका दूध औषधि के लिए काम में लाया जाता है। कच्चे फल का अचार भी बना सकते हैं। पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं। फल पाचक, दस्तावर और बलवर्धक होता है। बढ़ी हुई तिल्ली या पेट की व्याधि के लिए इसका सेवन लाभप्रद होता है।

फालसा Phalsa—*Grewia asiatica*

इसके पेड़ की ऊँचाई करीब पांच छ फ़ीट तक होने देनी चाहिए। फल जंगली करौंदे इतना बड़ा बैंगनी रंग का खटमीठा होता है। पौधा बरसात में बीज बोकर तैयार किया जाता है।

ज़मीन और खाद :—यह बलुआ को छोड़ कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। गढ़े आठ आठ फीट की दूरी पर जिस प्रकार पपीते के लिए तैयार किये जाते हैं उसी भांति करने चाहिएं। काट-छांट के बाद भी खाद देना चाहिए।

पौधा लगाना—पौधा जाड़े के अन्त में लगाना ठीक होता है। क़रीब तीन साल की आयु के पौधे लगाये जाते हैं।

सिंचाई और काटछांट—पौधे लगाने के साथ ही पानी देना चाहिए बाद मे आवश्यकतानुसार दिया जा सकता है। काटछांट जाड़े में होनी चाहिए और छोटी-छोटी टहनियाँ इस तरह से काटनी चाहिए जिसमे पौधे की ऊँचाई तीन फीट की रह जाय।

फ़सल की तैयारी और चालान—पांच छः साल की आयु के होने पर पेड़ फलते हैं। प्रति वर्ष जाड़े में फूल कर चैत्र वैशाख में फल देते हैं। फल चालान के योग्य नहीं होते। निकट-वर्ती बाज़ार में टोकरियों में भेज सकते हैं। पैदावार दस-बारह सेर प्रति पेड़ के लगभग हो जाती है।

उपयोग और गुण—पके फल वैसे ही खाये जाते हैं। गर्मी में कुछ लोग इनका शरबत बना कर भी पीते हैं। इनके सेवन से रक्त विकार, ज्वर और बादी का नाश होता है। ये पुष्टि-कारक और पेट के दर्द को मिटाने वाले होते हैं। पत्तों से पत्तल और मिठाई के दोने भी बनाये जाते हैं।

बीही Quince—*Cydonia vulgaris*

इसका पौधा सेब के पौधे जैसा लेकिन उससे कुछ छोटा होता है इसलिए जब सेब और नासपाती के पौधों को छोटा करना होता है तो बीही के पौधे पर क़लम बांधते हैं। इसके पौधे क़लम (डाली) लगा कर तैयार करते हैं। यह बहुत जल्दी लग जाती है। क़लमें जाड़े के अन्त में लगानी चाहिएं।

यह सीमा प्रान्त और अफ़ग़ानिस्तान की तरफ़ होती है। पहाड़ों पर भी अच्छी हो जाती है। खेती ठीक सेब की खेती के समान करनी होती है। इसके फलो की मांग बहुत कम होती है। सेब और नासपाती की कलमें बांधने के लिए इसके पौधे विशेष उपयोगी हैं क्योंकि ये जल्दी जल्दी बढ़ते हैं। बीही का पका हुआ

फल खाया भी जाता है। यह मीठा और रसदार होता है। इसका मुरब्बा भी बनाया जाता है।

बेर Ber—*Zizyphus Var*..

बेर की कई जातियां हैं परन्तु सब बेर तीन विभाग में विभाजित किये जा सकते हैं। (१) पैवन्दी बेर, (२) जंगली बेर, (३) झड़िया बेर। पैवन्दी बेर इञ्च डेढ़ इञ्च लम्बे, अण्डाकृति या नोकीले होते हैं। इनका छिलका पतला होता है—गूदा भी अच्छा मोटा और मीठा होता है। जंगली बेर गोल, कुछ मोटे छिलके वाले और बहुधा खट्टे होते हैं। गूदा भी पतला ही होता है। आकार में ये छोटी सुपारी के बराबर होते है। झड़िया बेर लाल रंग के गोल, बहुत कम गूदे वाले होते हैं। स्वाद में ये जंगली बेर से कुछ मीठे और आकार में फूले हुए चने से कुछ बड़े होते हैं। पहली दो जातियों के पेड़ बीस पचीस फीट ऊँचे हो जाते हैं। तीसरी के पेड़ नहीं बल्कि झाड़ी होती है। इनकी ऊँचाई अधिक से अधिक तीन फ़ीट की होती है। पहली जाति के बेर नागपुर, बनारस, फ़रूखाबाद आदि स्थानों में अच्छे होते हैं। दूसरी जाति के सभी जगह जंगलों में पाये जाते हैं। तीसरी जाति के राजपूताना और मध्य भारत मे मिलते हैं। बग़ीचों में पहली जाति के बेर ही लगाने चाहिएं। बेर पहाड़ों पर नहीं होते।

बेर के पौधे बीज या चश्मे से तैयार किये जाते है। बीज लगाना हो तो ताजे ही बोने चाहिएं। जब पौधे एक साल की

आयु के हो जाते हैं तब उन पर चश्मा रिंग ग्राफ्टिंग की रीति से चढ़ाया जाता है। जंगली बेर का धड़ आषाढ़ (जून) में काट देने से जुलाई में उसमें नये कोंपल निकल आते हैं जिन पर क़लम चढ़ाई जा सकती है। जिस डाली से चश्मा लिया जाता है उसे पानी में कुछ देर के लिए छोड़ दिया जाय तो छाल जल्दी छूट जाती है। चश्मा बरसात में जब कोंपल निकलते हैं तब चढ़ाना चाहिए। वैसे जाड़े के प्रारम्भ तक चश्मा चढ़ाया जा सकता है। पौधों का चालान टोकरियों में होना चाहिए।

ज़मीन और खाद—बेर बलुआ को छोड़ कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। झड़िया बेर बलुआ में ही अच्छे होते हैं। पहली जाति के बेर के पेड़ बीस बीस फीट की दूरी पर होने चाहिएँ इसलिए अच्छी जुताई के पश्चात् गढ़े उतनी ही दूरी पर बनवाने चाहिएं। गढ़े दो ढाई फ़ीट गहरे और उतने ही व्यास के गर्मी में तैयार हो जाने चाहिएं। भरते समय उनकी मिट्टी में सेर सवा सेर हड्डी का चूर्ण, कुछ राख और क़रीब आध मन के गोबर-पत्ते का खाद मिला देना चाहिए। प्रति वर्ष फल आने के बाद जड़ें खोल कर कुछ खाद दे देना भी जरूरी है। यदि सिंचाई न हो सके तो ज्येष्ठ के अन्त में खाद देना ठीक होगा।

पौधा लगाना—बरसात या जाड़े के प्रारम्भ में पौधे लगाने चाहिएं।

सिंचाई और काटछांट—सिंचाई साधारण होनी चाहिए। फूलने के समय से फलों की बाढ़ तक पानी कुछ विशेष देना

पड़ता है। फल मिल जाने के बाद काट छांट करनी चाहिए। क़रीब क़रीब सब टहनियों को शाखाओं के निकट से काट देने से शाखाएँ बहुत जल्दी नये कोंपल फेंक देती हैं।

फ़सल की तैयारी और चालान—बेर के कलमी पेड़ छः-सात साल की आयु के और बीजू दस बारह साल के होने पर अच्छे फल देते हैं। जाड़े के प्रारम्भ में फूल आते हैं जिसे कहीं कहीं खीचड़ी कहते हैं। फल माघ से चैत्र तक (जनवरी से मार्च) मिलते रहते हैं। फलों की पैदावार प्रति पेड़ छः मन कूती जा सकती है। फलों का चालान बहुधा बोरों में किया जाता है परन्तु इससे बहुत से बेर बिगड़ जाते हैं। टोकरियों में भेजना अच्छा होता है। चालान के बेर उस वक्त तोड़ने चाहिए जब फलों की हरियाली मिटाने लगे और हल्का सा पीलापन आ जाय।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। जंगली बेर का अचार भी बनाया जाता है। बेर शीतल, दस्तावर और पुष्टिकारक होते हैं। इनसे रक्त साफ़ होता है और दाह तथा प्यास शान्त होती है। कच्चे बेर पित्तकारी और कफ़ बर्धक होते हैं।

बेरी-गूज़, मकोय, टिपारो Gooseberry or Cape Gooseberry—*Physalis peruviana*

इसका फल जंगली बेर के आकार का पीले रंग का होता है और सूखे पत्ते जैसे फूल की पहली पंखड़ियों (Calyx) में ढका रहता है। इसकी खेती जहां पाला नहीं पड़ता वहां हो जाती है। प्रति वर्ष नये पौधे लगाने पड़ते हैं। पौधे तैयार करने के लिए

बरसात में बीज नर्सरी या लकड़ी के गमलों में लगाये जाते हैं। जब बरसात समाप्त हो जाती है और पौधे चार-पांच इञ्च ऊँचे हो जाते हैं तब निर्धारित स्थान में लगाये जाते हैं।

ज़मीन और खाद—अच्छी उपजाऊ दुमट ज़मीन इसके लिए ठीक होती है। क़रीब तीन सौ मन खाद और तीन मन हड्डी का चूर्ण प्रति एकड़ डाल कर गर्मी में और बरसात में अच्छी जुताई करनी चाहिए।

पौधे लगाना—उपरोक्त रीति से नर्सरी में तैयार किये हुए पौधे खेत में बरसात के अन्त में अर्थात् आश्विन में दो दो फ़ीट की दूरी पर पंक्तियों में लगाने चाहिएं। पंक्तियों में तीन तीन फ़ीट का अन्तर होना चाहिए।

सिंचाई और काट छांट—जब पौधे एक फुट ऊँचे हो जायँ तो बीच की फुनगी तोड़ देनी चाहिए। ऐसा करने से नयी शाखाएं अधिक संख्या में निकल आती हैं और फल अधिक प्राप्त होते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान:—इसके फल जाड़े में तैयार हो जाते हैं और फाल्गुन (मध्य मार्च) तक मिलते रहते हैं। जब फल पीले हो जायँ तब तोड़ने चाहिएं। फल निकटवर्ती बाज़ार में टोकरियों में भरकर भेजे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। ये बड़े मीठे और स्वादिष्ट होते हैं। इनका मुरब्बा भी बनाया जाता है। विशेषतः इसी के लिए इनकी खेती की जाती है।

बेरी-ब्लेक—Blackberry *Rubus frutcicosus*

इसके पौधे बीज या टोंटे (offsets) से पैदा करते है।

ज़मीन और खाद—दुमट मिट्टी में यह लगायी जाय तो अच्छी होती है। इसके लिए एक फुट गहरे गढ़े बनवाकर उनमें दो ढाई सेर खाद दे देना चाहिए। गढ़ों में तीन फ़ीट का और पंक्तियों में चार फीट का अन्तर ठीक होता है।

पौधे लगाना—बरसात में टोंटे लगा देना चाहिएं।

सिंचाई और काटछांट—सिचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। फल ले लेने के पश्चात् या जाड़े के प्रारम्भ में जिन डंठलों से फल प्राप्त हो जाँय उन्हे काट देना चाहिए क्योंकि फल हर साल नये कोंपलों पर आते हैं।

फ़सल की तैयारी—पौधे लगाने के समय से दो साल में फल आना प्रारम्भ होते हैं और चैत्र बैसाख (अप्रैल-मई) मे मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते है परन्तु विशेषत: मुरब्बे के लिये काम में लाये जाते हैं।

बेरी और भी कई प्रकार की होती हैं जैसे रास्प बेरी, ड्यू बेरी इत्यादि। इन सब की खेती क़रीब क़रीब ब्लेकबेरी के समान की जा सकती है।

बेरी-स्ट्रा Strawberry *Fragaria vesca*

इसका पौधा बहुत छोटा होता है और इधर उधर पड़ा रहता

है। यह मैदानों में भी हो जाता है परन्तु पहाड़ों पर अच्छा होता है। फल लाल रंग के छोटी लीची जैसे होते हैं।

ज़मीन और खाद—इसके लिए दुमट ज़मीन उत्तम होती है। गर्मी में तीन सौ से चार सौ मन खाद प्रति एकड़ देकर बरसात के अन्त में इसे लगा सकते हैं। खेत की अच्छी जुताई के पश्चात् इसके लिए खेत के ढालानुसार क्यारियां बनाकर उनमें लगानी चाहिए। इसे पारियों पर भी लगा सकते हैं; उस स्थिति में नालियां दो दो फीट के अन्तर पर होनी चाहिएं।

पौधे लगाना—पहाड़ों पर आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्टूबर) या फाल्गुन-चैत्र याना जाड़े के अन्त में लगाना चाहिए। मैदानों में जाड़े के प्रारम्भ में लगाना ठीक होता है। इसकी लता जो ज़मीन पर पड़ी रहता है जगह जगह जड़ें फेंक देती है सो उनके टुकड़े (Runners) जड़ सहित लाकर लगाये जाते हैं। पंक्तियां पंद्रह से अठारह इञ्च की दूरी पर और पौधे एक एक फुट की दूरी पर लगाने चाहिएं। यदि पारियों पर लगाना हो तो उपरोक्त रीति से बनायी हुई पारियों पर बीच पारी में एक एक फुट की दूरी पर पौधे लगा देने चाहिएं।

बरसात में इसके पौधे खेत में छोड़ दिये जायं तो मर जाते इसलिए वहां से उठाकर छाया में लगा देने चाहिएं जिसमें बरसात से बच जाय।

सोहनी और सिंचाई—खेत में घासपात साफ करते रहना चाहिए और सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फल पकने लगे उस वक्त बहुत कम पानी देना चाहिए। फलों की बाढ़ के दिनों में क़रीब सवा मन पोटाश का खाद दिया जाय तो फल मोटे भी होते है और मीठे भी अच्छे हो जाते हैं। उपरोक्त खाद के अभाव में आठ दस मन राख डाल देनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान :—मैदानों मे चैत्र-बैशाख में और पहाड़ों पर माघ फाल्गुन में फल मिलते हैं।

उपयोग :—फल वैसे भी खाये जाते हैं परन्तु बहुधा मुरब्बा बनाने के काम में लाये जाते हैं। मलाई और चीनी के साथ खाने से स्वाद बहुत अच्छा हो जाता है।

बेल Bel—*Aegle marmelos*

यह भारतवर्ष में प्रायः सब स्थानों में पाया जाता है। फल छोटी गेंद के आकार से लेकर नारियल इतने बड़े होते हैं। पौधा बीज से तैयार किया जाता है। पौधों का चालान टोकरियों में हो सकता है।

ज़मीन और खाद :—इसके खेत के खेत नहीं लगाये जाते। चूंकि फल मे अच्छा गुण है, अच्छे बड़े फल वाली जाति के एक या दो पेड़ साधारण फलों के लगाने की रीति अनुसार बरसात मे लगा देने चाहिएं।

सिंचाई और काटछाँट :—सिंचाई साधारण और काट-छांट श्रावण में जब भगवान शङ्कर को चढ़ाने के लिए बेलपत्र तोड़े जाते हैं उस वक्त करा देनी चाहिए ताकि दोनों काम एक साथ हो जायँ और पत्तों से कुछ आमदनी भी हो जाय।

फ़सल की तैयारी और चालान :—लगाने के समय से सात आठ साल बाद फल मिलना प्रारम्भ होते हैं। पके फल बैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में मिलते हैं। फल चूंकि बड़े सस्ते बिकते हैं निकटवर्ती बाज़ार में ही गाड़ी भर कर भेजे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—पत्ते पूजन मे काम मे लाये जाते हैं। पके हुए फल का गूदा बहुत लोग वैसे ही खा जाते हैं। कुछ लोग दूध और चीनी के साथ शरबत बनाकर गर्मी में पीते हैं। कच्चा फल पाचक होता है। भूंज कर चीनी के साथ खाया जाय तो दस्त और पेचिश को रोकने वाला तथा पेट के दर्द को मिटाने वाला होता है। पका फल ठण्ढा और हल्का दस्तावर होता है।

रामफल, नोना Bullock's heart—*Anona reticulata*

इसे कहीं कहीं सीताफल भी कहते हैं परन्तु इस पुस्तक का सीताफल (शरीफा) दूसरा ही है जिसकी खेती का वर्णन आगे दिया गया है। गूदे के रंग और बीज के आकार से देखा जाय तो इसमें और सीताफल में बहुत कम अन्तर है। स्वाद में सीताफल से यह कम मीठा होता है। ऊपरी आकार में दोनों में बड़ा अन्तर है। सीताफल की कलियाँ खुली हुई मालूम होती हैं और रामफल ऊपर से साफ होता है। सीताफल का रंग हरा होता है और रामफल पकने पर हकला बैंगनी हो जाता है। इसकी खेती ठीक सीताफल (शरीफा) की खेती के सामान होनी चाहिए। इसका फल गर्मी में मिलता है जब सीताफल नहीं मिलते यही इसकी खेती में मुख्य लाभ है।

रैन्ता, रेती ककड़ी Cucumber—*Cucumis Var Utilitimus*

यह गर्मी के दिनों मे मिलने वाली ककड़ी है जो पहले हरे और फिर अंगूरी रंग की हो जाती है। छोटे फलों पर कुछ रोएं भी होते हैं। फल फुट डेढ़ फुट लम्बे दो इञ्च मोटे होते हैं। लखनऊ की विख्यात ककड़ियाँ एक इञ्च से कुछ ही मोटी और एक फुट के करीब लम्बी होती हैं।

ज़मीन और खाद—खरबूजे की भांति यह नदी नाले की बालू में ही होती है। प्रति एकड़ सवा सौ मन के क़रीब खाद नालियों की बालू में मिला देना चाहिए। नालियां दो फीट चौड़ी और आठ दस इञ्च गहरी तीन तीन फीट की दूरी पर होनी चाहिए।

बोना—माघ फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) मे उपरोक्त रीति से तैयार की हुई नालियों में तीन तीन फीट की दूरी पर दो दो बीज लगा देने चाहिए। एक एड़क के लिए क़रीब एक सेर बीज की आवश्यकता होती है।

सिंचाई और काटछांट—सिंचाई साधारण होनी चाहिए। सोहनी के समय दो दो पौधो मे से एक एक सबल को रख कर दूसरे निर्बल को उखाड़ देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—बैसाख जेष्ठ मे इस के फल मिलते हैं। ककड़ियों का चालान छिछली टोकरियों मे या बक्सों मे अच्छा होता है। कहीं कहीं गूणों (सुतली की जाली)

में भर कर भैंसों पर लाद कर भी ले जाते हैं परन्तु इस रीति से ले जाने में कुछ फल बिगड़ जाते हैं।

उपयोग और गुण :—हरी ककड़ियां कच्ची ही खायी जाती हैं और इनकी तरकारी भी बनती है। ये शीतल हलकी और रुचि कारक होती हैं। दूसरी फ़सल के लिये बीज पकी हुई ककड़ियों के रखने चाहिए।

लीची Lichi—*Nephelium litchi*

इसकी खेती चीन में बहुतायत से होती है। भारतवर्ष में उत्तर बिहार में दरभंगा और मुज़फ्फरपुर के आस पास ही इसकी खेती विशेष रूप से की जाती है। संयुक्त प्रान्त में हिमालय की तलेटी में सहारनपुर और देहरादून के जिलों में, बंगाल में हुगली के निकट तथा आसाम में भी कुछ हद तक होती है। इसका पेड़ पचीस तीस फीट ऊँचा होता है और घेरा क़रीब बीस फीट का होता है। पेड़ जब फैलता है तो फलों के लाल रंग के गुच्छे बड़े मनोहर दिखलायी देते हैं। इसका पौधा दाब क़लम या गूटी से तैय्यार किया जाता है। संयुक्त प्रान्त मे दाब क़लम बैसाख ज्येष्ठ (April-May) में लगायी जाती है। गूटी एक साल की आयु की स्वस्थ टहनी पर बरसात के अन्त में यानी मध्य अगस्त में बांधनी चाहिए। गूटी बांधने की टहनी को छीलकर क़रीब तीन सप्ताह तक वैसी ही खुली हुई छोड़ देनी चाहिए और जब कटी हुई छाल के निकट कुछ फूली हुई बाढ़-सी नज़र आवे तब मिट्टी बांधनी चाहिए। यदि तीन सप्ताह मे फूली हुई बाढ़ नज़र नहीं

आये तो उस टहनी पर मिट्टी न बांध कर उसे छोड़ ही देना चाहिए। करीब दो ढाई महीने में गूटी पेड़ से पृथक करने योग्य हो जाती है। बँधी हुई मिट्टी के बाहर जड़े दिखलायी दें उसके दो सप्ताह बाद गूटी वाली टहनी को काट कर नर्सरी में लगा देना चाहिए। पौधो का चालान टोकरियों मे आसानी से किया जा सकता है।

ज़मीन और खाद—कछार दुमट ज़मीन जिसमें चूने की मात्रा अधिक हो इसके लिए अच्छी होती है। गढ़े तीन फीट व्यास के और उतने ही गहरे पचीस फीट की दूरी पर बनवाने चाहिएं और प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में पचीस तीस सेर गोबर का खाद और दो ढाई सेर हड्डी का चूर्ण डालना चाहिए। फल प्राप्त होने लगे उस वक्त से माघ (जनवरी) मे या सिंचाई का प्रबन्ध न हो तो फल लेने के पश्चात् आसाढ़ (जून) में खाद दे देना चाहिए। गोबर के खाद के साथ दो तीन सेर नीम या एरंडी की खली, दो सेर हड्डी का चूर्ण तथा तीन चार सेर राख प्रति वर्ष दे देना ठीक होगा। लीची के लिए मछली का खाद भी उत्तम माना गया है सो मिल सके तो प्रति पेड़ तीन चार सेर के लगभग दे देना चाहिए।

पौधा लगाना—पौधे बरसात में लगाना ठीक होता है वैसे जाड़े के अन्त तक लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट—सिचाई पहले दो तीन साल तक की जाती है बाद में विहार में नही की जाती परन्तु जहां की भूमि

में तरी कम हो, गर्मी में सिंचाई अवश्य होनी चाहिए। काट छांट जब फल तोड़े जाते हैं उस वक्त हो जाती है क्योंकि फलों के गुच्छे के गुच्छे तोड़े जाते हैं और साथ में कुछ टहनियां भी टूट ही जाती हैं। फल दूसरे साल नयी बाढ़ पर ही आते हैं इसलिए ऐसा करने से पेड़ को हानि नहीं पहुँचती। अधिक आयु के हो जाने पर जब पेड़ नहीं फलते या फल फटे हुए मिलते हैं तो छोटी छोटी सब शाखाएं काट दी जाती हैं। ऐसा करने से जो नयी शाखाएं निकलती हैं उनसे दो एक साल के लिए अच्छे फल मिल जाते हैं। फलों के पकने के समय यदि गरम हवा चल जाय तो फल फट कर झड़ जाते हैं और यदि उस समय एक अच्छी बारिश हो जाय तो फल बड़े और स्वादिष्ट हो जाते हैं। गरम हवा से बचाने के लिए हवा की रोक का प्रबन्ध करना चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—पौधा लगाने के समय से पेड़ पाँच छ साल की आयु के होने पर फल देना प्रारम्भ करते हैं और लगभग पचास साल की आयु तक फल मिलते रहते हैं। प्रत्येक पेड़ से दो तीन रुपये साल की आमदनी बिना अत्युक्ति के अनुमान की जा सकती है वैसे यदि हवा से बचाया जा सके और मालिक स्वयम् ही माल बेच सके तो १०) प्रति पेड़ भी हो सकती है परन्तु बड़े बग़ीचों में औसत आय दो तीन रुपया ही मानना ठीक है। फल पहले हरे से पीले और पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। फलों का चालान उनके डण्ठल सहित लीची या शीशम के पत्तों के साथ छोटी छोटी टोकरियों में होना चाहिए।

प्रत्येक टोकरी में पांच छ सौ लीची भरी जायँ तो उत्तम होगा। अधिक सावधानी से भेजना हो तो छोटी छोटी टोकरियों में जिनमें क़रीब एक सौ लीची समाये ऐसी बनवाकर उनकी दो तह एक बक्स या क्रेट में भेजना चाहिए।

उपयोग—लीची का गूदा खाया जाता है जो बड़ा मीठा और रसदार होता है। चीन में लीचियाँ सुखाई जाती हैं। सूखने पर ये काली हो जाती हैं। वहाँ से सूखे फलों का चालान वलायत और अमेरिका को किया जाता है।

लोक़ाट Loquat—*Eriobotria japonica.*

इसकी खेती चीन और जापान में बहुत होती है। वहीं से इसका आगमन भारतवर्ष में हुआ है। पौधा बीज, चश्मा, गूटी या भेट क़लम से तैयार किया जाता है। बीज ताज़े ही बोने चाहिएं। क़लम या गूटी आषाढ़ श्रावण में और चश्मा चैत्र मास में चढ़ाया जाता है। पौधे कुछ कमज़ोर होते हैं इसलिए क्रेट में भेजे जाने चाहिएं।

ज़मीन और खादः—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। गढ़े बीस बीस फीट की दूरी पर दो ढाई फ़ीट व्यास के दो दो फीट गहरे गर्मी में बनवाने चाहिएं। प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में दो सेर हड्डी का चूर्ण, कुछ राख और आधा मन गोबर का खाद देना चाहिए। जाड़े के प्रारम्भ में जड़ें खोल कर दो एक सप्ताह बाद हड्डी मिश्रित खाद दे करके उन्हें बन्द कर देना चाहिए। प्रत्येक पौधे पीछे पाव भर नत्रजन पहुँचे इतना खली का खाद या

आधा पाव नत्रजन कृत्रिम खाद के रूप में दी जा सके तो अच्छा ही है। एक सेर के क़रीब हड्डी का चूर्ण भी देना चाहिए।

पौधा लगाना :—जाड़े के अन्त में पौधे लगाने चाहिएं।

सिंचाई और काटछाँट :—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए, फल पकने लगे तब भी सिंचाई करते रहना चाहिए। काटछाँट सूखी टहनियों की की जाती है। जड़ें कार्तिक (अक्टोबर) में खोलनी चाहिएं।

फ़सल की तैयारी और चालान :—पाँच छः साल की आयु के होने पर पेड़ फलने लगते हैं और प्रतिवर्ष फाल्गुन चैत्र (मार्च-अप्रैल) में फल मिलते हैं। पकने पर फल पीले रंग के हो जाते हैं। फलों का चालान निकटवर्ती बाज़ार में टोकरियों में हो सकता है। दूर भेजना हो तो लोचों की भांति भेजने चाहिएं।

उपयोग और गुण :—फल का गूदा खाया जाता है जो खटमीठा होता है। यह शीतल और तृप्तिदायक होता है।

शफ़तालू Nectarine— *Amygdalus persica Var lævis*

यह एक प्रकार का आड़ू ही है जो पहाड़ों पर होता है। आड़ू का छिलका रोएंदार हलके मखमल जैसा मालूम होता है और शफतालू का साफ होता है। इसकी खेती आड़ू की खेती के समान की जाती है। पौधे लगाने के समय से आड़ू तीन साल में और यह पाँच साल में फलता है। इसके पौधे आड़ू या आलू बुखारा पर क़लम बाँध कर तैयार किये जाते हैं।

शरीफ़ा, सीताफल Custard apple—*Anona squamosa*

यह फल भारतवर्ष में प्रायः सभी प्रान्तों में पाया जाता है और जंगलों में विना देखभाल के हो जाता है। जहाँ वर्षा वहुत कम होती है वहाँ और जहाँ सर्दी बहुत ज्यादा पड़ती है वहाँ यह नहीं होता। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। ताज़े बीज ही नर्सरी में लगाकर पानी देते रहने से पौधे तैयार हो जाते हैं।

ज़मीन और खाद: यह दुमट और बलुआ-दुमट मिट्टी मे अच्छा होता है। गर्मी में पन्द्रह फीट की दूरी पर दो तीन फ़ीट व्यास के और दो फीट गहरे गढ्ढे वनवा कर उनकी मिट्टी में दस पन्द्रह सेर हड्डी मिश्रित खाद दे देना चाहिए। फल आने लगे उस समय से प्रति वर्ष शरद ऋतु में जड़ें खोल कर या बरसात के पहले कुछ खाद दिया जा सके तो अच्छा होगा।

पौधा लगाना:—पौधे वरसात मे लगाये जाते हैं।

सिंचाई और काटछाँट:—सिचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। काटछाँट सूखी टहनियों की की जाती है। पत्ते माघ फाल्गुन मे झड़ते हैं और चैत्र मास में नये पत्ते और फूल आने लग जाते हैं।

फ़सल की तैयारी और चालान:—पौधे लगाने के समय से चार पाँच साल मे पेड़ फल देने योग्य हो जाते है और पन्द्रह बीस साल तक फल देते रहते हैं। प्रति वर्ष श्रावण-भाद्रपद (जून-जुलाई) से कार्तिक-अगहन (अक्टूबर-नवम्बर) तक फल मिलते रहते है। जब फल की कलियों के जोड़ बाहर से सफेद होने लगें

तब फल तोड़ने चाहिएं। ऐसे फल घास में रख देने से तीन चार दिन में पक जाते हैं। फलों का चालान घास के साथ टोकरियों में किया जा सकता है।

उपयोग और गुण :—फल मीठे होते हैं और वैसे ही खाये जाते हैं। ये शीतल, बलवर्द्धक, हृदय को हितकारी और कफ कारक होते हैं।

शहतूत या तूत Mulberry { सफेद Morus alba / काला „ Nigra }

शहतूत सफ़ेद और काले ऐसे दो प्रकार के होते हैं। पहले के फल बहुधा इञ्च डेढ़ इञ्च लम्बे या गोल होते हैं। दूसरे के विशेषतः लम्बे ही होते हैं। पौधे बीज या क़लम (डाली) लगाकर तैयार किये जाते हैं। विशेषतः डाली से ही तैयार करते हैं। क़लमें अगहन-पौष (नवम्बर-दिसम्बर) में लगानी चाहिएं। क़लमों का चालान यदि कुछ दूर करना हो तो कोयले के चूर्ण मे किया जाय तो उत्तम होगा।

ज़मीन और खाद:—रेशम के कीड़े पालने के लिये जब यह लगाया जाता है तब खेत के खेत लगाये जाते हैं अन्यथा निजी बाग़ीचों मे एक दो पेड़ लगा देने चाहिएं जो साधारण पेड़ों के लगाने की रीति से लगाये जा सकते हैं।

पौधा लगाना:—नर्सरी में तैयार किये हुये पौधे मिलें तो उन्हें बरसात में लगा सकते हैं।

सिचाई और काटछांट:—साधारण सिंचाई होनी चाहिए। जब फल आने लगें तब से जब तक फल समाप्त न हो जांय पानी

पूरा देना चाहिए। काटछांट भी साधारण ही होनी चाहिए। जो शहतूत रेशम के कीड़े के लिये लगाया जाता है उसकी काटछांट बहुत करनी पड़ती है जिसमें पत्ते अधिक आवें।

फ़सल की तैयारी और चालानः—क़लमी पौधे तीन साल की आयु के होने पर फल देते हैं और प्रति वर्ष चैत्र-वैशाख (अप्रैल-मई) में फल मिलते हैं। फल निकटवर्ती बाज़ार में छिछली टोकरियों में भेजे जा सकते हैं।

उपयोग और गुणः—पत्ते रेशम के कीट को खिलाये जाते हैं। फल वैसे ही चूस कर खाये जाते हैं। इनका रस भी निकाला जा सकता है जिससे शरबत बना कर पीते हैं। यह भारी, शीतल और पित्त नाशक होता है।

सन्तरा, माल्टा, मौसम्बी Orange—*Citrus aurantium*

भारतवर्ष में नागपुरी और सिलहटी सन्तरे विख्यात हैं। नागपुरी की अपेक्षा सिलहटी सन्तरे छोटे लेकिन कम बीज वाले और अधिक मीठे होते हैं। उपरोक्त स्थानों के सिवाय सन्तरे देहली, लाहौर, मुल्तान, पूना, मद्रास, लंका, नैपाल, भूटान आदि स्थानों में भी होते हैं और नित्यप्रति इनकी खेती का विस्तार बढ़ता ही चला जाता है।

साधारणतः सन्तरे तीन भागों में विभाजित किये जा सकते हैं।

(१) मोटे और ढीले छिलके वाले पीले या नारंगी रंग के।

(२) पतले और चिपके हुए छिलके वाले पीले रंग के।

उपरोक्त दोनों सन्तरे आसानी से छीले जा सकते है और छीलने पर अन्दर की फांकें सहूलियत से अलग अलग की जा सकती हैं।

(३) माल्टा या मौसम्बी—पञ्जाब की तरफ इस जाति के सन्तरे को माल्टा कहते हैं और गुजरात की तरफ़ मौसम्बी कहते हैं। सन्तरे का पेड़ सीधा लेकिन माल्टा का फैला हुआ होता है। फल हरे पीले रंग के चिपके हुए खुरखुरे धारीदार छिलके वाले होते हैं। इनका छिलका जल्दी नहीं छूटता है और रस भी आसानी से नही निकलता। पहले दो प्रकार के सन्तरों की अपेक्षा इसका रस मीठा और एक निराले स्वाद का होता है। स्वास्थ्य के लिए सन्तरों की अपेक्षा इनका मान्य अधिक है।

सन्तरा के पौधे चश्मा चढ़ाकर तैयार किये जाते हैं। चश्मा कार्तिक से पौष (अक्टूबर से दिसम्बर) तक चढ़ाया जाता है। चश्में के लिये बीजू पौधे मीठे या जमेरी नीबू के बीज से तैयार किये जाते हैं,* नीबू के बीज की उपज शक्ति बहुत जल्दी नष्ट हो जाती है इसलिए ताज़े बीज ही नर्सरी या गमलों में लगा देने चाहिएं। पानी बराबर मिलता रहे तो ये पौधे बरसात के प्रारम्भ तक तीन चार इञ्च ऊँचे हो जाते हैं। इस वक्त इन्हे नर्सरी में चार पांच इञ्च की दूरी पर लगाकर कार्तिक (अक्टूबर) में वहां से

---

* हैदराबाद रियासत के अदीलाबाद ज़िले में सन्तरे का चश्मा कैथ के पौधे पर भी चढाया जाता है।

हटा करके फुट डेढ़ फुट की दूरी पर लगा देना चाहिए। दूसरे कार्तिक तक ये पौधे चश्मा चढ़ाने योग्य हो जाते हैं। जब चश्मा जमेरी नीबू के पौधे पर चढ़ाया जाता है तो फल ढीले छिलके वाले कुछ कम मीठे होते हैं लेकिन पैदावार विशेष होती है। मीठे नीबू के पौधे पर चढ़ाया जाय तो फल मीठे और चिपके हुए छिलके वाले होते हैं। माल्टा (मौसम्बी) का चश्मा मीठे नीबू पर ही ठीक होता है। इससे पेड़ छोटे होकर बहुत मीठे फल देते हैं लेकिन पैदावार कुछ कम होती है।

चश्मा चढ़ाने वाली डाली पार्सल द्वारा कोयले के चूर्ण में बाहर से भी मंगवायी जा सकती है। पेड़ से पृथक होने पर भी दो तीन सप्ताह तक इसके चश्मों में उपज-शक्ति बनी रहती है।

सन्तरों के पौधे पौष-माघ मे बीज लगाकर भी तैयार किये जा सकते हैं परन्तु ऐसा करने से पेड़ देरी से फलते हैं, और पेड़ अधिक कांटे वाले हो जाते हैं जिनसे कभी २ फलों में छेद हो जाते हैं। ऐसे पेड़ क़रीब दस बारह साल की आयु के होने पर फलते हैं। बीज से लगाने में विशेष लाभ यह होता है कि पेड़ की आयु अच्छी होती है। जहां क़लमी पौधे की आयु बीस साल की होती है वहाँ बीजू की पचास साठ साल की होती है, इसीसे आसाम, ब्रह्म-प्रदेश वग़ैरह मे बीजू पेड़ ही ज्यादा लगाए जाते हैं। पौधों का चालान क्रेट में होना चाहिए। नज़दीक होने से टोकरियो मे भेज सकते हैं।

ज़मीन और खादः—सन्तरे के लिए ऐसी दुमट मिट्टी

जिसमें नीचे की भूमि में चूने के कङ्कड़ हों और जिसमें पानी नहीं लगता हो उत्तम होती है। गर्मी में सन्तरों के पेड़ के लिये पन्द्रह फ़ीट और मौसम्बी के लिए लगभग बीस फीट की दूरी पर गढ़े बनवाने चाहिएं। आसाम में सन्तरे दस फ़ीट और दक्षिण भारत में बीस फीट की दूरी पर लगाये जाते हैं। नागपुर में पन्द्रह से अठारह फीट का अन्तर ठीक माना गया है। गढ़े दो ढाई फ़ीट व्यास के तीन फ़ीट गहरे होने चाहिएं और प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में दो सेर हड्डी का चूरा, पांच सेर राख और पचीस तीस सेर गोबर का खाद मिलाना चाहिए। दो तीन सप्ताह तक धूप खिलाने के बाद मिट्टी में खाद मिलाकर गढ़े भर देने चाहिएं। फिर एक बारिश के बाद आवश्यकतानुसार खोद कर उन गढ़ों में पौधे लगाये जा सकते हैं। फल आने लगें उस वक़्त से फसल ले लेने के बाद ही ज्येष्ठ (मई) के अन्त में जड़ें खोल कर एक दो सप्ताह बाद उनमें खाद दे देना चाहिए। गोबर के खाद के साथ हड्डी का चूर्ण और राख भी दी जा सके तो उत्तम होगा। यदि खली मिल सके तो प्रत्येक पौधे पीछे दो सेर खली उतनी ही राख और एक सेर हड्डी का चूर्ण दिया जाना चाहिए। कृत्रिम खादों मे पाव भर एमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट आधा सेर सूपरफॉस्फेट और उतना ही पोटेशियम सलफेट भी देना चाहिए। कृत्रिम खाद या खली दी जाय तो जाड़े और गर्मी की दोनों फसलें ली जा सकती हैं परन्तु पौधों के स्वास्थ्य के विचार से एक ही फ़सल लेनी उत्तम है और वह भी गर्मी की फ़सल लेना ही विशेष लाभप्रद होगा। जब दोनों

फ़सलें लेना हो तो जड़ों को अधिक दिनों तक नही खोलनी चाहिएं और दोनों फ़सलों के फल तोड़ने के बाद ही मिट्टी में कृत्रिम खाद मिलाकर जड़ें ढक देनी चाहिएं। गर्मी की फसल प्राप्त करने के लिए बैशाख ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में सिंचाई बन्द करके बरसात के पहले खाद दे देना चाहिए। ऐसा करने से जून में फूल आवेंगे जिन से नौ दस महीने बाद मार्च-अप्रैल में फल मिलेंगे। यदि जाड़े की फसल लेना हो तो पौष (दिसम्बर) में जड़ें खोलकर खाद देने के पश्चात् सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए। इससे माघ-फाल्गुन में फूल आकर जाड़े में फल मिलेंगे। जाड़े की फ़सल लेने के लिए गर्मी में बराबर सिंचाई करनी पड़ती है। बरसात में संतरों को एक प्रकार का पतंग बहुत हानि पहुँचाता है। वह फलों में छेद कर देता है जिससे फल पेड़ से गिर जाते हैं। इससे बचाने तथा सिंचाई से बचने के विचार से गर्मी की फसल लेना ही उचित है।

पौधे लगाना—जहां तक हो बरसात में लगाना ठीक है वैसे जाड़े में भी लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट—सिंचाई साधारण होनी चाहिए। जाड़े की फसल के लिए फूल माघ (जनवरी) में और गर्मी की फसल के लिए आषाढ़ (जून) में आते हैं। सिंचाई जाड़े और गर्मी दोनों में नहीं तो गर्मी में तो अवश्य करनी पड़ती है। गर्मी की सिंचाई से जैसा कि ऊपर बतलाया गया है उसी हालत में छुटकारा हो सकता है जब कि जाड़े की फ़सल न ली जाय। छोटे

पेड़ों की काटछांट आकार के लिए की जाती है। बड़े पेड़ों में सूखी या व्याधि-ग्रस्त टहनियाँ काटनी चाहिएं। पेड़ के धड़ पर या डालियों पर से कभी गोंध सा पदार्थ (Gummosis) निकलता है और पेड़ या डाली मर जाती है। जब ऐसा होता हुआ दिखाई दे तो उस भाग को छीलकर वहां पर कार्बोलिक एसिड और पानी बराबर भाग में मिला कर लगा देना चाहिए। इसके बाद ऊपर से मोम या अलकतरा लगा देना चाहिए।

फसल की तैयारी और चालान—पौधे लगाने के समय से चार पांच साल में फल आना प्रारम्भ होते हैं और साल में दो बार फलते हैं। पहली फसल के फल जाड़े में और दूसरी के गर्मी (मार्च-अप्रैल) में मिलते हैं। प्रत्येक पेड़ से पांच सौ से हज़ार फल की प्राप्ति का अनुमान आसानी से किया जा सकता है। फलों का चालान अधिकतर पुआल (Rice straw) या घास के साथ एक फुट व्यास की क़रीब डेढ़ फुट ऊँची टोकरियों में किया जाता है। यदि अधिक माल भेजना हो तो उपरोक्त युक्ति ठीक है वरना इस फल की चोरी बहुत होती है इसलिए प्लाई वुड या देवदारू के बक्स में पुआल के साथ हो सके तो प्रत्येक फल को काग़ज़ में लपेट कर रखना चाहिए। चिकने काग़ज़ में लपेटा हुआ फल नहीं लपेटे हुए फल की अपेक्षा अधिक दिनों तक अच्छा बना रहता है।

उपयोग और गुण—सन्तरे चूस कर खाये जाते हैं और माल्टा का रस निकाल कर पिया जाता है। छिलकों से खुशबूदार

सत प्राप्त कर उसका मार्मलेड (एक प्रकार का मुरब्बा) बना सकते हैं। संतरा मीठा, ठंढा, पाचक और साफ़ पेशाब लानेवाला होता है। स्कर्वी आदि व्याधि का नाश करता है। सफ़र में सेवन करने से तबियत अच्छी रहती है। व्याधि से उठे हुए लोगो के लिए माल्टा का उपयोग बहुत अच्छा होता है।

सपाटू, चीकू Sapatoo—*Achros sapota*

सपाटू को बम्बई की तरफ चीकू कहते हैं। इसके पेड़ क़रीब पचीस फीट ऊंचे होते है। फल भूरे रंग का खुरखुरा एक इञ्च से डेढ़ इञ्च लम्बा और एक इञ्च व्यास का होता है। एक जाति ऐसी भी है जिसका फल छोटे बेल इतना बड़ा होता है। पके हुए फल के अन्दर का गूदा भी भूरे रंग का होता है। प्रत्येक फल में तीन चार काले काले चमकीले बीज होते हैं। कच्चे फलों में चिकना दूध होता है। पौधे भेट क़लम से या दाब क़लम से तैयार किये जाते हैं। कलम सपाटू, महुआ या खिरनी के पेड़ के साथ भाद्रपद (अगस्त) में बांध देनी चाहिए।

ज़मीन और खाद—दुमट और बलुआ दुमट जमीन इसके लिए अच्छी होती है वैसे जिस जमीन में अधिक पानी नहीं लगे उसमें ये हो जाते हैं। गढ़े बीस पचीस फीट की दूरी पर आम के गढ़ों की भांति तैयार करने चाहिएं।

पौधा लगाना—पौधा बरसात या जाड़े में लगाया जा सकता है।

सिंचाई और काटछाँट—छोटे पौधों की सिंचाई ठीक से करनी चाहिए, बड़ों की नहीं करने से भी काम चल जाता है। काटछांट साधारण सूखी टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—पौधे लगाने के समय से पेड़ पांच छ साल की आयु के होने पर फलते हैं और लगभग पचीस साल की आयु तक फल देते रहते हैं। प्रति वर्ष चैत्र वैशाख (मार्च-एप्रिल) और श्रावण-भाद्रपद (जुलाई-अगस्त) में फल मिलते हैं, कहीं कहीं और भी अधिक समय तक फल आते रहते हैं। एक पेड़ से एक हजार फल के करीब प्राप्त हो जाते हैं। फलों का चालान घास-पात में रख कर किया जा सकता है। जब फल के छिलकों पर से भूरा पदार्थ गिरने लगे तब उन्हें तोड़ना चाहिए। ऐसे फल घास में रख देने से दो तीन दिन मे पक जाते हैं। पके फल एक दिन से अधिक नहीं टिक सकते।

उपयोग और गुण—फल बड़े मीठे होते हैं। छिलका निकाल कर खाये जाते हैं। इसकी लकड़ी भी मज़बूत मानी गयी है। फल पित्तनाशक तथा बुखार को मिटाने वाले होते हैं।

सिंघाड़ा Water-nut—*Trapa bispinosa*

बरसात के प्रारम्भ में इसके फल पोखरे या तालाब की मिट्टी मे पांव से दबाकर गाड़ दिये जाते हैं। कुछ दिनों बाद पौधे निकल आते हैं जिनके पत्ते पानी की सतह पर तैरते रहते हैं। सिंघाड़े में आश्विन में फूल आकर कार्तिक में फल आ जाते हैं। मार्गशीर्ष तक सब फल चुन लिए जाते हैं। एक लकड़ी के दोनों ओर

पर दो उलटे घड़े बांध कर बीच लकड़ी पर चुनने वाला बैठ जाता है और एक हंडिया अपने साथ लेकर पानी में अपने घड़ों का घोड़ा चलाता हुआ फल चुनता रहता है। कभी कभी छोटी नोका भी इसके लिए काम में लायी जाती है।

उपयोग और गुण—हरे फल कच्चे या उबाल कर खाये जाते हैं। सूखे हुए सिघाड़े का आटा फलाहार के लिए काम में लाया जाता है। सिंघाड़ा शीतल, भारी, वीर्य बर्धक, कफ कारक, पित्त और रुधिर विकार को मिटाने वाला होता है।

सेव Apple—*Pyrus malus*

इसकी खेती ठंढे स्थानो में ही हो सकती है। भारतवर्ष में काश्मीर, पञ्जाब तथा सयुक्त प्रांत के पहाड़ी भागों में होती है। दो एक जातियां ऐसी हैं जो कही कही मैदानों में फल दे देती हैं। पौधे बीही, नासपाती या इसी के बीजू पौधे पर चैत्र-वैसाख (मार्च अप्रैल) में चश्मा (रिंग ग्राफ्टिंग) चढ़ा कर तैयार किये जाते हैं। पौधो का चालान बक्सो में होना चाहिए। सेव के पौधे पर सेव की क़लम चढ़ाने से पेड़ बहुत ऊँचे हो जाते हैं इसलिए बहुधा बीही पर चढ़ाते हैं ताकि पेड़ छोटे हों।

ज़मीन और खाद:—दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। गढ़े पन्द्रह पन्द्रह फ़ीट की दूरी पर तीन फ़ीट गहरे और तीन चार फ़ीट व्यास के तैयार किये जाते हैं। प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में पत्ते और गोबर का सड़ा हुआ खाद करीब एक मन और दो ढाई सेर हड्डी का चूर्ण मिला देना

चाहिए। जो पौधे बीही पर तैयार नहीं किए गए हों उनके गढ़ों में बीस फीट का अन्तर ठीक होगा। फल आने लगे उस वक्त से प्रतिवर्ष पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में खाद देना चाहिए। कृत्रिम खाद देना हो तो बीस-पचीस सेर नत्रजन तीस पैंतीस सेर स्फुर और क़रीब पचास सेर पोटाश प्रति एकड़ पहुँचे इतना खाद देना चाहिए।

पौधे लगाना :-इसके पौधे कार्तिक (अक्टूबर) से माघ (जनवरी) तक लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट :-अवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए। फूल और फल आने लगे तब से विशेष पानी की आवश्यकता होती है। फलों का स्वाद अच्छा बना रहे इसलिए फल पकने लगे तब पानी कम देना चाहिए। काट छाँट सूखी, घनी तथा अधिक लम्बी टहनियों की पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में होनी चाहिए और जड़ें भी इसी वक्त खोलनी चाहिएं। टहनियों पर यदि फल आवश्यकता से अधिक हो तो कुछ फलों को जब वे आंवले के इतने बड़े हो जांय उसी वक्त तोड़ देना चाहिए ताकि बचे हुए फलों का आकार अच्छा हो।

फ़सल की तैयारी और चालान :-पौधे लगाने के समय से छः सात साल में पेड़ फल देने योग्य हो जाते हैं और प्रति वर्ष गर्मी के अन्त से जाड़े के प्रारम्भ तक फल मिलते रहते हैं।

फलों का चालान पतले प्लाइ-वुड के बक्सों में होना चाहिए। प्रत्येक फल को रंगीन या सादे चिकने काग़ज़ में लपेट कर बक्सों

में रखना ठीक होता है। सेव में भूरे २ दाग़ लग जाते हैं और उसी स्थान से वे विगड़ने लग जाते हैं इसलिए प्रत्येक फल को कागज़ में लपेटना बहुत ज़रूरी है। बक्स में पहले काग़ज़ बिछा कर उसपर एक तह फलों का होना चाहिए और फलों के बीच की खाली जगह लकड़ी के पतले पतले छीलन से भर देनी चाहिए जिसमें फल रगड़ खाकर विगड़ने न पावें। इस तह के ऊपर एक दूसरा कागज़ रख कर फिर दूसरा तह रखना चाहिए। एक बक्स मे तीन तह से अधिक नही होने चाहिएं।

उपयोग और गुण :–सेव वैसे ही छील कर खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनाया जाता है। सेव पाचक, रुचिकारक, बल-बर्धक और खून को बढ़ाने वाले होते हैं।

सूखेफल

अखरोट Walnuts—*Juglens regia*

इसकी खेती अफ़गानिस्तान और फ़ारस में बहुत होती है। भारतवर्ष में सीमा प्रान्त, काश्मीर और संयुक्त प्रान्त में हिमालय पर्वत पर कहीं कहीं होती है। मैदानों में इसकी खेती नहीं हो सकती।

ज़मीन और खाद :—बलुआ-दुमट जमीन इसके लिए अच्छी मानी गयी है। गढ़े पचीस पचीस फीट के अन्तर पर तीन चार फ़ीट व्यास के तीन फोट गहरे बनाकर उनकी मिट्टी में एक मन के लगभग हड्डी मिश्रित गोबर और पत्तों का खाद दे देना चाहिए। पौधे बीज से आसानी से तैयार हो जाते हैं।

बीज पहले बालू में लगाकर उन्हें ठण्डे स्थान में रख देना चाहिए। जब वे निकल आयें (पांच छः महीने में निकलते हैं) तब एक एक फुट की दूरी पर नर्सरी में लगाकर हर दूसरे साल स्थानान्तरित करके चार पांच साल की आयु के होने पर गढ़ों मे लगाने चाहिएं।

पौधे लगाना :—बरसात या जाड़े मे लगा सकते हैं।

सिंचाई और काटछांट :—साधारण सिंचाई और पत्ते झड़ने लगें तब घनी और सूखी टहलियों की काटछांट की जाती है।

फ़सल की तैयारी और चालान:—इसके फल श्रावण से आश्विन तक मिलते रहते हैं। ज्यों ज्यों फल गिरते जाते हैं सुखा कर रख लिए जाते हैं। फलों का चालान बोरों में किया जाता है। अख़रोट का गूदा या मींगी बक्सों में भेजना चाहिए।

उपयोग और गुण:—हरे फलों का अचार बनाया जाता है, सूखे फल की मींगी जाड़े के दिनों में खायी जाती है। खली पशुओं को खिलायी जाती है। पहाड़ी लोग तेल को खाने और जलाने के काम में लाते हैं। इसकी मींगीं में पचास शतांश तेल रहता है। अख़रोट वीर्य-वर्धक, भारी, गरम और कफ़ कारक होते हैं।

अञ्जीर Figs—*Ficus carica*

इसकी काश्त अफ़्रीका के उत्तर में, युरोप के दक्षिण और एशिया के पश्चिमीय देशों में बहुत होती है। वहीं से हज़ारों रुपये के सूखे अञ्जीर भारतवर्ष में आते हैं। हिन्दुस्तान में सीमा-प्रान्त, पञ्जाब, सिंध, बलोचिस्तान, संयुक्त प्रान्त, दक्षिण बम्बई, बेंगलोर आदि स्थानों मे भी अञ्जीर हो जाते हैं। सूखे वातावरण में इसकी खेती अच्छी होती है। फलों के पकने के समय यदि बरसात आजाय तो फल बिगड़ जाते हैं। पौधे डाली लगा कर या दाब क़लम से तैयार किए जाते हैं। क़लमों का चालान छोटे बक्सों में कोयले के चूर्ण में किया जा सकता है। क़लमें नर्सरी में लगाकर पौधे तैयार करने चाहिए।

ज़मीन और खाद:—बलुआ-दुमट ज़मीन जिसमे चूने की

मात्रा अच्छी हो और पानी नहीं लगता हो, उसमें अञ्जीर अच्छे होते हैं। गर्मी में पन्द्रह पन्द्रह फ़ीट की दूरी पर गढ़े बनवाने चाहिएँ जो दो ढाई फीट गहरे और उतने ही व्यास के हों। प्रत्येक गढ़े की मिट्टी में हड्डी मिश्रित गोबर और पत्ते का खाद आधे मन के लगभग देना चाहिए। फल आने लगे उस समय से प्रति वर्ष माघ (जनवरी) महीने में भी कुछ खाद देना जरूरी है। यदि इस वक्त न दिया जाय तो बरसात में दे देना चाहिए।

पौधा लगाना :—दो साल की आयु के पौधे बरसात में या जाड़े के अन्त में लगाने चाहिएँ।

सिंचाई और काटछांट:—सिचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। छोटे पौधों की काटछांट ऐसी होनी चाहिए कि जिसमें डेढ़ दो फीट का धड़ और उतनी ही लम्बी शाखाएं हों। उप-शाखाएँ इतनी ऊँची हों कि पूरा पेड़ छः सात फीट ऊँचा हो जाय।

फ़सल की तैयारी और चालान :—रोपने के समय से दो तीन साल बाद फल मिलना प्रारम्भ होते हैं और प्रति वर्ष चैत से ज्येष्ठ तक मिलते रहते हैं। कहीं कहीं हलकी-सी बहार बरसात में भी आ जाती है पर फल खट्टे होते हैं। फलों का चालान छोटी टोकरियों में किया जा सकता है।

अञ्जीर सुखाना—सीमाप्रान्त की राह से अथवा बाहर से जो अञ्जीर आते है वे सूखे हुए होते है। भारतवर्ष में सुखाने में अच्छी सफलता नहीं हुई है। ज्यों ज्यों फल पकते जाते हैं चटा-इयों पर सुखा कर दबा दिये जाते हैं जिसमे वे चपटे होकर एक

रस्सी में पिरोए जा सकें। सूखने पर फलों का वज़न एक चतुर्थांश रह जाता है। ऐसे सुखाए हुए फल तीन शतांश नमक के उबलते हुए पानी में धोये जाते हैं। ऐसा करने से वे जन्तु रहित हो जाते हैं और उनकी ठहरने की शक्ति बढ़ जाती है।

उपयोग और गुण:—ताज़े फल वैसे ही खाये जाते हैं। सूखे फलों का सेवन दूध के साथ जाड़े में किया जाता है। अञ्जीर का शरबत बच्चों के लिए विशेष गुणकारी होता है। अञ्जीर हलके दस्तावार होते हैं इनसे खांसी की शिकायत मिट जाती है और स्वास्थ्य भी अच्छा हो जाता है।

काजू Cashew-nut—*Anacardium occidentale*

यह एक ऐसा फल है जिसकी खेती की ओर लोगों का बहुत कम ध्यान गया है। इसमें क़रीब क़रीब बादाम के से गुण हैं और चूंकि यह भारतवर्ष में हो जाता है इसकी खेती की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

इसकी जन्म-भूमि दक्षिण अमेरिका मानी गयी है और वहीं से इसका आगमन भारतवर्ष में पोर्चुगल निवासियों द्वारा हुआ है ऐसा अनुमान है। इसकी खेती दक्षिण भारत मे गोआ, मलाबार, कोचीन, बम्बई तथा मद्रास प्रान्त के कुछ हिस्सों मे होती है। कहीं कहीं बंगाल और उड़ीसा मे भी इसके पेड़ जंगलों मे पाये जाते हैं। ब्रह्म प्रदेश, लङ्का तथा एफ्रिका मे भी इसकी खेती होने लगी है।

इसके पेड़ तीस चालीस फीट ऊँचे, चिकने पत्ते वाले होते हैं।

जो काजू बाजार में बिकती है वह फल के अन्दर की भूंजी हुई मींगी होती है। फलों की डंडी फूली हुई होती है। यह स्वाद में खट्टी होती है।

काजू के पेड़ बलुआ कंकरीली जमीन में जहाँ के पानी में खारापन हो और जहाँ समुद्र की हवा लगती हो वहाँ अच्छे हो जाते हैं। इसके पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं और बरसात में पौधे लगा दिये जाते हैं।

पौधे लगाने के समय से तीसरे चौथे साल में पेड़ फल देना प्रारम्भ कर देते हैं। प्रतिवर्ष जाड़े के अन्त में फूल आते हैं और बरसात के पहले फल तैयार हो जाते हैं।

जो फल गिर जाते हैं और जिन्हें लोग चुनकर बाजार में ले आते हैं वे फल तो समूचे होते हैं अन्यथा उनका तेल निकालने के बाद निकटवर्ती बाजार में भेजे जाते हैं। भूंजी हुई छिलका रहित काजू की मींगी का चालान दूर दूर तक होता है।

उपयोग और गुण:—भूंजी हुई मींगी खायी जाती है। डंठल का आचार बनाया जाता है। एफ्रिका में इससे शराब भी बनाते हैं। पेड़ से एक प्रकार का गोंद निकलता है जो जिल्दसाजी के लिए अच्छा माना गया है क्योंकि इससे पुस्तकों को कीट हानि नहीं पहुँचाते। छिलके के तेल में लकड़ी को दीमक से बचाने का भी गुण है। काजू के तेल में बादाम के तेल के समान गुण है।

खुबानी, ज़रदालू Apricot—*Prunus armeniaca*

इसकी खेती सीमा प्रान्त और पञ्जाब तथा संयुक्तप्रान्त के ठण्डे स्थानो में होती है। पेड़ आड़ू के पेड़ जैसा होता है। पौधा आड़ू या आलू बुखारे के पौधे पर चश्मा चढ़ा कर (Ring grafting) तैयार किया जाता है। यह क्रिया चैत्र-वैशाख में होनी चाहिए।

ज़मीन और खाद:—वलुआ और मटियार को छोड़कर खुबानी के पेड़ सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। गढ़े सेव के लिए जिस तरह तैयार किए जाते हैं इसके लिए भी उसी तरह से तैयार करने चाहिएं। बड़े पेड़ों की जड़ों को जाड़े में खोलकर खाद दे देना ठीक होगा।

पौधा लगाना—शरद ऋतु में पौधे लगाये जाते हैं।

सिंचाई और काटछांट:—सिंचाई गर्मी में होनी चाहिए। काटछांट पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में आड़ू की भांति की जाती है।

फ़सल को तैयारी और चालान—आठ दस साल की आयु के होने पर पेड़ फल देना प्रारम्भ करते हैं और प्रति वर्ष जेष्ठ से भाद्रपद तक फल पकते रहते हैं। फल ज्यो ज्यो पकते जाते हैं तोड़ कर मकानों की छतो पर सुखाये जाते हैं। ताज़े फलो का चालान छोटे वक्सों में या टोकरियो मे किया जाता है। इसका व्यवसाय सूखे फलों का विशेष होता है। जाड़े के

दिनों में इसके फलों का सेवन किया जाता है। फलों का चालान बोरों में किया जा सकता है।

उपयोग और गुण:—फल का ऊपरी सूखा हुआ भाग मीठा होता है, वही खाया जाता है। इस भाग के नीचे छोटी बादाम जैसी गुठली होती है जिसके अन्दर की मींगी का स्वाद ठीक बादाम के स्वाद जैसा होता है। ताजे फल भी खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनता है। खुबानी के फल बल वर्द्धक और दस्तावर होते हैं।

चिलग़ोज़ा Chilgoza—*Pinus geradiana*

इसकी खेती भारतवर्ष में नहीं होती। अफ़ग़ानिस्तान की तरफ़ होती है। फल अक्टूबर में पकते हैं। यदि फल भूँज दिये जांय तो छिलका जल्दी छूट जाता है और स्वाद भी अच्छा हो जाता है। इसमें भी तेल बहुत होता है। चिलग़ोज़े बड़े ताक़तवर होते हैं।

चिरौंजी Chiraunji—*Buchanania latifolia*

चिरौंजी के पेड़ पचीस तीस फीट ऊँचे होते हैं। कारो-मंडल, मलाबार, मैसूर और विंध्याचल पर्वत पर जङ्गलों में इसके पेड़ पाये जाते हैं। फलों का छिलका काफ़ी कठोर होता है। मींगी तूवर के बीज जैसी होती है। भील या जङ्गल मे बसनेवाले लोग जङ्गलों से लाकर अनाज, कपड़ा, निमक वग़ैरह के बदले में दे जाते हैं।

उपयोग और गुण——मींगो वैसे ही खायी जाती है। इसे मिठाईयों मे भी डालते हैं। दूध में डालकर भी खायी जाती है। मींगी दस्तावर होती है। जब शरीर पर बहुत जलन होती है तो इसका लेप लगाने से बड़ा फायदा होता है। दूध के साथ सेवन करने से बलवृद्धि होती है।

नारियल Cocoanut—*Cocos nucifera*

इसकी खेती बंगाल, मद्रास, मलावर और कोनकन में बहुतायत से होती है। पौधे फलों से तैयार किये जाते हैं। पूर्ण बाढ़ पाये हुए नारियल जो कोंपल फेंक देते हैं वे ही लगाये जाते हैं। यदि कोंपल फेंके हुए न हों तो अच्छे दूध से भरे हुए नारियल पानी में डाल दिये जाते हैं तो वे कोंपल फेंक देते हैं। कोंपल फेंके हुए नारियल को पहले नर्सरी में लगाते हैं और एक साल बाद निर्धारित स्थान पर लगा देते हैं।

ज़मीन और खाद—नारियल तरीदार वातावरण और दुमट या बलुआ-दुमट ज़मीन में अच्छे होते हैं। गढ़े बीस बीस फीट के अन्तर पर तीन फ़ीट गहरे और उतने ही व्यास के बनवा कर उनकी मिट्टी में एक सेर हड्डी का चूर्ण, आधा मन राख और एक मन गोबर का खाद मिलवा देना चाहिए। जब फल आने लगे उस वक्त से प्रति वर्ष बरसात में आठ दस सेर नारियल की खली अथवा चार पांच सेर एरंडी की खली के साथ एक सेर हड्डी का चूर्ण या मछली का खाद और कुछ राख दी जाया करे तो अच्छे फल प्राप्त होते हैं।

पौधे लगाना--नारियल के पौधे बरसात के प्रारम्भ में लगा देने चाहिएं।

सिंचाई और काटछांट:--काटछांट तो कुछ नहीं करनी पड़ती परन्तु जहां आवश्यकता हो वहां पानी पूरा देना पड़ता है।

फ़सल की तैयारी और चालान--नारियल के पेड़ लगाने के समय से पांच छ साल की आयु के होने पर फूल देते हैं और नौ दस महीने बाद फल देते हैं। कहीं कहीं इससे भी अधिक समय लगता है। नारियल पचहत्तर अस्सी वर्ष की आयु तक अच्छे फल देते रहते हैं। बाद में फल कुछ कम हो जाते हैं। इनकी आयु सवा सौ से डेढ़ सौ वर्ष की मानी गयी है। एक एक पेड़ से पचहत्तर अस्सी फल से लेकर सौ सवा सौ फल प्रति वर्ष मिल जाते हैं। फलों का चालान बोरों में किया जाता है।

उपयोग और गुण--हरे नारियल का रस पीया जाता है, जो मीठा और ठण्डा होता है। जब दूध सूख जाता है तो गूदा कुछ कठोर हो जाता है जिसे गरी या खोपरा कहते हैं। इसे वैसे ही खाते हैं या इससे चटनी, मिठाई वग़ैरह बनाकर काम में लाते हैं। गरी से तेल निकाला जाता है जो खाने जलाने तथा साबुन बनाने के काम में लाया जाता है। छिलकों से हुक्का और चूड़ियां बनायी जाती है। फलों के ऊपर के सन से रस्सियां बनाते हैं। पूजन तथा अन्य शुभ कार्यों में नारियल का उपयोग बहुत होता है। नारियल का गूदा बल वर्धक, भारी, पित्त-नाशक और दाह को मिटाने वाला होता है।

पिश्ता Pistachio Nut—*Pistacia vera* *

इसकी खेती अफ़ग़ानिस्तान, फारस, मेसोपोटामिया और सीरिया की तरफ अधिक होती है। भारतवर्ष में अफ़ग़ानिस्तान की तरफ से जाड़े में बहुत पिश्ते आते हैं। फ़ारस में इसके जंगल के जंगल होते हैं। सीमाप्रान्त और बलुचिस्तान मे भी कही २ जंगलों में इसके पेड़ पाये जाते हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि इसकी खेती भारतवर्ष में पहाड़ों पर हो सकती है। पिश्ते के फल दो प्रकार के होते हैं, एक जल्दी फूट जाने वाले और दूसरे कठिनाई से टूटने वाले। बाज़ार में जो पिश्ता मिलता है कठोर छिलके के अन्दर की मींगी होती है। यह बादाम से अधिक मँहगी बिकती हैं। पिश्ते ऐसे ही खाये जा सकते हैं परन्तु विशेषतः इनका उपयोग मिठाइयों के लिए किया जाता है। पिश्ते में क़रीब ६० शतांश तक तेल रहता है।

पिश्ते रक्त को शुद्ध करने वाले, बल वर्धक और कफ नाशक होते हैं।

बादाम Almonds—*Amygdalus communis*

इसकी भी खेती अफ़ग़ानिस्तान की तरफ ही होती है। भारत-वर्ष मे मैदानों में पेड़ तो हो जाते हैं परन्तु फलते नहीं। पहाड़ों

---

* Agriculture and Livestock in India Vol. VIII Part I, 1938, पृष्ठ ५९-६१ मे इसकी खेती करने की विस्तृत युक्ति बतायी गयी है। यदि भारतवर्ष में इसकी सफलता हुई तो इस पुस्तक के आगामी संस्करण मे विशेष वर्णन दिया जायगा।

पर कुछ अंश तक फल जाते हैं। पौधे बीज से या आड़ू के पौधे पर चश्मा चढ़ाकर तैयार किये जाते हैं। खेती की रीति आड़ू की खेती के समान है लेकिन काटछांट आड़ू की अपेक्षा अधिक करनी पड़ती है।

बादाम गरम, वीर्यवर्द्धक, बलदायक और पित्तनाशक है। आंखों की रोशनी के लिए जाड़े में इसका सेवन लाभप्रद होता है।

चटनी मुरब्बा आदि के लिए काम में लाये जाने वाले फल

अलूचा Plum—*Prunus domestica*

आलू बुखारा Plum—*Prunus Bokharensis*

इसकी भी खेती अफ़ग़ानिस्तान की तरफ़ अच्छी होती है। उधर ही से सूखे फलों की आमद भारतवर्ष में होती है। भारतवर्ष में भी यह सब जगह हो जाता है और पेड़ आड़ू के पेड़ से कुछ छोटे होते हैं। पौधे बीज, क़लम या चश्मा (रिंगग्राफ्टिंग) चढ़ाकर तैयार किये जाते हैं। बीज बरसात में बो देने चाहिएं। ये चार पांच महीने में अंकुर फेंकते हैं। क़लम जाड़े में और चश्मा चैत्र-बैशाख में चढ़ाना चाहिए। चश्मा इसी के पेड़ पर या आड़ू के पेड़ पर चढ़ाया जाता है।

ज़मीन और खाद:—बलुआ-दुमट या दुमट ज़मीन में ये हो जाते हैं। गढ़े आड़ू के लिए जिस रीति से तैयार किए जाते हैं उसी रीति से इसके लिए भी करने चाहिएं। इसके पेड़ आड़ू के

पेड़ की अपेक्षा कुछ छोटे होते हैं इसलिए गढ़ों में पन्द्रह पन्द्रह फीट का अन्तर ठीक होगा। प्रति वर्ष जब पत्ते झड़ने लगें उस समय जड़ें खोल कर खाद दे देना चाहिए।

पौधे लगाना :—बरसात में या जाड़े के अन्त में पौधे खेतों में लगाने चाहिएं। बागीचे की सड़कों के किनारों पर लगा दिये जांय तो भी उत्तम होगा।

सिंचाई और काटछांट :—सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। फल बैठने लगें उस समय से जब तक पक न जायँ खूब पानी देना चाहिए। काट छांट पौष-माघ में जब पत्ते झड़ने लगें तब करनी चाहिए। उस समय नयी टहनियों का तीन चतुर्थांश भाग काट देना चाहिए क्योंकि फल नयी टहनियों पर नहीं पुरानी टहनियों पर ही आते हैं।

फ़सल की तैयारी और चालान :—चार पांच साल की आयु के होने पर पेड़ फल देते हैं और प्रति वर्ष वैशाख ज्येष्ठ में फल मिलते हैं। ताज़े फलों का चालान छोटी छोटी टोकरियों में और सूखे का बोरों में किया जाता है।

उपयोग और गुण :—ताज़े फल वैसे भी खाये जा सकते हैं परन्तु विशेषतः इनका उपयोग चटनी, मुरब्बा इत्यादि बनाने के लिए किया जाता है। आलू बुखारा के फल ठण्डे, पाचक, हलके दस्तावर और पित्त-नाशक होते हैं।

आंवला Anvala—*Phyllanthus emblica*

आंवले दो प्रकार के होते हैं, एक छोटे और दूसरे बड़े। बड़े

आंवले सुन्दरबन की तरफ़ बहुत होते हैं। छोटे सभी जगह जंगलों में पाये जाते हैं। कहीं कहीं बाग़ीचों में बड़े आंवले भी मिलते हैं। पौधे बीज से या भेंट क़लम से तैयार किये जाते हैं। गर्मी के आरम्भ में ताज़े बीज ही बोकर पानी देते रहना चाहिए।

ज़मीन और खाद:—इसके भी खेत के खेत नहीं लगाये जाते। एक दो पेड़ बड़े आंवले के साधारण पेड़ लगाने की रीति से लगा सकते हैं।

पौधा लगाना :—दो तीन साल का तैयार पौधा बरसात में लगाना चाहिए।

सिंचाई और काटछांट :—पहिले कुछ साल तक सिचाई करनी पड़ती है। काटछांट सूखी टहनियों की होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान :—इसके पेड़ की बाढ़ बहुत जल्दी होती है। चार पांच साल की आयु के होने पर पेड़ फलने लग जाते हैं। प्रति वर्ष मार्गशीर्ष से माघ-फाल्गुन (नवम्बर से जनवरी फरवरी) तक फल मिलते रहते हैं। फलों का चालान बहुधा बोरों में किया जाता है परन्तु टोकरियों मे भेजना उत्तम होगा। काफ़ी बाढ़ पाए हुए पेड़ से छः मन के लगभग फलों की पैदावार हो जाती है।

उपयोग और गुण :—आंवले से चटनी, अचार और मुरब्बा बनाया जाता है। इनका उपयोग कई प्रकार की औषधि के लिए भी किया जाता है। गर्मी में इनके मुरब्बे का सेवन बड़ा लाभप्रद होता है। आँवले बलवर्द्धक, ठण्डे, पित्तनाशक, दस्तावर,

अधिक पेशाब लाने वाले और वायु जनित रोगों को शान्त करने वाले होते हैं।

इमली Tamarind—*Tamarindus indica.*

इसके पेड़ चालीस पचास फ़ीट से लेकर सत्तर अस्सी फ़ीट ऊँचे होते है। पेड़ बीज से तैयार किये जाते हैं। यदि कोई अच्छी मीठी इमली हो तो उसका पौधा गूटी से तैयार किया जा सकता है। इसके भी खेत के खेत नहीं लगाये जाते। आवश्यकता होने से बाग़ीचे के किनारे पर एक दो पेड़ लगा दिए जा सकते हैं। इसकी विशेष देख भाल नहीं करनी पड़ती। लगाने के समय से दस बारह साल में इमली का पेड़ फलता है। प्रति वर्ष फ़रवरी मार्च में फल मिलते हैं। एक पेड़ से पाँच छः मन इमली मिल जाती है। फलो का चालान वोरों में किया जाता है।

उपयोग और गुण:—इमली का उपयोग मद्रास में बहुत होता है। प्रायः प्रति दिन काम में लायी जाती है। इमली से तरकारियाँ और दाल स्वादिष्ट की जाती हैं। इसकी खट-मीठी चटनी भी बनायी जाती है। कहीं कही शरबत बना कर भी पीते हैं। इसके फल बीज रहित करके नमक मिला कर रख देने से कई महीने तक रह जाते हैं।

इमली रूखी, पाचक, अग्निदीपक, कृमिनाशक और दस्तावर होती है।

करौंदा Karaunda—*Carrissa carandas*

इसके कहीं कही जंगल के जंगल पाये जाते हैं। करौंदे दो

प्रकार के होते हैं ; एक बड़े और दूसरे छोटे। बड़े करौंदे कहीं कहीं बाग़ीचों में पाये जाते हैं, छोटे जंगलों में बहुत होते हैं। बड़े की अपेक्षा छोटे के फल अधिक मीठे होते हैं। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं और बीज आषाढ़-श्रावण में लगाये जाते हैं।

ज़मीन और खाद—करौंदे सब प्रकार की मिट्टी में हो जाते हैं। इनके भी खेत के खेत नहीं लगाये जाते। इच्छा होने से एक दो पेड़ लगाये जा सकते हैं सो पौधे लगाने की साधारण रीति से लगा देने चाहिएँ।

पौधे लगाना—बीज बरसात में बोये जाते हैं सो बीज बोकर या पौधे मिलने से पौधे लगा देने चाहिएँ।

सिंचाई और काटछांट—पहले दो साल गर्मी के दिनों में कुछ पानी देना चाहिए। बाद में नहीं देने से भी कुछ हानि नहीं है। काटछांट पेड़ को अधिक नहीं फैलने देने के लिए होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी और चालान—लगाने के समय से तीन चार साल बाद फल लगना शुरू होते हैं और प्रति वर्ष वैशाख से आषाढ़ तक फल मिलते हैं। चालान निकटवर्ती बाजार में टोकरियों में किया जा सकता है।

उपयोग और गुण—पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं। कच्चे का अचार, लूञ्जी (मीठी तरकारी) वग़ैरह बनायी जाती हैं। कच्चे फल खट्टे, भारी और कफ कारक होते हैं। पके हुए फल मीठे, हलके और वातनाशक होते हैं।

कैथ, कबीट Wood-apple—*Feroina elephantum*

इसके पेड़ पचीस तीस फीट से लेकर चालीस फ़ीट ऊँचे होते हैं। फल बेल के फल जैसा होता है लेकिन छिलका बेल के छिलके से कुछ कठोर और सफ़ेद रंग का होता है। पौधा बीज से तैयार किया जाता है। कैथ सब प्रकार की ज़मीन में हो जाता है। प्रत्येक फल के बागीचे में एक दो पेड़ साधारण रीति से बरसात में लगा देने चाहिएं। आठ दस साल में पेड़ फल देने योग्य हो जाते हैं और आश्विन कार्तिक में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—पके फलों के गूदे की चटनी बनायी जाती है। कुछ लोग इन्हें वैसे ही खा जाते हैं। पेचिश और दस्त की शिकायत में बेल की भाँति कच्चे फल का सेवन लाभप्रद होता है। पके फल पाचक होते हैं।

वाम्पी Ampeech—*Cookia punetata*

इसका फल लीची के फल के आकार का होता है और स्वाद में खट्टा होता है। प्रत्येक फल मे तीन बीज होते हैं। इसके पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। बीज ताजे ही आषाढ़ श्रावण में लगा देने चाहिएं। साधारण सिंचाई करते रहने से चार पांच साल मे पेड़ फल देने योग्य हो जाते है और प्रतिवर्ष आषाढ़-श्रावण में फल मिलते रहते हैं।

उपयोग—फलो का अचार बनाया जाता है। इनसे तरकारियां खट्टी और स्वादिष्ट की जाती हैं।

परिशिष्ट नं० १

बनस्पति शास्त्रानुसार फलों के वृक्षों का वर्ग निर्माण

Ampelidæ	अंगूर।
Anacardiaceæ	आम, काजू, चिरौंजी, पिश्ता।
Anonaceæ	राम फल, शरीफा।
Apocynaceæ	करौंदा।
Bromeliaceæ	अनानास।
Cucurbitaceæ	ककड़ी, खरबूजा, तरबूज, दिलपसन्द, रैंता।
Ebenaceæ	तेन्दू।
Euphorbiaceæ	आंवला।
Geraniaceæ	कमरख।
Juglandaceæ	अखरोट।
Leguminosæ	इमली।
Lythraceæ	अनार।
Myrtaceæ	अमरूद, गुलाब जामुन, जामुन।
Onagraceæ	सिघाड़ा।
Palmæ	खजूर, नारियल।
Rhamnaceæ	बेर।

Rosaeceæ	आड़ू आलूबुखारा, ज़रदालू, नासपाती, बादाम, बीही ब्लेकबेरी, लोकाट, शफ़तालू, स्ट्राबेरी, सेव।
Rutaceæ	कैथ, खिरनी, चकोतरा, तुरंज, नीबू, बेल, वाम्पी, संतरा, सपाटू, सेव।
Scitaminæ	केला।
Solonaceæ	गूज़बेरी।
Sapindaceæ	लीची।
Tiliaceæ	फालसा।
Urticaceæ	अंजीर, कटहल, शहतूत।

परिशिष्ट

मुख्य मुख्य फलों को

नाम फल	पृष्ठ	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अन्तर
				फ़ुट
अंगूर	१२६	बरसात मे या जाड़े के प्रारम्भ में	डाली, दाब क़लम या गूटी	८×८
अञ्जीर	२०७	बरसात में	डाली या दाब क़लम	१५×१५
अमरूद	१३३	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज या भेंट क़लम	१८×१८
अनानास	१३५	भाद्रपद	सकर्स	२×२
अनार	१३७	बरसात में	बीज, डाली या दाब क़लम	१५×१५
आड़ू	१३६	बरसात में या जाड़े के अन्त मे	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	२०×२०
आम	१४१	बरसात में या जाड़े के अन्त में	भेंट कलम	बीजू ४०×४० कलमी ३५×३५
आलूबुखारा	२१६	बरसात में या जाड़े के अन्त में	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	१५×१५

नं० २

खेती का नक़्शा

फल प्राप्ति का समय	पौधा लगाने के समय से फलने का समय	व्यवसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	कैफ़ियत
	वर्ष	वर्ष	
गर्मी में	२—३	४०—५०	सीमा प्रान्त में भाद्रपद और आश्विन में फलता है
चैत्र से ज्येष्ठ	२—३	—	
श्रावण-भाद्रपद और पौष-माघ	बीजू ५—६ क़लमी ३—४	३०—३५ २०—२५	
श्रावण से आश्विन	१$\frac{1}{4}$	३—४	
श्रावण से कार्तिक	४—५	४८—५०	
वैशाख-ज्येष्ठ	३—४	७—८	सीमा प्रान्त में भाद्रपद से कार्तिक तक फल मिलते हैं
ज्येष्ठ से श्रावण-भाद्रपद	बीजू १०—१२ कलमी ५—६	बीजू १००-१२५ क़लमी ५०-६०	दक्षिण भारत में चैत्र-वैशाख में फल मिलते हैं
वैशाख-ज्येष्ठ	४—५	७—८	

नाम फल	पृष्ठ	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अन्तर
				फ़ुट
आंवला	२१७	बरसात में	बीज या भेट क़लम	(एक दो पेड़)
कटहल	१४७	बरसात मे	बीज	(एक दो पेड)
केला	१५२	बरसात में	सकर्स	१०X१०
खजूर	१५५	बरसात में	सकर्स	२०X२०
खिरनी	१६१	बरसात में	बीज	(एक दो पेड़)
खुबानी	२११	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५X१५
गुलाब जामुन	१६२	बरसात में	बीज या दाब क़लम	१५X१५
चकोतरा (ग्रेपफ्रूट)	१६३	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर	२०X२०
जामुन	१६४	बरसात में	बीज	(एक दो पेड)
नारियल	२१३	बरसात में	फल से	२०X२०
नासपाती	१७०	पौष-माघ	चश्मा (Ring grafting)	२०X२०

फल प्राप्ति का समय	पौधा लगाने के समय से फलने का समय	व्यवसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	कैफियत
	वर्ष	वर्ष	
मार्गशीर्ष से माघ फाल्गुन	४—५		
वैशाख-ज्येष्ठ से श्रावण-भाद्रपद	७—८		
क़रीब २ सालभर	१—२	५—६	एक पेड एक ही बार फलता है परन्तु पास में जो नये पौधे निकलते रहते हैं वे फल जाते हैं।
ज्येष्ठआषाढ़सेआश्विन	१५—२०	७०—८०	
ज्येष्ठ	१०—१२		कहीं कहीं फाल्गुन चैत्र में भी फल मिलते हैं।
ज्येष्ठ से भाद्रपद	८—१०		
ज्येष्ठ-आषाढ़	१४—१५		
भाद्रपद से कार्तिक	क़लमी ५—६		
आषाढ़	१०—१२		
जाड़े में	५—६	७५—८०	
आषाढ़-भाद्रपद	६—७		

नाम फल	पृष्ठ	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अन्तर
				फ़ुट
नीबू	१७२	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज या गूटी	१५×१५
पपीता	१७४	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज	१०×१०
बेर	१७६	बरसातमें या जाड़े के ारम्भ में	बीज या चश्मा (Ring grafting)	२०×२०
बेरी गूज	१८१	बरसात के अन्तमें	बीज से	२×३
बेरी स्ट्रा	१८३	जाडे के आर।भ में	जड़वाली लता (Runners)	१¼ से १½
बेल	१८५	बरसात मे	बीज	(एक दो पेड़)
रामफल	१८६	बरसात में	बीज	१५×१५
लीची	१८८	बरसात में	गूटी या दाबक़लम	२५×२५
लोक़ाट	१९१	जाड़े के अन्त में	बीज, गूटी या भेंट क़लम	२०×२०
शरीफ़ा	१९३	बरसात में	बीज	१५×१५
शहतूत	१९४	बरसात में	डाली से	(एक दो पेड़)
संतरा (माल्टा, मौसम्बी)	१९५	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर या बीज से	१८×१८
सपाटू (चीकू)	२०१	बरसात या जाड़ेमें	भेंट क़लम	२५×२५
सेव	२०३	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५×१५

फल प्राप्ति का समय	पौधा लगाने के समय से फलने का समय	व्यवसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	कैफ़ियत
	वर्ष	वर्ष	
श्रावण-भाद्रपद	बीजू ६—७	३०—४०	
पौष-माघ	क़लमी ३—४	१५—२०	
जाड़े के अन्त में	१—१½	३—४	
माघ से चैत्र	बीजू १०—१२ क़लमी ६—७		
पौष से फाल्गुन	३-४ महीने में	१	
चैत्र वैशाख (मैदान) माघ-फाल्गुन (पहाड)	(चार पाँच महीने में)	१	पहाड़ों पर पौधे आश्विन कार्तिक में लगाये जाते हैं
गर्मी में	७—८		
गर्मी में	७—८	१५—२०	
ज्येष्ठ-आषाढ़	५—६	३०—४०	
फाल्गुन-चैत्र	५—६		
श्रावण-भाद्रपद से कार्तिक अगहन	५—६	१५—२०	
चैत्र-वैशाख	३—४		
कार्तिक से पौष	बीजू १०—१२	४०—५०	
चैत्र-वैशाख	क़लमी ४—५	१५—२०	
चैत्र-वैशाख	५—६	२०—२५	
कार्तिक से माघ	६—७		

POCHA'S SEEDS SATISFY!
Vegetable
and
Flower Seeds,
Bulbs, Plants,
Implements, Etc.
Ask for a free illustrated Catalogue.
Pestonjee P. Pocha & Sons,
SEED MERCHANTS,
8, Napier Road, POONA.
C.L.Dawes.

लेखक की 'साग भाजी की खेती' पर कतिपय सम्मतियां।

"...is a comprehensive little treatise on market gardening. The contents are accurate and well expressed and will provide any one already engaged in gardening with a considerable amount of valuable and useful information. It would also provide a useful text-book on vegetable culture..." (Sd.) **R. G. Allan, Director of Agriculture, U. P.**

"...of considerable help not only to the profesional vegetable cultivator, but also to the amateur... as the contents are accurate and well put in as non-technical a form as possible...is likely to be of considerable value as a text-book on vegetable culture for school gardens and school farms..." **Agriculture and Livestock in India, Issued under the Authority of the Imperial Council of Agricultural Research, New Delhi.**

".. is a very scientific and lucid publication relating to common vegetable crops grown for domestic or commercial purposes.. The author has introduced in his work a clearness which should make the book very popular...Lack of suitable exhaustive books for vegetable growing has stood in the way of many who would try to make vegetable growing a profitable business...The book of Mr. Vyas will fill up this deficiency...We strongly recommend this book to all who have ever thought of vegetable culture..." **The Leader, Allahabad.**

"...Many an unemployed youth, with the help of this book can utilize their time and their small cultivated plots of land to better advantage..." **The Searchlight, Patna.**

Approved by the Education Departments of Delhi, United Provinces, Bihar ane Orissa and Central Provinces.

"...इस प्रकार की पुस्तकों का प्रचार और आदर हर शिक्षित घर में होना चाहिए। देहाती स्कूलों में जहाँ कि सागभाजी और फूल पत्ती इत्यादि लडकों को शिक्षा और स्वास्थ्य की उन्नति के लिए लगायी जाती है वहाँ इस पुस्तक से बहुत सहायता मिलेगी..." किसानोपकारक, लखनऊ।

"...आज़माईश और अनुभव करके इस पुस्तक की रचना की है इस लिए इसका महत्व और भी बढ गया है।...साग सब्ज़ियों के लिए एक भी आवश्यक बात इसमें छोड़ी नही गई है...।" किसान, पटना।

"..इतने अच्छे ढङ्ग से लिखी गयी है कि हमारी राय मे खेती बारी का अनुभव न रखने वाला भी उसकी सहायता से इस कार्य को आरम्भ कर सकता है। .. पुस्तक के लेखक कृषि-शास्त्र के पडित होने के अतिरिक्त कृषि कार्य का व्यहारिक अनुभव भी रखते है।.." आज, बनारस।

"..आजकल साग-भाजी की खेती अन्न की खेती की अपेक्षा अधिक लभादायक होती है और यदि उसे आधुनिक ढङ्ग से किया जाय तो और भी लाभदायक हो सकती है। इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक बड़े काम की है।...इस पुस्तक में जो विधिया बतलायी गयी हैं यदि उनके अनुसार कार्य किया जाय तो देश का बहुत कुछ उपकार हो सकता है। इससे जहाँ हमारी एक तरफ़ आर्थिक अवस्था सुधरेगी वहाँ दूसरी तरफ अनेक लोगों को जो आजकल बेकारी के कारण कष्ट पा रहे हैं जीवन निर्वाह का एक स्वतन्त्र मार्ग मिल जायगा।.." चाँद, इलाहाबाद।

"...ऐसी उपयोगी और महत्वपूर्ण पुस्तक तैयार कर दी है जो अमूल्य है..।" माधुरी, लखनऊ।

"..हिन्दी में ऐसे उपयोगी विषय पर कोई अच्छी किताब न थी। व्यासजी ने यह कमी पूरी कर दी...।" हंस, बनारस।

"...शैली इतनी सरल है कि साधारण पढ़ा लिखा उसे समझ सकता है।...स्कूलों में कृषि के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी हो गयी है..।" अर्जुन, देहली।